मार्च, 2023

I.S.S.N. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय
निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. रीटा वशिष्ट,
सचिव, विधायी विभाग

श्री के. बिस्वाल,
विशेष सचिव, विधायी विभाग,
(विभागाध्यक्ष) वि.सा.प्र.

डा. अनुराग दीप, एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. आर्येन्दु द्विवेदी,
प्राचार्य, मां वैष्णों देवी ला कालेज
फैजाबाद रोड, चिनहट, लखनऊ, उ.प्र.

श्री कुलदीप चौहान,
चेयरमैन, एस.आर.सी. ला कालेज
129, सेक्टर-1, मंगल पाण्डेय नगर,
मेरठ, उ.प्र.

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री दयाल चन्द ग्रोवर,
सेवानिवृत्त उप-संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री कमला कान्त,
प्रधान संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा,
संपादक

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह, जसवन्त सिंह, जाहन्वी शेखर शर्मा और अमर्त्य हेम विप्र पाण्डेय

ISSN 2457-0494

कीमत : **डाक-व्यय सहित**

एक प्रति : ₹ 195/-

वार्षिक : ₹ 2,100/-

© 2023 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

मार्च, 2023 अंक - 3

प्रधान संपादक
कमला कान्त

संपादक
अविनाश शुक्ला

[2023] 1 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से हमने आपके अवलोकनार्थ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **करन** उर्फ **फतिया** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** [2023] 1 उम. नि. प. 319 वाले मामले में तारीख 3 मार्च, 2023 को पारित निर्णय का हिंदी पाठ प्रस्तुत किया है । यह मामला किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 94 के अधीन किशोर की आयु के बाबत उपधारणा और उसके अवधारण से संबंधित है । इस मामले में अपीलार्थी-अभियुक्त को दंड संहिता के अंतर्गत विभिन्न अपराधों और बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (पॉक्सो अधिनियम) के अंतर्गत कारित अपराध के लिए दोषसिद्ध किए जाने और मृत्यु के दंडादेश सहित अन्य दंडादेशों से दंडादिष्ट किए जाने से संबंधित है । उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त की अपील खारिज किए जाने के पश्चात् उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । अपील के लंबन के दौरान अपीलार्थी-अभियुक्त ने यह दावा किया कि वह अपराध कारित किए जाते समय किशोर था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने विचारण न्यायालय को इस विषय में जांच करने और रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए निर्देशित किया और विचारण न्यायालय द्वारा प्रस्तुत जांच रिपोर्ट में उसे अपराध कारित किए जाने की तारीख पर किशोर पाया गया । प्रत्यर्थी राज्य ने विचारण न्यायालय द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट से असहमति व्यक्त करते हुए अपीलार्थी-अभियुक्त की आयु के अवधारण के लिए उसका अस्थि परीक्षण

कराए जाने के लिए निवेदन किया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने प्रत्यर्थी राज्य के निवेदन को नामंजूर करते हुए अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों, जिनमें किशोर की आयु के निर्धारण के प्रयोजनार्थ प्राथमिक विद्यालय, जो राजकीय विद्यालय है, द्वारा जारी किए गए जन्म-प्रमाणपत्र को आधार बनाया गया हो और विचारण न्यायालय के समक्ष उसे सम्यक् रूप से साबित किया गया हो, तो अभियुक्त का अस्थि परीक्षण कराया जाना उचित नहीं होगा और इसलिए अपराध कारित किए जाते समय अभियुक्त के किशोर होने के कारण उसको तीन वर्ष से अधिक के दंड के लिए दंडादिष्ट नहीं किया जा सकता । साथ ही माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों जिनमें विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को उसके विरुद्ध किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के उपबंधों के अधीन आरोप साबित होने पर दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है तथा पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर उसको अपराध कारित होने की तारीख पर किशोर पाया जाता है, तो ऐसी स्थिति में उसकी दोषसिद्धि को कायम रखा जा सकता है किंतु जहां तक दंडादेश के प्रश्न के अवधारण का प्रश्न है, मामले को किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजा जाना आवश्यक होगा, जो अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत उचित दंड का अवधारण करेगा, जो किसी भी दशा में तीन वर्ष से अधिक का नहीं होगा । साथ ही माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त द्वारा किशोर होने का अभिवाक् किसी भी न्यायालय के समक्ष किया जा सकता है, चाहे वह विचारण न्यायालय हो या अपील न्यायालय ।

इस अंक में योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

मार्च, 2023

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
करन **उर्फ** फतिया **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	319
नंद लाल और अन्य **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य	351
नीरज दत्ता **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)	399
रावसाहेब **उर्फ** रावसाहेबगौड़ा आदि **बनाम** कर्नाटक राज्य	375
शिवशंकर और एक अन्य **बनाम** एच. पी. वेदव्यास चार	423

संसद् के अधिनियम

योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 29

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (2016 का 2)

– धारा 9 – अभियुक्त द्वारा किशोर होने का अभिवाक् किया जाना – प्रक्रम – अभियुक्त द्वारा किशोर होने का अभिवाक् चाहे वह विचारण न्यायालय हो या अपील न्यायालय किसी के समक्ष भी किसी भी प्रक्रम पर यहां तक कि मामले का अंतिम रूप से विनिश्चय किए जाने के पश्चात् भी किया जा सकता है और ऐसे दावे का अवधारण अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किया जाएगा ।

करन उर्फ **फतिया** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 319

– धारा 9(3) और 25 – किशोर होने का अभिवाक् – अपीलार्थी-अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा दंड संहिता की धाराओं और पॉक्सो अधिनियम के अधीन दोषसिद्ध और मृत्यु दंडादेश सहित अन्य दंडादेश से दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – जहां विचारण न्यायालय द्वारा किसी अभियुक्त को उसके विरुद्ध आरोप साबित होने पर दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है तथा बाद के किसी प्रक्रम पर अभियुक्त को अपराध कारित करने की तारीख को किशोर होना पाया जाता है, तो ऐसी स्थिति में उसकी दोषसिद्धि को कायम रखा जा सकता है किंतु केवल दंडादेश के प्रश्न का अवधारण करने के लिए मामले को किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजा जाना आवश्यक है जो अधिनियम के उपबंधों के अनुसार उचित दंड का अवधारण करेगा जो किसी भी दशा में 3 वर्ष से अधिक का नहीं होगा ।

करन उर्फ **फतिया** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 319

पृष्ठ संख्या

– धारा 94 – आयु के विषय में उपधारणा और उसका अवधारण – अपीलार्थी-अभियुक्त को दंड संहिता के अधीन विभिन्न अपराधों और बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (पॉक्सो अधिनियम) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और मृत्यु दंडादेश सहित अन्य दंडादेशों से दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त की अपील खारिज किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – अपील लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से अपराध किए जाने के समय किशोर होने का दावा किया जाना – विचारण न्यायालय को जांच करने के पश्चात् रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश दिया जाना – जांच रिपोर्ट में उसे अपराध करने की तारीख को किशोर होना पाया जाना – प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से अपीलार्थी-अभियुक्त की आयु का अवधारण करने के लिए अस्थि परीक्षण कराए जाने का निवेदन किया जाना – निवेदन नामंजूर किया जाना – जहां किशोर होने के संबंध में अभियुक्त की आयु का अवधारण प्राथमिक विद्यालय और वह भी राजकीय विद्यालय के जन्म प्रमाणपत्र के आधार पर किया गया हो और विचारण न्यायालय के समक्ष उसे सम्यक् रूप से साबित किया गया हो, तो इस पर संदेह नहीं किया जा सकता अभियुक्त को अस्थि परीक्षण कराना उचित नहीं होगा, इसलिए अभियुक्त को किशोर होने के कारण तीन वर्ष से अधिक का दंडादेश नहीं दिया जा सकता और चूंकि उसने पहले ही 5 वर्ष का दंडादेश भुगत लिया है इसलिए दंडादेश के प्रश्न का अवधारण करने के लिए मामले को किशोर न्याय बोर्ड को प्रतिप्रेषित करना उचित नहीं होगा ।

करन उर्फ **फतिया** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 319

पृष्ठ संख्या

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302 – हत्या – अभियुक्तों और शिकायतकर्ता के परिवार के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी होना – दो भागों में घटित घटना के प्रथम भाग में शिकायतकर्ता और एक अभियुक्त (सं. 11) के बीच हुई कहा-सुनी में इस अभियुक्त को गंभीर क्षतियां पहुंचना और फिर अभियुक्त और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा अभिकथित रूप से शिकायतकर्ता के परिवार पर हमला किया जाना जिसमें उसके पिता की मृत्यु और अन्य को क्षतियां पहुंचना – निचले न्यायालयों द्वारा दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में यह पाए जाने पर कि घटना के प्रथम भाग में अभियुक्त को पहुंचीं गंभीर क्षतियों के संबंध में उसके द्वारा पुलिस को सूचित किए जाने के बावजूद अभियोजन पक्ष द्वारा घटना घटने की उत्पत्ति को छिपाया गया हो और उक्त अभियुक्त को गंभीर क्षतियां पहुंचने के पश्चात् उसके द्वारा दूसरी घटना में भाग लेना संभव प्रतीत न होने के कारण उसे संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा तथा शिकायतकर्ता पक्ष द्वारा दूसरी घटना के बारे में लगभग 4 घंटे के विलंब के पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने, न तो पुलिस की मर्ग रिपोर्ट में और न ही पंचनामा रिपोर्ट में सह-अभियुक्तों के नामों का उल्लेख होने के कारण पक्षकारों के बीच पूर्व दुश्मनी होने और सभी साक्षियों के हितबद्ध होने तथा उनके साक्ष्य की स्वतंत्र साक्ष्य द्वारा संपुष्टि न होने के कारण सह-अभियुक्तों को मिथ्या रूप से फंसाए जाने की संभावना

पृष्ठ संख्या

से इनकार नहीं किया जा सकता और उन्हें भी संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

नंद लाल और अन्य बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 351

– धारा 302 – हत्या – अधिकांश अभियोजन साक्षियों का पक्षद्रोही हो जाना – एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर आठ अभियुक्तों की दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां घटनास्थल पर अभियुक्तों की मौजूदगी को विवादग्रस्त न किया गया हो, प्रत्यक्षदर्शी साक्षी की विस्तारपूर्वक प्रतिपरीक्षा करने के बावजूद वह अपने इस परिसाक्ष्य पर अडिग रहा हो कि अभियुक्तों ने मृतक को पकड़ लिया था और उसे गंभीर क्षतियां कारित की थीं और उसके द्वारा प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में स्पष्ट साक्ष्य देने के कारण उसका परिसाक्ष्य भरोसेमंद, विश्वासोत्पादक और विश्वसनीय होने पर ऐसे एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जा सकता है क्योंकि साक्ष्य की मात्रा नहीं गुणवता मायने रखती है इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा सभी अभियुक्तों के विरुद्ध अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने पर अभियुक्तों की दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

रावसाहेब उर्फ **रावसाहेबगौड़ा आदि** बनाम **कर्नाटक राज्य** 375

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49)

– धारा 7, 13(1)घ और 13(2) – लोक सेवक द्वारा पदीय कार्य के लिए वैध पारिश्रमिक से भिन्न

पृष्ठ संख्या

परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण – आपराधिक अवचार – अवैध परितोषण की मांग का सबूत – शिकायतकर्ता की मृत्यु हो जाने के कारण प्रत्यक्ष साक्ष्य का अभाव – विशेष न्यायालय द्वारा पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – संधार्यता – जहां अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त-लोक सेवक द्वारा की गई मांग को साबित करने के लिए छाया साक्षी के साक्ष्य के अतिरिक्त कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया और उस साक्षी के साक्ष्य से भी यह निष्कर्ष निकालना संभव नहीं होने पर कि मांग और प्रतिग्रहण अवैध परितोषण के लिए थे तथा अभिलेख पर ऐसी कोई परिस्थिति नहीं लाए जाने जिससे परितोषण के लिए मांग साबित होती हो, वहां धारा 7 के अधीन अपराध के संघटक सिद्ध नहीं होने के कारण निचले न्यायालयों द्वारा की गई अभियुक्त-लोक सेवक की दोषसिद्धि को अपास्त करना उचित होगा ।

नीरज दत्ता बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)** 399

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47)

– धारा 6 – कब्जे के लिए वाद – प्रतिवादियों द्वारा संपत्ति का स्वामित्व पर-पक्षकारों के पास होने का अभिवाक् करते हुए वाद की संधार्यता को प्रश्नगत किया जाना – जब तथ्यों से यह प्रकट होता हो कि सुसंगत समय पर किसी भी पक्षकार के पास संपत्ति में हक नहीं था, तो केवल पूर्विक कब्जा अधिकारपूर्ण स्वामी के सिवाय समस्त संसार के विरुद्ध धारणात्मक स्वरूप में

पृष्ठ संख्या

स्वामी के कब्जे के अधिकार का विनिश्चय करता है इसलिए प्रतिवादियों द्वारा किए गए ऐसे अभिवाक् को स्वीकार न करके उच्च न्यायालय द्वारा ठीक किया गया था ।

शिवशंकर और एक अन्य बनाम **एच. पी. वेदव्यास चार** 423

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 136 – उच्चतम न्यायालय की शक्ति – जब निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष अभिलेख पर की सामग्री की सही विचारणा और मूल्यांकन का परिणाम हों, तो ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं होगी ।

शिवशंकर और एक अन्य बनाम **एच. पी. वेदव्यास चार** 423

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 6, नियम 17 – अपीली प्रक्रम पर अभिवचनों का संशोधन – अनुज्ञेयता – न्यायालयों को ऐसे निवेदनों पर विचार करते हुए अति तकनीकी दृष्टिकोण अपनाने से बचना चाहिए और ऐसे निवेदन को मंजूर करने या न करने के लिए प्रत्येक मामले की विद्यमान परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए और ऐसी अनुज्ञा केवल विरल से विरलतम मामलों में प्रदान की जानी चाहिए तथा ऐसी अनुज्ञा विशेष रूप से अपीली प्रक्रम पर मात्र निवेदन करने के आधार पर प्रदान नहीं की जा सकती और जहां विचारण न्यायालय द्वारा वादियों को वादपत्र का संशोधन मंजूर करने के पश्चात्

पृष्ठ संख्या

प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने के लिए अनेक अवसर दिए गए हों और उनके द्वारा इनका उपभोग नहीं किया गया और वाद डिक्रीत किया गया, वहां पश्चात्वर्ती घटनाओं के परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय द्वारा अपीली प्रक्रम पर लिखित कथन में संशोधन मंजूर करने के लिए अनुज्ञा न देने में कोई अनुचितता या अवैधता होना नहीं कहा जा सकता ।

शिवशंकर और एक अन्य बनाम **एच. पी. वेदव्यास चार** 423

– आदेश 22, नियम 4 – आवश्यक पक्षकारों का असंयोजन – वाद का उपशमन – मामले के अभिलेख से यह दर्शित होने पर कि प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु हो जाने की दशा में मृत प्रतिवादी के प्रतिनिधियों सहित अन्य प्रतिवादियों द्वारा वाद में अपने हित का संयुक्त रूप से पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व किया जा रहा है और वे मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि भी हैं, तो ऐसी दशा में सभी अन्य विधिक प्रतिनिधियों और प्रतिवादियों के असंयोजन के कारण उनकी ओर से इस अभिवाक् को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि मृत प्रतिवादी के सभी अन्य विधिक प्रतिवादियों के असंयोजन के कारण वाद का उपशमन हो जाना चाहिए ।

शिवशंकर और एक अन्य बनाम **एच. पी. वेदव्यास चार** 423

तुलनात्मक सारणी

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

[2023] 1 उम. नि. प.

जनवरी-मार्च, 2023

क्र. सं.	निर्णय का नाम व तारीख	उम. नि. प.		ए. आई. आर. (एस. सी.)		एस. सी. सी.	
1	2	3		4		5	
1.	नीरज दत्ता **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार) (15 दिसंबर, 2022)	[2023] 1	1	2023	330	(2023) 4	731
2.	कोटक महिन्द्रा बैंक लि. **बनाम** गिरनार कोरुगेटर्स प्रा. लि. और अन्य (5 जनवरी, 2023)		79		268	–	–
3.	बोबी **बनाम** केरल राज्य (12 जनवरी, 2023)		100		–	–	–
4.	नईम अहमद **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार) (30 जनवरी, 2023)		128		–	–	–

1	2	3	4	5
5.	बासवराज **बनाम** पदमावती और एक अन्य (5 जनवरी, 2023)	[2023] 1	159	2023 282 (2023) 4 239
6.	मोहिन्द्र पाल और अन्य **बनाम** जम्मू और कश्मीर राज्य (12 जनवरी, 2023)		175	– – –
7.	राज्य मार्फत केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो **बनाम** टी. गांगी रेड्डी **उर्फ** येरा गांगी रेड्डी (16 जनवरी, 2023)		189	457 4 253
8.	गजानंद शर्मा **बनाम** आदर्श शिक्षा परिषद् और अन्य (19 जनवरी, 2023)		226	539 – –
9.	प्रसाद प्रधान और एक अन्य **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य (24 जनवरी, 2023)		242	643 2 320
10.	मुन्ना लाल **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (24 जनवरी, 2023)		274	634 – –
11.	इंद्रजीत दास **बनाम** त्रिपुरा राज्य (28 जनवरी, 2023)		305	1239 – –

1	2	3		4		5	
12.	करन उर्फ फतिया **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (3 मार्च, 2023)	[2023] 1	319	2023	1355	(2023) 5	504
13.	नंद लाल और अन्य **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य (14 मार्च, 2023)		351		1599	–	–
14.	रावसाहेब **उर्फ** रावसाहेबगौड़ा आदि **बनाम** कर्नाटक राज्य (16 मार्च, 2023)		375		–	–	–
15.	नीरज दत्ता **बनाम** राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार) (17 मार्च, 2023)		399		–	–	–
16.	शिवशंकर और एक अन्य **बनाम** एच. पी. वेदव्यास चार (29 मार्च, 2023)		423		1780	–	–

[2023] 1 उम. नि. प. 319

करन उर्फ **फतिया**

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

[2019 की दांडिक अपील सं. 572-573]

3 मार्च, 2023

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई, न्यायमूर्ति विक्रम नाथ और
न्यायमूर्ति संजय करोल

किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (2016 का 2) – धारा 94 – आयु के विषय में उपधारणा और उसका अवधारण – अपीलार्थी-अभियुक्त को दंड संहिता के अधीन विभिन्न अपराधों और बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (पॉक्सो अधिनियम) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध और मृत्यु दंडादेश सहित अन्य दंडादेशों से दंडादिष्ट किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त की अपील खारिज किया जाना – उच्चतम न्यायालय में अपील – अपील लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से अपराध किए जाने के समय किशोर होने का दावा किया जाना – विचारण न्यायालय को जांच करने के पश्चात् रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश दिया जाना – जांच रिपोर्ट में उसे अपराध करने की तारीख को किशोर होना पाया जाना – प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से अपीलार्थी-अभियुक्त की आयु का अवधारण करने के लिए अस्थि परीक्षण कराए जाने का निवेदन किया जाना – निवेदन नामंजूर किया जाना – जहां किशोर होने के संबंध में अभियुक्त की आयु का अवधारण प्राथमिक विद्यालय और वह भी राजकीय विद्यालय के जन्म प्रमाणपत्र के आधार पर किया गया हो और विचारण न्यायालय के समक्ष उसे सम्यक् रूप से साबित किया गया हो, तो इस पर संदेह नहीं किया जा सकता अभियुक्त

को अस्थि परीक्षण कराना उचित नहीं होगा, इसलिए अभियुक्त को किशोर होने के कारण तीन वर्ष से अधिक का दंडादेश नहीं दिया जा सकता और चूंकि उसने पहले ही 5 वर्ष का दंडादेश भुगत लिया है इसलिए दंडादेश के प्रश्न का अवधारण करने के लिए मामले को किशोर न्याय बोर्ड को प्रतिप्रेषित करना उचित नहीं होगा ।

किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 – धारा 9 – अभियुक्त द्वारा किशोर होने का अभिवाक् किया जाना – प्रक्रम – अभियुक्त द्वारा किशोर होने का अभिवाक् चाहे वह विचारण न्यायालय हो या अपील न्यायालय किसी के समक्ष भी किसी भी प्रक्रम पर यहां तक कि मामले का अंतिम रूप से विनिश्चय किए जाने के पश्चात् भी किया जा सकता है और ऐसे दावे का अवधारण अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किया जाएगा ।

किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 – धारा 9(3) और 25 – किशोर होने का अभिवाक् – अपीलार्थी-अभियुक्त को विचारण न्यायालय द्वारा दंड संहिता की धाराओं और पॉक्सो अधिनियम के अधीन दोषसिद्ध और मृत्यु दंडादेश सहित अन्य दंडादेश से दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – जहां विचारण न्यायालय द्वारा किसी अभियुक्त को उसके विरुद्ध आरोप साबित होने पर दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है तथा बाद के किसी प्रक्रम पर अभियुक्त को अपराध कारित करने की तारीख को किशोर होना पाया जाता है, तो ऐसी स्थिति में उसकी दोषसिद्धि को कायम रखा जा सकता है किंतु केवल दंडादेश के प्रश्न का अवधारण करने के लिए मामले को किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजा जाना आवश्यक है जो अधिनियम के उपबंधों के अनुसार उचित दंड का अवधारण करेगा जो किसी भी दशा में 3 वर्ष से अधिक का नहीं होगा ।

इस अपील में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 376(2)(i), बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (संक्षेप में पॉक्सो अधिनियम) की धारा 5(ड)/6 और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 201 के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया था । विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को सभी अपराधों के लिए दोषसिद्ध

और मृत्यु दंडादेश सहित अन्य दंडादेशों से दंडादिष्ट किया गया । अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया और विचारण न्यायालय द्वारा भेजे गए मृत्यु दंडादेश के निर्देश की अभिपुष्टि की गई । अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइलें की गईं । इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने किशोर होने और परिणामत: किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के अधीन उपलब्ध फायदों का दावा करते हुए एक अंतरिम आवेदन फाइल किया । उच्चतम न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय से इस बारे में सम्यक् जांच करने के पश्चात् अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने की अपेक्षा की कि क्या अपीलार्थी उस तारीख को किशोर था जब प्रश्नगत अपराध किया गया था । उक्त आदेश के अनुसरण में प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, मनावर, जिला धार, मध्य प्रदेश से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई । उक्त रिपोर्ट के अनुसार, अपीलार्थी की जन्म की तारीख निश्चायक रूप से 25 जुलाई, 2002 के रूप में साबित पाई गई । घटना की तारीख 15 दिसंबर, 2017 थी, इसलिए घटना की तारीख को अपीलार्थी की आयु 15 वर्ष 4 माह और 20 दिन थी । प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से उक्त रिपोर्ट पर संदेह करते हुए यह आग्रह किया गया कि अपीलार्थी की सही आयु का अवधारण करने के लिए अस्थि परीक्षण किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मामले के तथ्यों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल का उपरोक्त तर्क निम्नलिखित कारणों से नामंजूर किए जाने योग्य है – (क) पहला, विचारण न्यायालय के समक्ष जांच के दौरान राज्य ने अपीलार्थी की ओर से फाइल किए गए दस्तावेजों और अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के संबंध में किसी प्रकार का कोई आक्षेप नहीं किया था क्योंकि राज्य ने उन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा तक नहीं की थी जिनकी जांच के दौरान परीक्षा की गई थी । विचारण न्यायालय द्वारा विस्तृत जांच करने के पश्चात् अभिलिखित किए गए निश्चायक निष्कर्ष पर अब राज्य को ऐसा आक्षेप करने के लिए अनुज्ञात करना अन्यायसंगत और अनपेक्षित होगा । राज्य

के पास विचारण न्यायालय के समक्ष जांच में इस तरह का अभिवाक् करने का पूरा अवसर था और फिर विचारण न्यायालय को यह निर्णय लेना था कि क्या कोई अस्थि परीक्षण आवश्यक है या नहीं ; (ख) दूसरा, अस्थि परीक्षण आयु का केवल एक व्यापक निर्धारण करेगा । यह सटीक आयु नहीं बता सकता । इसमें एक से दो वर्ष का बढ़ या घट मार्जन भी होता है । यदि यह न्यायालय उक्त परीक्षण की अनुज्ञा भी देता है, तो इसका कोई परिणाम नहीं निकलेगा क्योंकि जांच के पश्चात् विचारण न्यायालय द्वारा निर्धारण करने पर इस परीक्षण का कोई सरोकार नहीं होगा ; (ग) तीसरा, आयु के अवधारण के लिए पहली वरियता विद्यालय द्वारा जारी किया गया जन्म प्रमाणपत्र या मैट्रिकुलेशन प्रमाणपत्र है । यद्यपि यह दलील दी गई है कि विद्यालय का कोई जन्म प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था, किंतु अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने रिपोर्ट के साथ संलग्न दस्तावेजों से यह इंगित किया कि अंक पत्रों और विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के अतिरिक्त जन्म प्रमाणपत्र भी फाइल किया गया था जो रिपोर्ट का अनुलग्नक 1-3 है । प्रथम प्रवर्ग के दस्तावेज उपलब्ध न होने के अभाव में ही नगर निगम से प्राप्त जन्म प्रमाणपत्र पर विचार किया जाना चाहिए ; और (घ) अंत में, यदि पहले और दूसरे स्तंभों के अधीन दिए गए दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं, तो ही चिकित्सा बोर्ड को निर्देश करने और अस्थि परीक्षण करने की स्थिति उत्पन्न होती है । वर्तमान मामले में, विद्यालय से और वह भी एक राजकीय प्राथमिक विद्यालय से जन्म प्रमाणपत्र उपलब्ध होने के कारण हम इसकी शुद्धता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं पाते हैं और इससे भी बढ़कर जब विचारण न्यायालय के समक्ष इसे सम्यक् रूप से साबित किया गया है । इस प्रकार, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए आक्षेप नामंजूर किए जाने योग्य हैं । (पैरा 11 और 12)

अगला प्रश्न यह है कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को क्या राहत दी जा सकती है कि अधिनियम, 2015 के अधीन उसे एक बालक अभिनिर्धारित किया गया है और वह भी 16 वर्ष से कम आयु का । अधिनियम, 2015 की धारा 18 का परिशीलन करने पर यह ध्यान देने योग्य है कि किशोर न्याय बोर्ड किसी बालक को विधि का

उल्लंघन करते हुए पाए जाने पर, जिसने कोई छोटा अपराध या घोर अपराध किया हो और जहां जघन्य अपराध किया गया हो, बालक की आयु 16 वर्ष से कम हो, उपधारा (1) के खंड (क) से (छ) के अधीन विभिन्न आदेश पारित कर सकता है । तथापि, शुद्ध परिणाम यह है कि जो भी दंड दिया जाना है, वह तीन वर्ष से अधिक अवधि का नहीं हो सकता और किशोर न्याय बोर्ड को उन सर्वोत्तम सुविधाओं को सुनिश्चित करने का पूरा ध्यान रखना होगा जो सुधारात्मक सेवाएं देने के लिए बालक को दी जा सकती हैं जिनके अंतर्गत शिक्षा, कौशल विकास, परामर्श और मनश्चिकित्सीय सहायता भी है । वर्तमान मामले में, अपीलार्थी को 16 वर्ष से कम होना अभिनिर्धारित किया जाता है और इसलिए जो अधिकतम दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है वह तीन वर्ष तक है । अपीलार्थी ने पहले ही पांच वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लिया है । तीन वर्ष से अधिक का उसका कारावास अवैध होगा और इसलिए वह इस आधार पर भी तुरंत छोड़े जाने के लिए दायी होगा । (पैरा 17 और 18)

अब यह न्यायालय किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के अधीन उपबंधों पर संक्षिप्त रूप से चर्चा करेगा । अधिनियम, 2015 की धारा 9 को पहले ही इस निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में उद्धृत किया गया है । अधिनियम, 2015 की धारा 9 की उपधारा (3) के अनुसार, जो न्यायालय यह पाता है कि जिस व्यक्ति ने अपराध किया है वह ऐसा अपराध किए जाने की तारीख को बालक था तो बालक को समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजेगा और न्यायालय द्वारा पारित किए गए दंडादेश, यदि कोई है, के बारे में यह समझा जाएगा कि उसका कोई प्रभाव नहीं है । इसमें विनिर्दिष्ट रूप से या यहां तक कि विवक्षित रूप से भी यह उपबंध नहीं किया गया है कि किसी न्यायालय द्वारा ऐसे व्यक्ति के संबंध में, जिसे बाद में मामले के निपटारे के पश्चात् किशोर या बालक होना पाया गया है, अभिलिखित की गई दोषसिद्धि भी अपना प्रभाव खो देगी बल्कि यह केवल दंडादेश ही है यदि न्यायालय द्वारा पारित किया गया हो, जिसका कोई प्रभाव नहीं समझा जाएगा । एक और कारण है कि क्यों सेशन न्यायालय द्वारा

किए गए विचारण और अभिलिखित दोषसिद्धि को विधि में दूषित अभिनिर्धारित नहीं किया जाएगा यद्यपि विचारण किए गए व्यक्ति को बाद में बालक अभिनिर्धारित किया गया हो । विधानमंडल का आशय ऐसे व्यक्ति को, जिसे अपराध करने की तारीख को बालक होना घोषित किया जाता है, केवल उसके दंडादेश के भाग के संबंध में फायदा देना था । यदि दोषसिद्धि को भी निष्प्रभावी बनाया जाना था तो या तो नियमित सेशन न्यायालय की अधिकारिता को न केवल अधिनियम, 2015 की धारा 9 के अधीन बल्कि अधिनियम, 2015 की धारा 25 के अधीन भी पूरी तरह से अपवर्जित कर दिया गया होता और इसकी बजाय यह उपबंध किया गया होता कि यह निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने पर कि विचारण किया जाने वाला व्यक्ति एक बालक है, तो लंबित विचारण को भी किशोर न्याय बोर्ड को भेजा जाना चाहिए और यह भी कि ऐसे विचारण को अकृत और शून्य अभिनिर्धारित किया जाना होगा । इसकी बजाय, अधिनियम, 2015 की धारा 25 के अधीन स्पष्ट रूप से यह उपबंध किया गया है कि अधिनियम, 2015 के आरंभ की तारीख को किसी बोर्ड या न्यायालय के समक्ष लंबित कोई कार्यवाही उस बोर्ड या न्यायालय में इस प्रकार जारी रखी जाएगी मानो यह अधिनियम अधिनियमित नहीं किया गया था । अधिनियम, 2015 की धारा 9 और साथ ही अधिनियम, 2000 की धारा 7क, जो अधिनियम, 2015 की धारा 9 के तदरूप है, में अधिकथित कानूनी उपबंधों पर विचार करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि दोषसिद्धि के गुणागुण का परीक्षण किया जा सकता है और जो दोषसिद्धि अभिलिखित की गई थी उसे केवल इस कारण विधि में दूषित होना अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि जांच किशोर न्याय बोर्ड द्वारा नहीं की गई थी । यह केवल दंड का प्रश्न है जिसके लिए अधिनियम, 2015 के उपबंधों को लागू किया जाएगा और अधिनियम, 2015 के अधीन अनुज्ञेय दंडादेश से अधिक दंडादेश को तद्नुसार अधिनियम, 2015 के उपबंधों के अनुसार संशोधित किया जाना होगा । अन्यथा, जिस अभियुक्त ने कोई जघन्य अपराध किया है और जिसने विचारण न्यायालय के समक्ष किशोर होने का दावा नहीं किया है, वह दंडित किए बिना चला जाएगा । यह अधिनियम, 2015 में उपबंधित

उद्देश्य और आशय भी नहीं है । अधिनियम, 2015 के अधीन किशोर के अधिकारों और स्वतंत्रता से संबंधित उद्देश्य केवल यह सुनिश्चित करना है कि क्या विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर को कम दंडादेश देकर और अधिनियम, 2015 के अधीन परिभाषित किसी संस्थान में उसके ठहरने के दौरान उसके कल्याण के लिए अन्य सुविधाओं का निदेश देकर मुख्य धारा में लाया जा सकता है । ऊपर अभिलिखित सभी कारणों से निम्नलिखित आदेश दिया जाता है – अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखा जाता है ; तथापि, दंडादेश को अपास्त किया जाता है । इसके अतिरिक्त, चूंकि अपीलार्थी वर्तमान में 20 वर्ष से अधिक का होगा इसलिए उसे किशोर न्याय बोर्ड या किसी अन्य बाल देख-रेख सुविधा या संस्थान में भेजने की कोई आवश्यकता नहीं है । अपीलार्थी न्यायिक अभिरक्षा में है । उसे तुरंत छोड़ दिया जाएगा । आक्षेपित निर्णय को पूर्वोक्त सीमा तक उपांतरित किया जाता है । (पैरा 30, 31, 32, 33 और 35)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) 10 एस. एस. सी. 555 : **सत्य देव** उर्फ **भूरे** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	25, 34
[2019]	(2019) 6 एस. सी. सी. 132 : **अशोक कुमार मेहरा और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य** ;	28
[2019]	(2019) 14 एस. सी. सी. 401 : **राजू** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	26, 28
[2018]	2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन 3655 : **महेश** बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य** ;	24, 34
[2013]	(2013) 11 एस. सी. सी. 193 : **जितेन्द्र सिंह** उर्फ **बब्बू सिंह और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ।	21, 34

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2019 की दांडिक अपील सं. 572-573.

2018 के सी. आर. आर. एफ. सी. सं. 4 और 2018 की दांडिक अपील सं. 4379 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, इंदौर द्वारा तारीख 15 नवंबर, 2018 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री अमन लेखी, ज्येष्ठ अधिवक्ता, रिटविज रिशब, (सुश्री) साक्षी जैन, स्नेहा सोनम और रजत मित्तल

प्रत्यर्थी की ओर से श्रीमती अंकिता चौधरी, उप महाधिवक्ता, सर्वश्री सन्नी चौधरी, यशराज सिंह बुंदेला, अभिनव श्रीवास्तव और करन बिश्नोई

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति विक्रम नाथ ने दिया ।

न्या. नाथ – वर्तमान अपीलों में तारीख 15 नवंबर, 2018 के उस निर्णय और आदेश की शुद्धता को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, इंदौर न्यायपीठ की एक खंड न्यायपीठ ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत मृत्यु दंडादेश की अभिपुष्टि की और साथ ही साथ अपीलार्थी द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा की गई उसकी दोषसिद्धि और अधिनिर्णीत दंडादेश के विरुद्ध फाइल की गई अपील खारिज कर दी ।

2. वर्तमान अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 376(2)(i), बालकों का लैंगिक अपराधों से संरक्षण अधिनियम (संक्षेप में पॉक्सो अधिनियम) की धारा 5(ड)/6 और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 201 के अधीन अपराधों के लिए आरोपित किया गया था । विचारण न्यायालय ने तारीख 17 मई, 2018 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी को सभी अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और प्रत्येक अपराध के सामने दिया गया निम्नलिखित दंडादेश अधिनिर्णीत किया :–

धारा के अधीन अपराध	दंडादेश	जुर्माना
भा. दं. संहिता की धारा 363	5 वर्ष का कठोर कारावास	1,000/- रुपए
भा. दं. संहिता की धारा 376(2)(i)	आजीवन कारावास	5,000/- रुपए
पॉक्सो अधिनियम की धारा 5(ड)/6	आजीवन कारावास	5,000/- रुपए
भा. दं. संहिता की धारा 302	मृत्यु दंडादेश	5,000/- रुपए
भा. दं. संहिता की धारा 201	5 वर्ष का कठोर कारावास	5,000/- रुपए

3. जैसा कि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया और विचारण न्यायालय द्वारा भेजे गए मृत्यु दंडादेश के निर्देश की अभिपुष्टि की गई ।

4. इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने किशोर होने और परिणामत: किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (संक्षेप में अधिनियम, 2015) के अधीन उपलब्ध फायदों का दावा करते हुए 2019 का अंतरिम आवेदन सं. 43271 फाइल किया । यह आवेदन स्पष्ट रूप से अधिनियम, 2015 की धारा 9(2) के अधीन फाइल किया गया था । इस न्यायालय ने तारीख 28 सितंबर, 2022 के आदेश द्वारा विचारण न्यायालय से इस बारे में सम्यक् जांच करने के पश्चात् अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने की अपेक्षा की कि क्या अपीलार्थी उस तारीख को किशोर था जब प्रश्नगत अपराध किया गया था । तारीख 28 सितंबर, 2022 का आदेश नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "पिछले अवसर पर जारी किए गए निदेशों के अनुसरण में अभिलेख पर कतिपय रिपोर्ट और दस्तावेज प्रस्तुत किए गए हैं ।

परस्पर-विरोधी दलीलों के गुणों या अवगुणों पर टिप्पणी किए बिना हम निम्नलिखित निदेश देते हैं –

क. अभिलेख की प्रतियां भौतिक तथा डिजिटाइज्ड रूप में यथासंभव शीघ्र संबंधित विचारण न्यायालय को भेजी जाएं ।

ख. अभियुक्त को एक सप्ताह के भीतर संबंधित विचारण न्यायालय के समक्ष पेश किया जाएगा ।

ग. विचारण न्यायालय इस बारे में विचार करने का प्रयास करेगा कि क्या अपीलार्थी उस तारीख को किशोर था जब प्रश्नगत अपराध किया गया था ।

घ. इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विचारण न्यायालय सभी सुसंगत दस्तावेजों को मांगने और विचार करने तथा अपीलार्थी का विधि में ज्ञात रीति में चिकित्सीय परीक्षण करने की सुविधा लेने का हकदार होगा ।

ङ. इस बाबत रिपोर्ट इस न्यायालय की रजिस्ट्री में चार सप्ताह के भीतर प्रस्तुत की जाएगी ।

रिपोर्ट सहित आगे विचार करने के लिए इस मामले को 31 अक्तूबर, 2022 से आरंभ होने वाले सप्ताह में सूचीबद्ध किया जाए ।"

5. उक्त आदेश के अनुसरण में प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, मनावर, जिला धार, मध्य प्रदेश से एक रिपोर्ट प्राप्त हुई है जो उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए सभी दस्तावेजी और मौखिक दोनों प्रकार के तात्विक साक्ष्य के साथ 20 पृष्ठों की है जिसके आधार पर रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है । उक्त रिपोर्ट के अनुसार, अपीलार्थी की जन्म की तारीख निश्चायक रूप से 25 जुलाई, 2002 के रूप में साबित पाई गई है । घटना की तारीख 15 दिसंबर, 2017 है, इसलिए घटना की तारीख को अपीलार्थी की आयु 15 वर्ष 4 माह और 20 दिन थी । रिपोर्ट के प्रभावी भाग को नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"निश्चायक रूप से यह साबित पाया गया है कि

अपीलार्थी/अभियुक्त करन की जन्म की तारीख 25 जुलाई, 2002 है । तारीख 25 जुलाई, 2002 को उसकी जन्म की तारीख विचार में लेते हुए यह भी साबित हुआ है कि अपीलार्थी की आयु तारीख 15 दिसंबर, 2017 को 15 वर्ष 4 माह 20 दिन थी, और 16 वर्ष से कम आयु का होने के कारण वह किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 2(12) के अनुसार बालक था । तद्नुसार, जांच कार्यवाहियां पूर्ण की जाती हैं ।"

6. आरंभ में, अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह स्पष्ट किया कि फिलहाल वह केवल किशोरता के अभिवाक् पर जोर दे रहा है और यदि वह इस संबंध में असफल रहता है तो दोषसिद्धि और दंडादेश के विवाद्यक पर निवेदन करेगा । इसके अतिरिक्त उक्त रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने प्रथमत: यह दलील दी कि अधिनियम, 2015 की धारा 9(2) के अधीन अधिनिर्णीत दंडादेश को प्रभावी नहीं किया जा सकता । द्वितीयत:, यह दलील दी गई कि दिसंबर, 2017 में गिरफ्तारी की तारीख से अपीलार्थी ने पहले ही 5 वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लिया है जबकि अधिनियम, 2015 की धारा 18 के अधीन 16 वर्ष से कम आयु के किशोर को, भले ही किसी जघन्य अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, जो अधिकतम दंडादेश दिया जा सकता है वह विशेष गृह में 3 वर्ष तक रखे जाने का है । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल के अनुसार, उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को तुरंत छोड़ दिया जाना चाहिए ।

7. मध्य प्रदेश राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से यह आग्रह किया कि अपीलार्थी की सही आयु का अवधारण करने के लिए अस्थि परीक्षण किया जाना चाहिए, क्योंकि उनके अनुसार, जांच के दौरान विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल किए गए दस्तावेज अधिनियम, 2015 की धारा 94 के अंतर्गत नहीं आते हैं और इसलिए शेष एकमात्र विकल्प यह है कि एक चिकित्सा बोर्ड द्वारा अस्थि परीक्षण किया जाए । राज्य की ओर से कोई अन्य दलील नहीं दी गई ।

8. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों पर

विचार करने से पूर्व विचारण न्यायालय द्वारा प्रस्तुत की गई तारीख 27 अक्तूबर, 2022 की जांच रिपोर्ट पर पहले विचार करना आवश्यक होगा । यदि उक्त रिपोर्ट स्वीकार और अनुमोदित की जाती है, तब अपीलार्थी को एक बालक होना घोषित किया जाएगा और इसके पश्चात् अधिनियम, 2015 के अनुसार आवश्यक परिणाम हो सकेंगे । यहां यह उल्लेख करना सुसंगत होगा कि विचारण न्यायालय द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट पर प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा कोई आपत्ति फाइल नहीं की गई है । प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से दी गई एकमात्र दलील अस्थि परीक्षण कराने के लिए है ।

9. हमने रिपोर्ट के साथ-साथ विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए उस तात्विक साक्ष्य का भी परिशीलन किया है जिसके आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा निष्कर्ष निकाला गया है । रिपोर्ट दस्तावेजी साक्ष्य के साथ-साथ वर्तमान मुख्य अध्यापिका (आईडब्ल्यू-01), सेवानिवृत्त मुख्य अध्यापक (आईडब्ल्यू-08), प्राथमिक संस्थान के पांच अध्यापकों (आईडब्ल्यू-02, आईडब्ल्यू-04, आईडब्ल्यू-07, आईडब्ल्यू-09 और आईडब्ल्यू-10) और अपीलार्थी के संरक्षक (आईडब्ल्यू-06) के मौखिक साक्ष्य पर भी आधारित है । यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि यह संस्थान एक प्राइवेट संस्थान नहीं है अपितु एक राजकीय प्राथमिक विद्यालय है और यह न्यायालय सेवारत और सेवानिवृत्त दोनों प्रकार के सरकारी सेवकों के परिसाक्ष्य पर विश्वास न करने या यहां तक कि संदेह करने का कोई कारण नहीं पाता है । संस्थान द्वारा जारी की गई अंक-तालिकाओं के अतिरिक्त संस्थान द्वारा जारी किया गया जन्म तारीख प्रमाणपत्र (आई-3) भी है । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय के समक्ष जांच में मूल विद्यार्थी रजिस्टर और अन्य दस्तावेज भी प्रस्तुत किए गए थे । अत: इस न्यायालय के लिए अपीलार्थी की जन्म की तारीख के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष की शुद्धता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है । अत: हम विचारण न्यायालय की रिपोर्ट को स्वीकार करते हैं और अभिनिर्धारित करते हैं कि घटना की तारीख को अपीलार्थी की आयु 15 वर्ष, 4 माह और 20 दिन थी ।

10. प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलील का परीक्षण करने के लिए अधिनियम, 2015 की धारा 94, जो सुसंगत है, को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"**94. आयु के विषय में उपधारणा और उसका अवधारण** – (1) जहां बोर्ड या समिति को, इस अधिनियम के किसी उपबंध के अधीन (साक्ष्य देने के प्रयोजन से भिन्न) उसके समक्ष लाए गए व्यक्ति की प्रतीति के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि उक्त व्यक्ति बालक है तो समिति या बोर्ड बालक की यथासंभव सन्निकट आयु का कथन करते हुए ऐसे संप्रेषण को अभिलिखित करेगा और आयु की और अभिपुष्टि की प्रतीक्षा किए बिना, यथास्थिति, धारा 14 या धारा 36 के अधीन जांच करेगा ।

(2) यदि समिति या बोर्ड के पास इस संबंध में संदेह होने के युक्तियुक्त आधार हैं कि क्या उसके समक्ष लाया गया व्यक्ति बालक है या नहीं तो, यथास्थिति, समिति या बोर्ड निम्नलिखित साक्ष्य अभिप्राप्त करके आयु अवधारण की प्रक्रिया का जिम्मा लेगा –

(i) विद्यालय से प्राप्त जन्म तारीख प्रमाणपत्र या संबंधित परीक्षा बोर्ड से मैट्रिकुलेशन या समतुल्य प्रमाणपत्र, यदि उपलब्ध हो, और उसके अभाव में ;

(ii) निगम या नगरपालिका प्राधिकारी या पंचायत द्वारा दिया गया जन्म प्रमाणपत्र ;

(iii) और केवल उपरोक्त (i) और (ii) के अभाव में आयु का अवधारण समिति या बोर्ड के आदेश पर की गई अस्थि जांच या कोई अन्य नवीनतम चिकित्सीय आयु अवधारण जांच के आधार पर किया जाएगा :

परंतु समिति या बोर्ड के आदेश पर की गई ऐसी आयु अवधारण जांच ऐसे आदेश की तारीख से 15 दिन के भीतर पूरी की जाएगी ।

(3) समिति या बोर्ड द्वारा उसके समक्ष इस प्रकार लाए गए व्यक्ति की अभिलिखित आयु इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए

उस व्यक्ति की सही आयु समझी जाएगी ।"

11. ऊपर उल्लिखित उपबंध और वर्तमान मामले के तथ्यों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल का उपरोक्त तर्क निम्नलिखित कारणों से नामंजूर किए जाने योग्य है :–

(क) पहला, विचारण न्यायालय के समक्ष जांच के दौरान राज्य ने अपीलार्थी की ओर से फाइल किए गए दस्तावेजों और अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के संबंध में किसी प्रकार का कोई आक्षेप नहीं किया था क्योंकि राज्य ने उन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा तक नहीं की थी जिनकी जांच के दौरान परीक्षा की गई थी । विचारण न्यायालय द्वारा विस्तृत जांच करने के पश्चात् अभिलिखित किए गए निश्चायक निष्कर्ष पर अब राज्य को ऐसा आक्षेप करने के लिए अनुज्ञात करना अन्यायसंगत और अनपेक्षित होगा । राज्य के पास विचारण न्यायालय के समक्ष जांच में इस तरह का अभिवाक् करने का पूरा अवसर था और फिर विचारण न्यायालय को यह निर्णय लेना था कि क्या कोई अस्थि परीक्षण आवश्यक है या नहीं ;

(ख) दूसरा, अस्थि परीक्षण आयु का केवल एक व्यापक निर्धारण करेगा । यह सटीक आयु नहीं बता सकता । इसमें एक से दो वर्ष का बढ़ या घट मार्जन भी होता है । यदि हम उक्त परीक्षण की अनुज्ञा भी देते हैं, तो भी इससे हमारा कोई मार्गदर्शन नहीं होता है । जांच के पश्चात् विचारण न्यायालय द्वारा निर्धारण करने पर इस परीक्षण का कोई सरोकार नहीं होगा ;

(ग) तीसरा, आयु के अवधारण के लिए पहली वरियता विद्यालय द्वारा जारी किया गया जन्म प्रमाणपत्र या मैट्रिकुलेशन प्रमाणपत्र है । यद्यपि यह दलील दी गई है कि विद्यालय का कोई जन्म प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था, किंतु अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने रिपोर्ट के साथ संलग्न दस्तावेजों से यह इंगित किया कि अंक पत्रों और विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के अतिरिक्त जन्म प्रमाणपत्र भी फाइल किया गया था जो रिपोर्ट

का अनुलग्नक 1-3 है । प्रथम प्रवर्ग के दस्तावेज उपलब्ध न होने के अभाव में ही नगर निगम से प्राप्त जन्म प्रमाणपत्र पर विचार किया जाना चाहिए ; और

(घ) अंत में, यदि पहले और दूसरे स्तंभों के अधीन दिए गए दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं, तो ही चिकित्सा बोर्ड को निर्देश करने और अस्थि परीक्षण करने की स्थिति उत्पन्न होती है ।

12. वर्तमान मामले में, विद्यालय से और वह भी एक राजकीय प्राथमिक विद्यालय से जन्म प्रमाणपत्र उपलब्ध होने के कारण हम इसकी शुद्धता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं पाते हैं और इससे भी बढ़कर जब विचारण न्यायालय के समक्ष इसे सम्यक् रूप से साबित किया गया है । इस प्रकार, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए आक्षेप नामंजूर किए जाने योग्य हैं ।

13. अगला प्रश्न यह है कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को क्या राहत दी जा सकती है कि अधिनियम, 2015 के अधीन उसे एक बालक अभिनिर्धारित किया गया है और वह भी 16 वर्ष से कम आयु का । इस संदर्भ में अधिनियम, 2015 की धारा 9 सुसंगत होगी । इसे इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"**9. ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया जिसे इस अधिनियम के अधीन सशक्त नहीं किया गया** – (1) जब किसी मजिस्ट्रेट की जो इस अधिनियम के अधीन बोर्ड की शक्तियों का प्रयोग करने के लिए सशक्त नहीं है, यह राय है कि वह व्यक्ति जिसके बारे में यह अभिकथन किया गया है कि उसने अपराध किया है, और उसके समक्ष लाया गया है, कोई बालक है, तो वह ऐसी राय को अविलंब अभिलेखबद्ध करेगा और उस बालक को तत्काल ऐसी कार्यवाही के अभिलेख के साथ कार्यवाहियों पर अधिकारिता रखने वाले बोर्ड को भेजेगा ।

(2) यदि वह व्यक्ति, जिसके बारे में यह अभिकथन किया गया है कि उसने अपराध किया है, बोर्ड से भिन्न किसी न्यायालय के समक्ष यह दावा करता है कि वह व्यक्ति बालक था, या यदि

न्यायालय की स्वयं यह राय है कि वह व्यक्ति अपराध के किए जाने की तारीख को बालक था, तो उक्त न्यायालय उस व्यक्ति की आयु की अवधारणा करने के लिए ऐसी जांच करेगा, ऐसा साक्ष्य लेगा जो आवश्यक हो (किंतु शपथपत्र नहीं) और उस व्यक्ति की यथासंभव निकटतम आयु का कथन करते हुए मामले के निष्कर्ष अभिलिखित करेगा :

परंतु ऐसा कोई दावा किसी न्यायालय के समक्ष किया जा सकेगा और उसको किसी भी प्रक्रम पर, मामले का अंतिम निपटारा हो जाने के पश्चात् भी, स्वीकार किया जाएगा और उस दावे का अवधारण इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों में अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार किया जाएगा, भले ही वह व्यक्ति इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख को या उससे पूर्व बालक न रह गया हो ।

(3) यदि न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि किसी व्यक्ति ने अपराध किया है और वह ऐसे अपराध के किए जाने की तारीख को बालक था, तो वह उस बालक को बोर्ड के पास, समुचित आदेश पारित करने के लिए भेजेगा और न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश के, यदि कोई हो, बारे में यह समझा जाएगा कि उसका कोई प्रभाव नहीं है ।

(4) यदि इस धारा के अधीन किसी व्यक्ति को, जब उस व्यक्ति के बालक होने के दावे की जांच की जा रही है, संरक्षात्मक अभिरक्षा में रखा जाना अपेक्षित है, तो उस व्यक्ति को उस अंत:कालीन अवधि में सुरक्षित स्थान में रखा जा सकेगा ।"

14. पूर्वोक्त धारा का परिशीलन करने पर यह धारा प्रथमत: उस व्यक्ति को जिसने अभिकथित रूप से अपराध किया है, यह दावा करने का अधिकार देती है कि वह अपराध करने की तारीख को बालक है और यदि ऐसा दावा किया जाता है, तो संबंधित न्यायालय जांच करेगा और ऐसे व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए शपथपत्र से भिन्न ऐसा साक्ष्य लेगा जो आवश्यक हो । उपधारा (2) के परंतुक में आगे यह स्पष्ट किया गया है कि ऐसा दावा किसी भी न्यायालय के समक्ष किया

जा सकता है और उसको किसी भी प्रक्रम पर यहां तक कि मामले का अंतिम रूप से विनिश्चय हो जाने के पश्चात् भी स्वीकार किया जाएगा । इस प्रकार किए गए दावे का अवधारण अधिनियम, 2015 के उपबंधों और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार किया जाएगा, भले ही वह व्यक्ति अधिनियम, 2015 के प्रारंभ की तारीख को या उससे पूर्व बालक न रह गया हो । विधि ऐसे व्यक्ति को जिसे अपराध करने की तारीख को बालक होना सिद्ध किया गया है, अधिनियम, 2015 के अधीन बालक को ग्राह्य फायदों का उपभोग करने के लिए पूरी सुरक्षा प्रदान करती है, भले ही मामला अंतिम रूप से विनिश्चित किया जा चुका हो और ऐसे व्यक्ति ने वयस्कता भी प्राप्त कर ली हो । इसके अतिरिक्त, उपधारा (3) में यह उपबंधित है कि यदि जांच में यह पाया जाता है कि वह व्यक्ति ऐसा अपराध करने की तारीख को एक बालक था तो न्यायालय के लिए यह अपेक्षित है कि वह बालक को किशोर न्याय बोर्ड के पास समुचित आदेश पारित करने के लिए भेजे और इसके अतिरिक्त यदि न्यायालय द्वारा कोई दंडादेश अधिरोपित किया गया है, तो इसके बारे में यह समझा जाएगा कि इसका कोई प्रभाव नहीं है । उपरोक्त कानूनी उपबंधों को ध्यान में रखते हुए और अभिलिखित किए गए निष्कर्षों को दृष्टिगत करते हुए अपीलार्थी को अपराध करने की तारीख को एक बालक होना अभिनिर्धारित किया गया है इसलिए अधिरोपित दंडादेश को निष्प्रभावी किया जाना चाहिए ।

15. अपीलार्थी को दी जाने वाली राहत की परीक्षा एक भिन्न परिप्रेक्ष्य द्वारा भी की जा सकती है अर्थात् क्या उसने पहले ही वह अधिकतम दंडादेश भुगत लिया है जो किसी जघन्य अपराध को करने के लिए विधि का उल्लंघन करने वाले बालक के विरुद्ध अधिनिर्णीत किया जा सकता है और जो 16 वर्ष से कम आयु का है । अधिनियम, 2015 की धारा 18 इस संबंध में सुसंगत होगी और इसे इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "**18. विधि का उल्लंघन करते पाए गए बालक के बारे में आदेश** – (1) जहां बोर्ड का जांच करने पर यह समाधान हो जाता है कि बालक ने, आयु को विचार में लाए बिना कोई छोटा अपराध या कोई घोर अपराध किया है; या सोलह वर्ष से कम आयु के

बालक ने कोई जघन्य अपराध किया है तो तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी तत्प्रतिकूल बात के होते हुए भी और अपराध की प्रकृति, पर्यवेक्षण या मध्यक्षेप की विशिष्ट आवश्यकता ऐसी परिस्थितियों, जो सामाजिक अन्वेषण रिपोर्ट में बताई गई हैं, और बालक के पूर्व आचरण के आधार पर बोर्ड यदि ऐसा करना ठीक समझता है तो वह, –

(क) बालक को, समुचित जांच के पश्चात् और ऐसे बालक, तथा उसके माता-पिता या संरक्षक को परामर्श देने के पश्चात् उपदेश या भर्त्सना के पश्चात् घर जाने के लिए अनुज्ञात कर सकेगा;

(ख) बालक को सामूहिक परामर्श और ऐसे ही क्रियाकलापों में भाग लेने का निदेश दे सकेगा;

(ग) बालक को किसी संगठन या संस्थान अथवा बोर्ड द्वारा पहचान किए गए विनिर्दिष्ट व्यक्ति, व्यक्तियों या व्यक्ति समूह के पर्यवेक्षणाधीन सामुदायिक सेवा करने का आदेश दे सकेगा;

(घ) बालक या बालक के माता-पिता या संरक्षण को जुर्माने का संदाय करने का आदेश दे सकेगा;

(ड.) बालक को सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ने और माता-पिता, संरक्षक या योग्य व्यक्ति की देख-रेख में रखने का निदेश, ऐसे माता-पिता, संरक्षक या योग्य व्यक्ति द्वारा बालक के सदाचार और उसकी भलाई के लिए बोर्ड की अपेक्षानुसार प्रतिभू सहित या रहित तीन वर्ष से अनधिक की कालावधि के लिए बंधपत्र निष्पादित किए जाने पर, दे सकेगा;

(छ) बालक को तीन वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के लिए, जो वह ठीक समझे, विशेष गृह में ठहरने की कालावधि के दौरान सुधारात्मक सेवाएं देने के लिए, जिनके अंतर्गत शिक्षा, कौशल विकास, परामर्श देना व्यवहार उपांतरण चिकित्सा

और मनश्चिकित्सीय सहायता भी है, विशेष गृह में भेजने का निदेश दे सकेगा :

परंतु, यदि बालक का आचरण और व्यवहार ऐसा हो गया है, जो बालक के हित में या विशेष गृह में रहने वाले अन्य बालकों के हित में नहीं होगा तो बोर्ड, ऐसे बालक को सुरक्षित स्थान पर भेज सकेगा ।

(2) यदि उपधारा (1) के खंड (क) से खंड (छ) के अधीन कोई आदेश पारित किया जाता है तो बोर्ड –

(i) विद्यालय में हाजिर होने; या

(ii) किसी व्यवसायिक प्रशिक्षण केंद्र में हाजिर होने से बालक को प्रतिषिद्ध करने; या

(iv) किसी विनिर्दिष्ट स्थान पर बारंबार जाने या हाजिर होने से बालक को प्रतिषिद्ध करने; या

(v) व्यसनमुक्ति कार्यक्रम में भाग लेने, का अतिरिक्त आदेश पारित कर सकेगा ।

(3) जहां बोर्ड, धारा 15 के अधीन प्रारंभिक निर्धारण करने के पश्चात् यह आदेश पारित करता है कि उक्त बालक का, वयस्क के रूप में विचारण करने की आवश्यकता है वहां बोर्ड मामले के विचारण को ऐसे अपराधों के विचारण की अधिकारिता वाले बालक न्यायालय को अंतरित करने का आदेश दे सकेगा ।"

16. अधिनियम, 2015 की पूर्वोक्त धारा 18 का परिशीलन करने पर यह ध्यान देने योग्य है कि किशोर न्याय बोर्ड किसी बालक को विधि का उल्लंघन करते हुए पाए जाने पर, जिसने कोई छोटा अपराध या घोर अपराध किया हो और जहां जघन्य अपराध किया गया हो, बालक की आयु 16 वर्ष से कम हो, उपधारा (1) के खंड (क) से (छ) के अधीन विभिन्न आदेश पारित कर सकता है । तथापि, शुद्ध परिणाम यह है कि जो भी दंड दिया जाना है, वह तीन वर्ष से अधिक अवधि का नहीं हो सकता और किशोर न्याय बोर्ड को उन सर्वोत्तम सुविधाओं को

सुनिश्चित करने का पूरा ध्यान रखना होगा जो सुधारात्मक सेवाएं देने के लिए बालक को दी जा सकती हैं जिनके अंतर्गत शिक्षा, कौशल विकास, परामर्श और मनश्चिकित्सीय सहायता भी है ।

17. वर्तमान मामले में, अपीलार्थी को 16 वर्ष से कम होना अभिनिर्धारित किया जाता है और इसलिए जो अधिकतम दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है वह तीन वर्ष तक है । अपीलार्थी ने पहले ही पांच वर्ष से अधिक का कारावास भुगत लिया है । तीन वर्ष से अधिक का उसका कारावास अवैध होगा और इसलिए वह इस आधार पर भी तुरंत छोड़े जाने के लिए दायी होगा ।

18. मामले के तथ्यों और ऊपर अभिलिखित निष्कर्षों पर विचार करने के पश्चात् इस मुद्दे पर इस बारे में निर्णयज विधि पर भी संक्षेप में विचार करना उपयुक्त होगा कि क्या जब किसी अभियुक्त को दोषसिद्धि के पश्चात् अपील के प्रक्रम पर अधिनियम, 2015 के उपबंधों के अधीन किशोर/बालक होना अभिनिर्धारित किया जाता है, तो विचारण न्यायालय और अपील न्यायालयों द्वारा किए गए विचारण, अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडादेश की क्या प्रास्थिति होगी । क्या नियमित सेशन न्यायालय द्वारा अधिकारिता के अभाव के कारण विचारण स्वयमेव दूषित हो जाएगा और केवल किशोर न्याय बोर्ड ही अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर किए गए अपराध में जांच कर सकता है । यदि किशोर न्याय बोर्ड द्वारा जांच नहीं की गई है, तो क्या संपूर्ण कार्यवाही को अभिखंडित किए जाने की आवश्यकता है या केवल दंडादेश के पहलू पर अधिनियम, 2015 के अनुसार विचार करने की आवश्यकता होगी ।

19. हम प्रारंभ में ही यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि अपीलार्थी ने फिलहाल दोषसिद्धि को चुनौती नहीं दी है बल्कि केवल किशोरावस्था और परिणामस्वरूप अधिनियम, 2015 के अधीन उपबंधित दंडादेश के फायदे का, दोषसिद्धि और दंडादेश पर अभिवाक् करने के अपने अधिकार को आरक्षित रखते हुए, दावा किया है यदि वह किशोरावस्था के आरंभिक विवाद्यक पर असफल रहता है ।

20. उपर्युक्त विवाद्यक पर अनेक निर्णय हैं । कुछ में दोषसिद्धि, दंडादेश को अपास्त किया गया है और कार्यवाहियों को समाप्त कर दिया गया है, अन्य में दोषसिद्धि को कायम रखा गया है किंतु किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (संक्षेप में अधिनियम, 2000) के अधीन अनुज्ञेय अधिकतम अवधि का दंडादेश पहले ही भुगत लिए जाने के आधार पर अभियुक्तों को छोड़े जाने का निदेश दिया गया है और तीसरा, जहां दोषसिद्धि को बनाए रखने के पश्चात् इस न्यायालय ने दंडादेश पर समुचित आदेश पारित करने के लिए मामले को किशोर न्याय बोर्ड को निर्देशित किया है । पहले दिए गए सभी निर्णय, जिनकी इसमें नीचे चर्चा की गई है, अधिनियम, 2000 से संबंधित हैं । वर्तमान मामला अधिनियम, 2015 के अंतर्गत आता है क्योंकि अपराध स्वयं वर्ष 2017 का है ।

21. **जितेन्द्र सिंह** उर्फ **बब्बू सिंह और एक अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने दोषसिद्धि की पुष्टि की थी, किंतु चूंकि उस मामले में अपीलार्थी पर केवल जुर्माना लगाया जा सकता था, इसलिए 100/- रुपए का मौजूदा जुर्माना पूरी तरह से अपर्याप्त पाया गया था और तद्नुसार मामले को किशोर न्याय बोर्ड के पास जुर्माने की उस समुचित मात्रा का अवधारण करने के लिए विप्रेषित किया गया था जो अपीलार्थी पर उद्गृहीत किया जाना चाहिए और विपदग्रस्त के परिवार को जो प्रतिकर अधिनिर्णीत किया जाना चाहिए ।

22. निर्णय के प्रथम लेखक न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर ने इस विवाद्यक पर विचार किया कि क्या इस न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि को संधार्य रखा जा सकता है या केवल दंडादेश पर ही अधिनियम, 2000 के अनुसार विचार किया जाना चाहिए । लगभग सभी पूर्ववर्ती निर्णयों को रिपोर्ट के पैरा 24, 24.1 से 24.7, 25, 25.1 से 25.2, 26, 26.1 से 26.2 और 27 में उन सभी चारों प्रवर्गों के मामलों के संबंध में निर्दिष्ट किया गया था जिनमें इस न्यायालय द्वारा भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण

[1] (2013) 11 एस. सी. सी. 193.

अपनाए गए हैं । प्रथम प्रवर्ग वह था जहां दोषसिद्धि को कायम रखा गया था किंतु दंडादेश को अभिखंडित कर दिया गया था । दूसरा प्रवर्ग वह था जहां दोषसिद्धि को कायम रखा गया था, किंतु दंडादेश को पहले ही भुगत ली गई अवधि में उपांतरित कर दिया गया था । तीसरा प्रवर्ग वह था जहां दोषसिद्धि और दंडादेश दोनों को रद्द कर दिया गया था और चौथा प्रवर्ग वह था जहां दोषसिद्धि को कायम रखा गया था और मामले को उपयुक्त दंडादेश अधिनिर्णीत करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड को निर्देशित कर दिया गया था । रिपोर्ट के पैरा 28 में न्यायमूर्ति लोकुर ने चारों प्रवर्गों का सारांश दिया है । इसके अतिरिक्त पैरा 29 में अधिनियम, 2000 की धारा 20 का हवाला दिया गया है और पैरा 30 में अंततः यह निष्कर्ष निकाला गया है कि मामले पर गुणागुण के आधार पर परीक्षा किए जाने की आवश्यकता है और यदि किशोर अपराध का दोषी पाया जाता है, तो उसे दंडित किए बिना नहीं छोड़ा जा सकता किंतु अधिनियम, 2000 के उपबंधों पर विचार करते हुए दंडादेश के प्रश्न को किशोर न्याय बोर्ड पर छोड़ दिया जाना चाहिए । न्यायमूर्ति लोकुर की रिपोर्ट के पैरा 28, 29 और 30 को उद्धृत करना उचित होगा जो निम्न प्रकार से है :–

> "28. उपरोक्त चर्चा का सारतत्व यह है कि एक समूह के मामलों में तो इस न्यायालय ने किशोर को उसके द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध का दोषी पाया किंतु उसे वस्तुतः बिना दंडित किए छोड़ा गया चूंकि इस न्यायालय ने उस पर अधिनिर्णीत दंडादेश को अभिखंडित कर दिया था । मामलों के दूसरे समूह में, इस न्यायालय ने मामले के तथ्यों के आधार पर यह दृष्टिकोण अपनाया कि किशोर को उसके द्वारा किए गए अपराध के लिए निरोध में बिताई गई कुछ अवधि के द्वारा पर्याप्त रूप से दंडित किया गया है । तीसरे समूह के मामलों में, इस न्यायालय ने संपूर्ण मामले को अधिकारिता वाले किशोर न्याय बोर्ड को किशोर की निर्दोषिता या दोषिता तथा यदि किशोर दोषी पाया जाता है तो अधिनिर्णीत किए जाने वाले दंडादेश पर विचार करने के लिए विप्रेषित किया था । चौथे समूह के मामलों में, इस न्यायालय ने मामले की गुणागुण के आधार पर परीक्षा की और किशोर को

अपराध का दोषी पाए जाने के पश्चात् दंडादेश अधिनिर्णीत करने के प्रश्न पर मामले को अधिकारिता वाले किशोर न्याय बोर्ड को विप्रेषित कर दिया था ।

29. हमारी राय में, अपनाई जाने वाली प्रक्रिया किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 20 में अधिकथित है । यह निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "**20. लंबित मामलों के बारे में विशेष उपबंध** – इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, किसी क्षेत्र के न्यायालय में, उस तारीख को जबकि यह अधिनियम उस क्षेत्र में प्रवृत्त होता है, लंबित किशोर विषयक सब कार्यवाहियां उस न्यायालय में इस प्रकार चालू रखी जाएगी, मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया है और यदि न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि किशोर ने अपराध किया है तो वह उस निष्कर्ष को अभिलिखित करेगा और उस किशोर के बारे में कोई दंडादेश करने के बजाय उस किशोर को बोर्ड को भेज देगा, जो उस किशोर के बारे में आदेश इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार ऐसे करेगा मानो इस अधिनियम के अधीन जांच पर उसका समाधान हो गया है कि किशोर ने वह अपराध किया है :
>
> परंतु बोर्ड किसी ऐसे उपयुक्त और विशेष कारण से जो आदेश में वर्णित किया जाए, मामले का पुनर्विलोकन कर सकेगा और ऐसे किशोर के हित में उपयुक्त आदेश पारित कर सकेगा ।
>
> **स्पष्टीकरण** – किसी न्यायालय में विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर से संबंधित सभी लंबित मामलों में जिनके अंतर्गत विचारण, पुनरीक्षण, अपील या कोई अन्य दांडिक कार्यवाहियां भी हैं, ऐसे किशोर की किशोरावस्था का अवधारण धारा 2 के खंड (ठ) के निबंधनानुसार किया जाएगा भले ही किशोर इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख को या उससे

पहले किशोर न रहा हो और इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख को या उससे पहले किशोर न रहा हो और इस अधिनियम के उपबंध ऐसे लागू होंगे मानो उक्त उपबंध सभी प्रयोजनों के लिए और सभी तात्विक समयों पर प्रवर्तन में थे जब ऐसा अभिकथित अपराध किया गया था ।

30. यह स्पष्ट है कि किशोर के मामले की परीक्षा गुणागुण के आधार पर की जानी है । यदि यह पाया जाता है कि किशोर कारित किए गए अभिकथित अपराध का दोषी है, तो उसे दंडित किए बिना नहीं छोड़ा जा सकता । तथापि, विधि के अनुसार उसे दिए जाने वाले दंड को किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के अधीन गठित किशोर न्याय बोर्ड पर छोड़ दिया जाना चाहिए । किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 20 की यह स्पष्ट अपेक्षा है । दूसरे शब्दों में, अश्विनी कुमार सक्सेना [(2012) 9 एस. सी. सी. 750] वाले मामले का अनुसरण किया जाना चाहिए ।"

23. न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर ने न्यायमूर्ति लोकुर द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त करते हुए अपनी अनुपूरक राय में भी मामले के इस पहलू पर विचार किया और रिपोर्ट के पैरा 82 में यह मत व्यक्त किया कि जहां तक दोषसिद्धि का संबंध है, इस न्यायालय द्वारा इसकी परीक्षा की जा सकती है, तथापि, दंडादेश के भाग पर अधिनियम, 2000 के अधीन ग्राह्य फायदा दिया जाना चाहिए । रिपोर्ट के पैरा 82 को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"82. उपरोक्त को सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह दर्शित होता है कि यद्यपि किसी व्यक्ति द्वारा किसी भी प्रक्रम पर और किसी न्यायालय के समक्ष किशोर होने का दावा किया जा सकता है, ऐसे न्यायालय द्वारा उस व्यक्ति को अपराध किए जाने की तारीख को किशोर पाए जाने पर समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर को बोर्ड के पास भेजना होगा और पारित किया गया दंडादेश, यदि कोई है, प्रभावी नहीं माना जाएगा । यह सुझाव देने वाला कोई

उपबंध नहीं है कि जिस न्यायालय के समक्ष किशोर होने का दावा किया गया है, वह दोषसिद्धि को इस आधार पर अपास्त करे कि अपराध किए जाने की तारीख को वह किशोर था और इसलिए यह सामान्य दांडिक न्यायालय द्वारा विचारणीय नहीं है । एक बात की अभिव्यक्ति दूसरे का अपवर्जन है, के सिद्धांत को लागू करते हुए यह अभिनिर्धारित करना युक्तियुक्त होगा कि जहां तक विधि में बोर्ड को निर्देश किए जाने की अपेक्षा की गई है, निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि को अपास्त करने के लिए न्यायालयों से अपेक्षा करने के आवश्यक विधान मंडल के किसी आशय को निहितार्थ रूप से अपवर्जित करता है । यह प्रतीत होता है कि संसद् किशोर को दिए गए कारावास के दंडादेश को अपास्त करने और विशेष रूप से उपबंध किए बिना या विवक्षित रूप से संबंधित न्यायालय से दोषसिद्धि को बदलने या अपास्त करने की अपेक्षा करते हुए बोर्ड को निर्देश करने में संतुष्ट थी । शायद यही कारण है कि इस न्यायालय ने अनेक विनिश्चयों में संबंधित न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि में हस्तक्षेप किए बिना किशोर को दिए गए दंडादेश को रद्द कर दिया और इस तरह अधिनियम की धारा 7-क(2) के आदेश का पालन किया है ।"

24. **महेश** बनाम **राजस्थान राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने दोषसिद्धि की पुष्टि की थी । तथापि, अधिरोपित दंडादेश को भुगत ली गई अवधि के लिए उपांतरित किया गया था । पूर्वोक्त निर्णय में **जितेन्द्र** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित की गई विधि का अवलंब लिया गया था । यह विवाद्यक विरचित करने के पश्चात् कि क्या विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित की गई दोषसिद्धि की विधिमान्यता/शुद्धता को कायम रखा जा सकता है, इस न्यायालय ने निर्णय के पैरा सं. 4, 5 और 6 में यथोचित विचार किया । उसके पश्चात् न्यायपीठ ने दोषसिद्धि के गुणागुण पर विचार किया और इसे पैरा सं. 7 में कायम रखा । रिपोर्ट के पैरा सं.

---

[1] 2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन 3655.

4 से 7 को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"4. पूर्वोक्त तथ्यों में, हमारे समक्ष वर्तमान अपीलों में अवधारण के लिए दो प्रश्न उद्भूत होते हैं । पहला विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई दोषसिद्धि की विधिमान्यता/शुद्धता के संबंध में है और दूसरा, यदि दोषसिद्धि को बनाए रखा जाना है तो दंड/दंडादेश का उचित उपाय क्या होना चाहिए और क्या इसे इस न्यायालय द्वारा अधिरोपित किया जाना चाहिए या मामले को अधिनियम, 2000 की धारा 20 के उपबंधों के अनुसार किशोर न्याय बोर्ड को प्रतिप्रेषित किया जाना चाहिए ।

5. इस संबंध में विधि की स्थिति कुछ हद तक अस्थिर है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा जितेन्द्र सिंह **उर्फ** बब्बू सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य वाले मामले में उल्लेख और विचार किया गया है, जिसमें पैरा 24 से 27 में चार प्रवर्गों के मामलों को रखा गया जहां इस न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाया गया था । शुद्ध परिणाम का सारांश पूर्वोक्त रिपोर्ट के पैरा 28 में दिया गया है जिसमें उक्त रिपोर्ट के पूर्ववर्ती पैराओं में किए गए वर्गीकरण के ब्यौरे को स्पष्ट किया गया है । अत: उक्त रिपोर्ट के पैरा 28 का विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख किया जाना आवश्यक है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है –

'28. उपरोक्त चर्चा का सारतत्व यह है कि एक समूह के मामलों में इस न्यायालय ने किशोर को उसके द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध का दोषी पाया किंतु उसे वस्तुत: बिना दंडित किए छोड़ा गया चूंकि इस न्यायालय ने उस पर अधिनिर्णीत दंडादेश को अभिखंडित कर दिया था । मामलों के दूसरे समूह में, इस न्यायालय ने मामले के तथ्यों के आधार पर यह दृष्टिकोण अपनाया कि किशोर को उसके द्वारा किए गए अपराध के लिए विरोध में बिताई गई कुछ अवधि के द्वारा पर्याप्त रूप से दंडित किया गया है । तीसरे समूह के मामलों में, इस न्यायालय ने संपूर्ण मामले को

अधिकारिता वाले किशोर न्याय बोर्ड को किशोर की निर्दोषिता या दोषिता तथा यदि किशोर दोषी पाया जाता है तो अधिनिर्णीत किए जाने वाले दंडादेश पर विचार करने के लिए विप्रेषित किया था । चौथे समूह के मामलों में, इस न्यायालय ने मामले की गुणागुण के आधार पर परीक्षा की और किशोर को अपराध का दोषी पाए जाने के पश्चात् दंडादेश अधिनिर्णीत करने के प्रश्न पर मामले को अधिकारिता वाले किशोर न्याय बोर्ड को विप्रेषित कर दिया था ।'

6. हमारे सुविचारित मत में, लगभग दो दशक पहले हुई घटना के संबंध में दोषसिद्धि की विधिमान्यता इन अपीलों में विनिश्चित की जानी चाहिए और दिए गए दंड/दंडादेश सहित संपूर्ण कार्यवाहियों में केवल इस आधार पर हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए कि अभियुक्त-अपीलार्थी अभिकथित अपराध किए जाने की तारीख को किशोर थे । न्यायिक दृष्टिकोण सदैव यथार्थवादी होना चाहिए और वास्तविकताओं से कुछ संबंध होना चाहिए । अत: हम उन संभावित दृष्टिकोणों में से एक को अपनाते हैं जो इस न्यायालय द्वारा ऊपर उल्लिखित चार प्रवर्गों के मामलों में भारतीय दंड संहिता के उपबंधों के अधीन अभियुक्त-अपीलार्थियों की दोषसिद्धि की शुद्धता की परीक्षा करने के लिए अपनाया गया है ।

7. इस संबंध में, अभिलेख पर की सामग्री का परिशीलन करने के पश्चात् हम विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि किए गए दृष्टिकोण से भिन्न दृष्टिकोण अपनाने के लिए किसी प्रकार का कोई आधार नहीं पाते हैं । तद्नुसार, अभियुक्त-अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 323, 324, 325, 427, 455 के अधीन दोषसिद्धि की पुष्टि की जाती है ।"

25. **सत्य देव** उर्फ **भूरे** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विनिश्चयाधार और

[1] (2020) 10 एस. एस. सी. 555.

विधिक स्थिति का अनुसरण करते हुए इस न्यायालय ने दोषसिद्धि को कायम रखा और अपीलार्थी को दिए गए आजीवन कारावास के दंडादेश को अपास्त करने के पश्चात् यह निदेश दिया गया था कि जेल प्राधिकारी अपीलार्थी को सात दिन के भीतर किशोर न्याय बोर्ड के समक्ष पेश करेंगे और उसके पश्चात् किशोर न्याय बोर्ड उसमें के अपीलार्थी के संबंध में निरोध और अभिरक्षा के संबंध में समुचित आदेश पारित करेगा ।

26. हम **राजू** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय को भी निर्दिष्ट कर सकते हैं, जिसमें न्यायमूर्ति मोहन एम. शांतानागौडर ने अपनी ओर से, न्यायमूर्ति एन. वी. रमना (जैसे कि वे उस समय थे) और न्यायमूर्ति इंदिरा बनर्जी ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया और चूंकि अपीलार्थी ने पहले ही लगभग छह वर्ष का कारावास भुगत लिया था किंतु जमानत पर छोड़ा गया था, जमानत बंधपत्र उन्मोचित कर दिए गए और अपीलार्थी के विरुद्ध सभी कार्यवाहियों को समाप्त घोषित कर दिया गया था ।

27. पूर्वोक्त मामले में, अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय के समक्ष किशोर होने का अभिवाक् नहीं किया था, तथापि, ऐसा अभिवाक् उच्च न्यायालय के समक्ष किया गया था किंतु उसे नामंजूर कर दिया गया था । तथापि, इस न्यायालय ने इस न्यायालय के रजिस्ट्रार (न्यायिक) द्वारा एक जांच कराई गई, जिसने उसे 18 वर्ष से कम आयु का पाया । इस मामले में के निर्णय में मुख्य रूप से इस विवाद्यक पर विचार किया गया था कि क्या इस न्यायालय के रजिस्ट्रार (न्यायिक) की रिपोर्ट को उच्च न्यायालय के निष्कर्ष से बढ़कर स्वीकार किया जा सकता है, जो कि भिन्न मत का था । निर्णय में इस विवाद्यक पर विचार किया गया और अंततोगत्वा यह निष्कर्ष निकाला गया कि इसे स्वीकार किया जा सकता है बशर्ते यह न्यायालय स्वयं रजिस्ट्रार (न्यायिक) की रिपोर्ट की शुद्धता का परीक्षण करे । केवल अंतिम पैरा 27 में अपील को मंजूर करते हुए उसने दोषसिद्धि, दंडादेश को अपास्त करते हुए राहत प्रदान की

---

[1] (2019) 14 एस. सी. सी. 401.

और आगे संपूर्ण कार्यवाहियों को समाप्त कर दिया । इस विवाद्यक पर कोई पूर्व चर्चा नहीं की गई है कि क्या इस तकनीकी आधार पर दोषसिद्धि को अपास्त करने की आवश्यकता थी या नहीं । दोषसिद्धि के गुणागुण पर विचार नहीं किया गया था । उक्त मामले में इस विवाद्यक पर कोई विनिश्चयाधार अधिकथित नहीं किया गया है । केवल राहत प्रदान करते हुए दोषसिद्धि को भी अपास्त कर दिया गया ।

28. **राजू** (उपर्युक्त) वाले मामले में के उपरोक्त निर्णय का अनुसरण करते हुए **अशोक कुमार मेहरा और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने उस मामले में अपीलार्थी सं. 2, जिसने किशोर होने का दावा किया था, की दोषसिद्धि और दिए गए दंडादेश को अपास्त कर दिया था । उक्त निर्णय का पैरा 14 जिसमें अनुतोष प्रदान किया गया है, यहां उद्धृत किया जाता है :–

> "पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारी यह सुविचारित राय है कि चूंकि अपीलार्थी-2 अपराध के किए जाने की तारीख को किशोर था और यद्यपि आज की तारीख तक उसने पहले ही पर्याप्त जेल का दंडादेश, भागत: विचाराधीन कैदी के रूप में और भागत: सिद्धदोष के रूप में, भुगत लिया है, फिर भी अपीलार्थी 2 द्वारा फाइल की गई अपील को मामले के गुणागुण पर विचार किए बिना और इस बाबत कोई अन्य पारिणामिक आदेश पारित किए बिना मंजूर किया जाना चाहिए, जैसा कि **राजू** (उपर्युक्त) वाले मामले में किया गया था ।"

29. यह उल्लेख करना आवश्यक होगा कि इस निर्णय में भी इस विवाद्यक के विषय में कोई चर्चा नहीं की गई है कि क्या दोषसिद्धि को अपास्त किया जाना चाहिए । यह निर्णय भी ऐसा कोई विनिश्चयाधार अधिकथित नहीं करता है कि यदि किसी किशोर के संबंध में सेशन न्यायालय द्वारा उसके समक्ष अभियुक्त द्वारा किशोर होने का दावा किए बिना विचारण किया गया है, तो दोषसिद्धि को विधि में दूषित होने

---

[1] (2019) 6 एस. सी. सी. 132.

के कारण अपास्त किया जा सकता है यदि बाद में यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अभियुक्त किशोर था ।

30. उपरोक्त निर्णय किशोर न्याय अधिनियम, 1986 या अधिनियम, 2000 के अंतर्गत आने वाले अपराध के संबंध में हैं । अब हम अधिनियम, 2015 के अधीन उपबंधों पर संक्षिप्त रूप से चर्चा करेंगे । अधिनियम, 2015 की धारा 9 को पहले ही इस निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में उद्धृत किया गया है । अधिनियम, 2015 की धारा 9 की उपधारा (3) के अनुसार, जो न्यायालय यह पाता है कि जिस व्यक्ति ने अपराध किया है वह ऐसा अपराध किए जाने की तारीख को बालक था तो बालक को समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजेगा और न्यायालय द्वारा पारित किए गए दंडादेश, यदि कोई है, के बारे में यह समझा जाएगा कि उसका कोई प्रभाव नहीं है । इसमें विनिर्दिष्ट रूप से या यहां तक कि विवक्षित रूप से भी यह उपबंध नहीं किया गया है कि किसी न्यायालय द्वारा ऐसे व्यक्ति के संबंध में, जिसे बाद में मामले के निपटारे के पश्चात् किशोर या बालक होना पाया गया है, अभिलिखित की गई दोषसिद्धि भी अपना प्रभाव खो देगी बल्कि यह केवल दंडादेश ही है यदि न्यायालय द्वारा पारित किया गया हो जिसका कोई प्रभाव नहीं समझा जाएगा ।

31. एक और कारण है कि क्यों सेशन न्यायालय द्वारा किए गए विचारण और अभिलिखित दोषसिद्धि को विधि में दूषित अभिनिर्धारित नहीं किया जाएगा यद्यपि विचारण किए गए व्यक्ति को बाद में बालक अभिनिर्धारित किया गया हो ।

32. विधान-मंडल का आशय ऐसे व्यक्ति को, जिसे अपराध करने की तारीख को बालक होना घोषित किया जाता है, केवल उसके दंडादेश के भाग के संबंध में फायदा देना था । यदि दोषसिद्धि को भी निष्प्रभावी बनाया जाना था तो या तो नियमित सेशन न्यायालय की अधिकारिता को न केवल अधिनियम, 2015 की धारा 9 के अधीन बल्कि अधिनियम, 2015 की धारा 25 के अधीन भी पूरी तरह से अपवर्जित कर दिया गया होता और इसकी बजाय यह उपबंध किया गया होता कि यह निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने पर कि विचारण किया जाने वाला व्यक्ति एक

बालक है, तो लंबित विचारण को भी किशोर न्याय बोर्ड को भेजा जाना चाहिए और यह भी कि ऐसे विचारण को अकृत और शून्य अभिनिर्धारित किया जाना होगा । इसकी बजाय, अधिनियम, 2015 की धारा 25 के अधीन स्पष्ट रूप से यह उपबंध किया गया है कि अधिनियम, 2015 के आरंभ की तारीख को किसी बोर्ड या न्यायालय के समक्ष लंबित कोई कार्यवाही उस बोर्ड या न्यायालय में इस प्रकार जारी रखी जाएगी मानो यह अधिनियम अधिनियमित नहीं किया गया था । धारा 25 को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "**25. लंबित मामलों के बारे में विशेष उपबंध** – इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी विधि का उल्लंघन करने वाला अभिकथित या विधि का उल्लंघन करते हुए पाए गए किसी बालक के बारे में इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख को किसी बोर्ड या न्यायालय के समक्ष लंबित चली कार्यवाहियां उस बोर्ड या न्यायालय में वैसे ही चालू रहेंगी मानो यह अधिनियम अधिनियमित नहीं किया गया है ।"

33. अधिनियम, 2015 की धारा 9 और साथ ही अधिनियम, 2000 की धारा 7क, जो अधिनियम, 2015 की धारा 9 के तदरूप है, में अधिकथित कानूनी उपबंधों पर विचार करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि दोषसिद्धि के गुणागुण का परीक्षण किया जा सकता है और जो दोषसिद्धि अभिलिखित की गई थी उसे केवल इस कारण विधि में दूषित होना अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि जांच किशोर न्याय बोर्ड द्वारा नहीं की गई थी । यह केवल दंड का प्रश्न है जिसके लिए अधिनियम, 2015 के उपबंधों को लागू किया जाएगा और अधिनियम, 2015 के अधीन अनुज्ञेय दंडादेश से अधिक दंडादेश को तद्नुसार अधिनियम, 2015 के उपबंधों के अनुसार संशोधित किया जाना होगा । अन्यथा, जिस अभियुक्त ने कोई जघन्य अपराध किया है और जिसने विचारण न्यायालय के समक्ष किशोर होने का दावा नहीं किया है, वह दंडित किए बिना चला जाएगा । यह अधिनियम, 2015 में उपबंधित उद्देश्य और आशय भी नहीं है । अधिनियम, 2015 के अधीन किशोर के अधिकारों और स्वतंत्रता से संबंधित उद्देश्य केवल यह सुनिश्चित करना है

कि क्या विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर को कम दंडादेश देकर और अधिनियम, 2015 के अधीन परिभाषित किसी संस्थान में उसके ठहरने के दौरान उसके कल्याण के लिए अन्य सुविधाओं का निदेश देकर मुख्य धारा में लाया जा सकता है ।

34. उपरोक्त चर्चा और पूर्वोक्त निर्णयों तथा उपरोक्त निर्णयों में निर्दिष्ट किए गए बहुत-सारे अन्य निर्णयों द्वारा यथा अधिकथित विधि की स्थिति को ध्यान में रखते हुए हम **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त), **महेश** (उपर्युक्त) और **सत्य देव** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण का अनुमोदन करते हैं ।

35. ऊपर अभिलिखित सभी कारणों से निम्नलिखित आदेश दिया जाता है :

अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखा जाता है ; तथापि, दंडादेश को अपास्त किया जाता है । इसके अतिरिक्त, चूंकि अपीलार्थी वर्तमान में 20 वर्ष से अधिक का होगा इसलिए उसे किशोर न्याय बोर्ड या किसी अन्य बाल देख-रेख सुविधा या संस्थान में भेजने की कोई आवश्यकता नहीं है । अपीलार्थी न्यायिक अभिरक्षा में है । उसे तुरंत छोड़ दिया जाएगा । आक्षेपित निर्णय को पूर्वोक्त सीमा तक उपांतरित किया जाता है ।

36. दोनों अपीलों को भागत: मंजूर किया जाता है ।

37. लंबित आवेदनों, यदि कोई हैं, का निपटारा हो जाता है ।

अपीलें भागत: मंजूर की गईं ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 351

नंद लाल और अन्य

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

[2015 की दांडिक अपील सं. 1421 और इसके साथ 2017 की दांडिक अपील सं. 1470 और 2023 की दांडिक अपील सं. 775-776]

14 मार्च, 2023

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई, न्यायमूर्ति विक्रम नाथ और न्यायमूर्ति संजय करोल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – अभियुक्तों और शिकायतकर्ता के परिवार के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी होना – दो भागों में घटित घटना के प्रथम भाग में शिकायतकर्ता और एक अभियुक्त (सं. 11) के बीच हुई कहा-सुनी में इस अभियुक्त को गंभीर क्षतियां पहुंचना और फिर अभियुक्त और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा अभिकथित रूप से शिकायतकर्ता के परिवार पर हमला किया जाना जिसमें उसके पिता की मृत्यु और अन्य को क्षतियां पहुंचना – निचले न्यायालयों द्वारा दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में यह पाए जाने पर कि घटना के प्रथम भाग में अभियुक्त को पहुंचीं गंभीर क्षतियों के संबंध में उसके द्वारा पुलिस को सूचित किए जाने के बावजूद अभियोजन पक्ष द्वारा घटना घटने की उत्पत्ति को छिपाया गया हो और उक्त अभियुक्त को गंभीर क्षतियां पहुंचने के पश्चात् उसके द्वारा दूसरी घटना में भाग लेना संभव प्रतीत न होने के कारण उसे संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा तथा शिकायतकर्ता पक्ष द्वारा दूसरी घटना के बारे में लगभग 4 घंटे के विलंब के पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने, न तो पुलिस की मर्ग रिपोर्ट में और न ही पंचनामा रिपोर्ट में सह-अभियुक्तों के नामों का उल्लेख होने के कारण पक्षकारों के बीच पूर्व दुश्मनी होने और सभी साक्षियों के हितबद्ध होने तथा उनके साक्ष्य की

स्वतंत्र साक्ष्य द्वारा संपुष्टि न होने के कारण सह-अभियुक्तों को मिथ्या रूप से फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता और उन्हें भी संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इन अपीलों के तथ्यों के अनुसार तारीख 3 नवंबर, 2006 की रात्रि में लगभग 7.30 बजे नरेश कुमार, अभियुक्त सं. 11 ने आत्माराम (अभि. सा. 1) पर हमला किया था । उक्त हमले के पश्चात्, आत्माराम (अभि. सा. 1) रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना, सुहेला गया । उसके पश्चात्, नरेश कुमार, अभियुक्त सं. 11 ने अन्य अभियुक्तों के साथ, जो घातक आयुधों से लैस थे, एक विधिविरुद्ध जमाव का गठन किया, मृतक कार्तिकरम के घर में घुसे और उस पर तथा मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) और खोम लाल (अभि. सा. 9) पर हमला किया । उक्त हमले के परिणामस्वरूप, कार्तिकरम की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । उसके पश्चात्, मंगतीन बाई (अभि. सा. 2), खोम लाल (अभि. सा. 9) और पूर्णिमा बाई (अभि. सा. 13) क्रमश: मृतक कार्तिकरम की पत्नी, पुत्र और पुत्रवधु पड़ोसियों बलीराम साहू (अभि. सा. 3) और जीवन लाल साहू (अभि. सा. 6) के साथ एक ट्रैक्टर में बालोदा बाजार एक डाक्टर के पास गए जिसने तब तक उनका उपचार करने से इनकार कर दिया जब तक कि पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज नहीं की जाती । उसके पश्चात्, एक जीप भाड़े पर ली गई और वे पुलिस थाना, सुहेला गए । मौखिक रिपोर्ट (प्रदर्श पी-9) के आधार पर एक मर्ग रिपोर्ट (प्रदर्श पी-10) रजिस्ट्रीकृत की गई । तत्पश्चात्, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर कमल सिंह (अभि. सा. 14), अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण किया । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, बालोदा बाजार के समक्ष 12 अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया । चूंकि मामला अनन्य रूप से सेशन न्यायाधीश द्वारा विचारणीय था, इसलिए इसे सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया । विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने तारीख 24 मई, 2008 के निर्णय और आदेश द्वारा सभी अभियुक्त व्यक्तियों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई अपील को

खारिज कर दिया गया । इसे चुनौती देते हुए उच्चतम न्यायालय के समक्ष चार अपीलें फाइल की गईं । अपीलों के लंबित रहने के दौरान एक अभियुक्त (सं. 12) की मृत्यु हो गई और इसलिए उक्त अपील का इस न्यायालय के तारीख 13 जनवरी, 2023 के आदेश द्वारा उपशमन हो गया । 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6134-6135 से उद्भूत अपीलों में अपीलार्थियों तुलसी जांगड़े, सुरेश जांगड़े, दिनेश जांगड़े, रुपेश जांगड़े, चन्नु जांगड़े और चरनु जांगड़े तथा 2017 की दांडिक अपील सं. 1470 में अपीलार्थी चरणदास जांगड़े को उनके दंडादेश पूरा होने पर पहले ही रिहा किया जा चुका है । इसलिए इस न्यायालय का सरोकार 2015 की दांडिक अपील सं. 1421 में अपीलार्थियों और 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6134-6135 से उद्भूत अपीलों में अपीलार्थियों में से एक नरेश कुमार से था । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार द्वारा यह एक विनिर्दिष्ट प्रतिरक्षा ली गई है कि जब वह शराब पीने के पश्चात् आ रहा था, तो उस पर आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा हमला किया गया था । उसके पश्चात्, वह अभियुक्त सं. 7 चरनु जांगड़े, अभियुक्त सं. 12 पलटन जांगड़े, अश्विनी और विनोद के साथ पुलिस थाने गया, उसके पश्चात् उसे चिकित्सीय उपचार के लिए रेफर कर दिया गया था । अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार की क्षतियों पर विचार करते हुए यह मुश्किल प्रतीत होता है कि वह घटना के दूसरे भाग में भाग ले सकता था । नरेश कुमार को चिकित्सा परीक्षण के लिए चिकित्सा अधिकारी के पास भेजते हुए ज्ञापन में यह उल्लिखित है कि अभियुक्त सं. 11 ने पुलिस को सूचित किया था कि लगभग 8.30 बजे अपराह्न में उस पर आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा हमला किया गया था । निर्विवाद रूप से, अभियोजन पक्ष ने उक्त घटना के विषय में सूचना को छिपाया है । अभियोजन पक्ष ने आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को भी छिपाया है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष ने घटना की वास्तविक उत्पत्ति को छिपाने का प्रयत्न किया है । मामले के इस पहलू के साथ अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार

को पहुंची क्षतियों को स्पष्ट न करने की बात को ध्यान में रखते हुए हमारा यह सुविचारित मत है कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार संदेह के फायदे का हकदार है । अब अन्य तीन अभियुक्तों अर्थात् अभियुक्त सं. 8 नंद लाल, अभियुक्त सं. 9 भगवत और अभियुक्त सं. 10 रामदुलार की अपील पर आते हैं । उनके मामले पर विचार करने के लिए हमें प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में विलंब को ध्यान में रखना होगा । निस्संदेह, हर मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं होगा । यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा । वर्तमान मामले में, जैसी कि इसमें ऊपर पहले ही चर्चा की गई है, यह मान लिया जाए कि घटना 8.30 बजे अपराह्न में घटी थी और क्षतिग्रस्त व्यक्ति 10.00-11.00 बजे अपराह्न के बीच बालोदा बाजार में थे, और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि बालोदा बाजार से सुहेला पुलिस थाने के बीच की दूरी 15 किलो मीटर है, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में 4.00 घंटे के विलंब से अभियोजन के पक्षकथन की असलियत पर गंभीर संदेह पैदा होता है । यह बात और अधिक स्पष्ट हो जाती है चूंकि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार ने, किसी भी दशा में, घटना के बारे में पुलिस को 11.45 बजे अपराह्न से पूर्व सूचित किया था । आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा उस पर किए गए हमले के संबंध में उसके द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को छिपाए जाने, साथ ही आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार के विरुद्ध दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को छिपाया जाना संदेह को बढ़ाता है । निर्विवाद रूप से, वर्तमान मामले में अभि. सा. 2 और 9 क्षतिग्रस्त साक्षी हैं । इसलिए उनकी मौजूदगी को विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता । तथापि, जैसा कि इसमें ऊपर पहले ही मत व्यक्त किया गया है, साबित पूर्ववर्ती दुश्मनी की दशा में मिथ्या फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता । वर्तमान मामले में, यह देखना होगा कि अभियुक्त सं. 12 पलटन जांगड़े के संपूर्ण परिवार को आलिप्त किया गया है । यद्यपि अभि. सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में अभियुक्तों की शनाख्त की थी और उनको नामित किया था, तो भी उसने यह कहा था कि हालांकि

वह अभियुक्त व्यक्तियों के नातेदारों को पहचानती है किंतु उसे उनके नाम स्मरण नहीं हैं । इसलिए पलटन के संपूर्ण परिवार को फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता । जैसा कि इसमें ऊपर पहले ही चर्चा की गई है, नंद लाल, भगवत और रामदुलार के नामों का मर्ग रिपोर्ट में उल्लेख नहीं है, जो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने से पूर्व दर्ज की गई थी, इसी प्रकार उनके नाम मृत्युसमीक्षा पंचनामा और घटनास्थल पंचनामा में भी नहीं पाए गए हैं । समकालीन दस्तावेजों में उनके नामों का उल्लेख न होने की परिस्थिति के साथ प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब को ध्यान में रखते हुए, उक्त अभियुक्तों को मिथ्या रूप से फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय के मत में, इन अभियुक्तों की पूर्ण रूप से हितबद्ध साक्षियों के मौखिक साक्ष्य के आधार पर, पर्याप्त संपुष्टि के बिना, दोषसिद्धि संधार्य नहीं होगी । अभियोजन पक्ष ने बलीराम साहू (अभि. सा. 3), इंद्र साहू (अभि. सा. 5), जीवन लाल (अभि. सा. 6) और बुधेराम (अभि. सा. 8) की परीक्षा की है, उनमें से किसी ने भी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है । अभि. सा. 2, 9 और 13 के अनुसार, वह साक्षी बलीराम साहू (अभि. सा. 3) था जिसने क्षतिग्रस्त व्यक्तियों को बालोदा बाजार ले जाने के लिए टैक्टर की व्यवस्था की थी तथापि, उसने यह कथन किया है कि यद्यपि मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) घटना के बारे में उसे सूचित करने के लिए उसके मकान पर आई थी, किंतु उसने उसे यह नहीं बताया था कि अभियुक्तों में से किस अभियुक्त ने मृतक और क्षतिग्रस्त व्यक्तियों पर हमला किया था । इस न्यायालय के मत में, इसलिए उक्त अपीलार्थी भी संदेह के फायदे के हकदार होंगे । (पैरा 24, 29, 30, 34, 35 और 36)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2007]	(2007) 13 एस. सी. सी. 501 : **रमेश बाबूराव देवास्कर और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	31

[2006] (2006) 9 एस. सी. सी. 57 :
नागरथिनम और अन्य बनाम **राज्य**
(पुलिस निरीक्षक द्वारा प्रतिनिधित्व) ; 27

[2005] (2005) 10 एस. सी. सी. 498 :
रामाशीष रे बनाम **जगदीश सिंह** ; 28

[2003] (2003) 9 एस. सी. सी. 426 :
मध्य प्रदेश राज्य बनाम **मिश्रीलाल (मृत)**
और अन्य ; 27

[1991] (1991) 2 (सप्ली.) एस. सी. सी. 396 :
राजस्थान राज्य बनाम **माधो और एक अन्य** ; 27

[1976] (1976) 4 एस. सी. सी. 394 :
लक्ष्मी सिंह और अन्य बनाम **बिहार राज्य** ; 26

[1957] [1957] एस. सी. आर. 981 :
वेडिवेलू थेवर बनाम **मद्रास राज्य** । 32

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक अपील सं. 1421 (इसके साथ 2017 की दांडिक अपील सं. 1470 और 2023 की दांडिक अपील सं. 775-776).

2008 की दांडिक अपील सं. 529 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्वारा तारीख 11 नवंबर, 2014 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री रंजीत बी. मराड़, शैलेन्द्र तिवारी (न्याय-मित्र), विकास उपाध्याय, (सुश्री) अंकिता कश्यप, लक्ष्मी एन. कैमल, (सुश्री) आशु जैन, देवेश कुमार शर्मा और अरुण पूमुल्ली

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री सुमीन सोढ़ी, ध्रुव वधवा और देवाशीष तिवारी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. आर. गवई ने दिया ।

न्या. गवई – 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6134-6135 में इजाजत दी गई ।

2. इन अपीलों में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अपीलों को खारिज करते हुए और द्वितीय अपर सेशन न्यायाधीश, बालोदा बाजार, जिला रायपुर, छत्तीसगढ़ (जिसे इसमें इसके पश्चात् "विचारण न्यायालय" कहा गया है) द्वारा अपीलार्थियों को अन्य अभियुक्तों के साथ भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "भारतीय दंड संहिता" की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के साथ-साथ अन्य अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए और उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए तारीख 24 मई, 2008 को पारित किए गए निर्णय की पुष्टि करते हुए तारीख 11 नवंबर, 2014 को पारित किए गए निर्णय और आदेश को चुनौती दी गई है ।

3. अभियोजन का वृत्तांत, जैसा कि अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री से समझा जा सकता है, संक्षेप में इस प्रकार है :

तारीख 3 नवंबर, 2006 की रात्रि में लगभग 7.30 बजे नरेश कुमार, अभियुक्त सं. 11 ने आत्माराम (अभि. सा. 1) पर हमला किया था । उक्त हमले के पश्चात्, आत्माराम (अभि. सा. 1) रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना, सुहेला गया । उसके पश्चात्, नरेश कुमार, अभियुक्त सं. 11 ने अन्य अभियुक्तों के साथ, जो घातक आयुधों से लैस थे, एक विधिविरुद्ध जमाव का गठन किया, मृतक कार्तिकरम के घर में घुसे और उस पर तथा मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) और खोम लाल (अभि. सा. 9) पर हमला किया । उक्त हमले के परिणामस्वरूप, कार्तिकरम की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । उसके पश्चात्, मंगतीन बाई (अभि. सा. 2), खोम लाल (अभि. सा. 9) और पूर्णिमा बाई (अभि. सा. 13) क्रमश: मृतक कार्तिकरम की पत्नी, पुत्र और पुत्रवधु पड़ोसियों बलीराम साहू (अभि. सा. 3) और जीवन लाल साहू (अभि. सा. 6) के साथ एक ट्रैक्टर में बालोदा बाजार एक डाक्टर के पास गए जिसने तब

तक उनका उपचार करने से इनकार कर दिया जब तक कि पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज नहीं की जाती । उसके पश्चात्, एक जीप भाड़े पर ली गई और वे पुलिस थाना, सुहेला गए । मौखिक रिपोर्ट (प्रदर्श पी-9) के आधार पर एक मर्ग रिपोर्ट (प्रदर्श पी-10) रजिस्ट्रीकृत की गई । तत्पश्चात्, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई ।

4. उक्त प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार पर कमल सिंह (अभि. सा. 14), अन्वेषण अधिकारी ने अन्वेषण किया । अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, बालोदा बाजार के समक्ष 12 अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया । चूंकि मामला अनन्य रूप से सेशन न्यायाधीश द्वारा विचारणीय था, इसलिए इसे सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया ।

5. विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने तारीख 24 मई, 2008 के निर्णय और आदेश द्वारा सभी अभियुक्त व्यक्तियों को पूर्वोक्त अनुसार दोषसिद्ध किया । उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई अपील को तारीख 11 नवंबर, 2014 के निर्णय और आदेश द्वारा खारिज कर दिया । इसे चुनौती देते हुए इस न्यायालय के समक्ष चार अपीलें क्रमश: अभियुक्त सं. 8 से 10 नंद लाल, भगवत और राम दुलार द्वारा 2015 की दांडिक अपील सं. 1421, अभियुक्त सं. 12 पलटन जांगड़े द्वारा 2015 की दांडिक अपील सं. 1422, क्रमश: अभियुक्त सं. 5 से 7 चरणदास जांगड़े, छन्नु जांगड़े और चरनु जांगड़े द्वारा 2017 की दांडिक अपील सं. 1470 और 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6134-6135 जो क्रमश: अभियुक्त सं. 1 से 4 और 11 तुलसी जांगड़े, सुरेश जांगड़े, दिनेश जांगड़े, रुपेश जांगड़े और नरेश कुमार द्वारा फाइल की गई थी, से उद्भूत अपीलें फाइल की गईं ।

6. अपीलों के लंबित रहने के दौरान पलटन जांगड़े, अभियुक्त सं. 12 की मृत्यु हो गई और इसलिए उक्त अपील, जो 2015 की दांडिक अपील सं. 1422 है, का इस न्यायालय के तारीख 13 जनवरी, 2023 के आदेश द्वारा उपशमन हो गया । 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक)

सं. 6134-6135 से उद्भूत अपीलों में अपीलार्थियों तुलसी जांगड़े, सुरेश जांगड़े, दिनेश जांगड़े, रुपेश जांगड़े, चन्नु जांगड़े और चरनु जांगड़े तथा 2017 की दांडिक अपील सं. 1470 में अपीलार्थी चरणदास जांगड़े को उनके दंडादेश पूरा होने पर पहले ही रिहा किया जा चुका है । इसलिए हमारा सरोकार 2015 की दांडिक अपील सं. 1421 में अपीलार्थियों और 2019 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं. 6134-6135 से उद्भूत अपीलों में अपीलार्थियों में से एक नरेश कुमार से है ।

7. हमने अभियुक्त सं. 8 से 18 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री विकास उपाध्याय, विद्वान् न्याय-मित्र श्री रंजीत बी. मराड़ और प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सुमीर सोढी को सुना ।

8. श्री उपाध्याय ने दलील दी कि अभियुक्त सं. 8 से 10 अर्थात् नंद लाल, भगवत और रामदुलार के नामों का मर्ग पंचनामा, मृत्यु-समीक्षा पंचनामा और घटनास्थल पंचनामा जैसे किसी भी समकालीन दस्तावेज में उल्लेख नहीं किया गया था । उन्होंने दलील दी कि जबकि सभी अन्य अभियुक्तों के नामों का पूर्वोक्त दस्तावेजों में विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख किया गया था, इन दस्तावेजों में अभियुक्त सं. 8 से 10 के नामों का कोई उल्लेख नहीं है । पहली बार प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में इन तीन अभियुक्तों के नाम आए थे । विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि यद्यपि घटना तारीख 3 नवंबर, 2006 को 8.30 बजे अपराह्न में घटी थी, किंतु प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिकथित रूप से तारीख 4 नवंबर, 2006 को 3.10 बजे अपराह्न में दर्ज की गई थी, जिससे यह संदेह उत्पन्न होता है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक गढ़ा गया दस्तावेज है और मूल प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभियोजन पक्ष द्वारा छिपा दिया गया है । उन्होंने यह भी दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण में अत्यधिक विलंब को भी अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है । विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि सभी तीनों साक्षी अर्थात् मंगतीन बाई (अभि. सा. 2, खोम लाल (अभि. सा. 9) और पूर्णिमा बाई (अभि. सा. 13) हितबद्ध साक्षी हैं । यह भी दलील दी गई

कि इन तीनों साक्षियों का साक्ष्य असंगत भी है । अत: विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि दोषसिद्धि पूरी तरह से ऐसे हितबद्ध साक्षियों के आधार पर की गई थी, जिनका परिसाक्ष्य निश्चायक और भरोसेमंद नहीं है तथा उनके परिसाक्ष्य किसी संपुष्टि के बिना संधार्य नहीं है ।

9. श्री उपाध्याय ने दलील दी कि किसी भी दशा में सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् मंगतीन बाई (अभि. सा. 2), खोम लाल (अभि. सा. 9) और पूर्णिमा बाई (अभि. सा. 13) ने अपीलार्थियों के विरुद्ध केवल मिले-जुले अभिकथन किए हैं और वर्तमान अपीलार्थियों पर कोई विनिर्दिष्ट स्पष्ट कृत्य करने का उल्लेख नहीं है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि घटना रात्रि में घटी थी और यह भी स्वीकार किया गया है कि बिजली गई हुई थी । इसलिए सभी तीनों साक्षियों का यह परिसाक्ष्य कि उन्होंने चंद्रमा की रोशनी और एक दीये की रोशनी में घटना देखी थी, विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता । आगे यह दलील दी गई कि चूंकि अभि. सा. 9 ने स्वयं यह स्वीकार किया था कि वह एक अनाज के भंडार (कोठी) में छुप गया था, इसलिए यह अनधिसंभाव्य है कि उसने घटना देखी थी ।

10. श्री मराड़ ने दलील दी कि वस्तुत:, नरेश कुमार, अभियुक्त सं. 11 को गंभीर क्षतियां पहुची थीं । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 14, अन्वेषण अधिकारी ने यह स्वीकार किया है कि नरेश कुमार, अभियुक्त सं. 11 को उसके सिर, बाईं टांग के टखने और उसके दाएं हाथ की मध्यमा अंगुली पर क्षतियां थीं । उन्होंने दलील दी कि यहां तक कि विचारण न्यायालय ने भी यह पाया था कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को गंभीर क्षतियां पहुंची थीं और वह रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना, सुहेला गया था । उसने उक्त पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज की और उसके पश्चात् उसे उपचार के लिए भटापारा अस्पताल भेजा गया था । यह दलील दी गई कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को पहुंची क्षतियों के बारे में स्पष्टीकरण नहीं दिया था । यह दलील दी गई कि किसी भी दशा में अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार से प्राप्त सूचना को छिपाया है । यह भी दलील दी गई कि यह अनधिसंभाव्य है कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार ऐसी गंभीर

क्षतियां पहुंचने के पश्चात् मृतक और अभि. सा. 2, 9 और 13 के विरुद्ध हमले में भाग ले सकता था ।

11. इसके विपरीत, श्री सोढी ने दलील दी कि सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने स्पष्ट रूप से सभी अपीलार्थियों को अपराध में आलिप्त किया है । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2 और 9 ने विनिर्दिष्ट रूप से वर्तमान अपीलार्थियों को आलिप्त किया है । यह दलील दी गई कि सभी तीनों साक्षी सीधे-साधे ग्रामवासी हैं । अत: केवल इस कारण कि उनके साक्ष्य में कुछ विसंगतियां हैं, उनके परिसाक्ष्यों को नामंजूर करने का आधार नहीं हो सकता है । उन्होंने दलील दी कि केवल इस कारण कि साक्षी हितबद्ध साक्षी हैं, उनके परिसाक्ष्यों को त्यक्त करने का आधार नहीं हो सकता है, यदि उनका साक्ष्य भरोसेमंद, विश्वसनीय, और निश्चायक पाया जाता है । श्री सोढी ने दलील दी कि किसी भी दशा में ये साक्षी क्षतिग्रस्त साक्षी हैं और इसलिए घटनास्थल पर उनकी मौजूदगी को विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता । यह भी दलील दी गई कि केवल इस कारण कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में कुछ विलंब हुआ है, यह अभियोजन के पक्षकथन को त्यक्त करने का आधार नहीं हो सकता है जिसे युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है ।

12. श्री सोढी ने इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का अवलंब लेते हुए दलील दी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की सहायता से भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि के लिए जो सुसंगत है वह यह है कि क्या अभियुक्त विधिविरुद्ध जमाव का सदस्य था न कि क्या उसने अपराध में वास्तव में सक्रिय भाग लिया था या नहीं । उन्होंने यह भी दलील दी कि अभियुक्त के शरीर पर की क्षतियों को मात्र स्पष्ट न करना अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं होगा ।

13. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों की सहायता से हमने अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री की परीक्षा की है ।

14. चिकित्सीय साक्ष्य से यह विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता है

कि मृतक कार्तिकरम की मृत्यु मानववध है । अभि. सा. 2 और 9 को पहुंची क्षतियों को भी अपीलार्थियों द्वारा गंभीरतापूर्वक विवादग्रस्त नहीं किया गया है ।

15. अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य से यह देखा जा सकता है कि घटना दो भागों में घटित हुई थी । पहला भाग अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार द्वारा आत्माराम (अभि. सा. 1) पर हमला करने के संबंध में है, जबकि दूसरा भाग अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा मृतक और अभि. सा. 2, 9 और 13 पर हमला करने के संबंध में है । आत्माराम (अभि. सा. 1) ने अपने साक्ष्य में कहा था कि तारीख 3 नवंबर, 2006 को जब वह अपने मकान में था, तब अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार उसके मकान पर आया और उसे गालियां देने लगा । अभि. सा. 1 ने कथन किया था कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार शराब के नशे में था । अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार ने अभि. सा. 1 को कहा कि वह उसके मकान पर एक शिकायत करने के लिए गया था और उसने उसे शराब पिलाते रहने के पश्चात् 5000/- रुपए की रकम छीन ली । उसके पश्चात्, अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार अपने हाथ में ली हुई लाठी से अभि. सा. 1 पर हमला करने लगा । इसके पश्चात्, अभि. सा. 1 ने यह कथन किया कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार उसके मकान से यह धमकी देते हुए गया था कि वह अपने परिवार के अन्य सदस्यों के साथ वापस आएगा । आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा यह भी कथन किया गया कि उसके पश्चात् वह अपनी पत्नी, पुत्र और पुत्री के साथ रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए सुहेला पुलिस थाने गया ।

16. आत्माराम (अभि. सा. 1) ने आगे यह कथन किया कि जब वह पुलिस थाने से वापस आया, तो उसका पुत्र आया और उसे बताया कि अभि. सा. 1 के पिता की हत्या कर दी गई है और अभि. सा. 1 पुन: रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने गया है । अत: यह स्पष्ट है कि अभि. सा. 1 दूसरी घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है ।

17. मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) मृतक कार्तिकरम की पत्नी है । उसने अपने साक्ष्य में यह कहा कि सभी अभियुक्त व्यक्ति उसके मकान में घुसे और उन्हें गालियां देने लगे । उसका पति टीवी वाले कमरे में

था । सभी अभियुक्त व्यक्ति उक्त टीवी वाले कमरे में उसके पति पर हमला करने लगे । उसके पश्चात्, वे दूसरे कमरे में आए जहां कोई नहीं था । उसके पुत्र ने स्वयं को एक धान कोठी में छिपा लिया था । अभियुक्त व्यक्ति वहां गए और उसके पुत्र पर हमला करने लगे । उसके पश्चात्, वह अपने पड़ोसी जीवन लाल साहू (अभि. सा. 6) को सूचित करने के लिए गई । वह और अभि. सा. 9 तथा 13 फिर एक ट्रैक्टर से बालोदा बाजार गए । वे वहां उपचार नहीं करा सके चूंकि पुलिस में कोई रिपोर्ट दर्ज नहीं की गई थी । उन्होंने वहां से एक जीप ली और सुहेला पुलिस थाने गए । वहां से उन्हें उपचार के लिए भटापारा अस्पताल ले जाया गया ।

18. मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) की प्रतिपरीक्षा में उससे यह पूछे जाने पर कि क्या वह न्यायालय में मौजूद अभियुक्त व्यक्तियों के नातेदारों को जानती है, उसने कहा कि वह उन्हें जानती है किंतु उनका नाम नहीं जानती ।

19. खोम लाल (अभि. सा. 9) मृतक कार्तिकरम का क्षतिग्रस्त पुत्र है । उसका साक्ष्य भी इसी प्रकार का है । उसने भी आत्माराम (अभि. सा. 1) से संबंधित पूर्ववर्ती घटना के बारे में साक्ष्य दिया । उसने कहा कि आत्माराम (अभि. सा. 1) के लगभग 8.30 बजे अपराह्न में पुलिस थाने जाने के पश्चात् सभी अभियुक्त व्यक्ति उसके मकान पर आए । उसने कथन किया कि सभी अभियुक्त व्यक्ति उसके पिता के कमरे में घुसे और उसके पिता पर हमला करने लगे । इसलिए वह अपने आपको छिपाने के लिए धान कोठी में चला गया । अभियुक्त व्यक्ति वहां आए और उस पर हमला किया । इस प्रकार उसे गंभीर क्षतियां पहुंचीं । उसके पश्चात्, वे उपचार के लिए बालोदा बाजार गए । तथापि, डाक्टर ने उनका उपचार करने से मना कर दिया । इसलिए वे सुहेला पुलिस थाने गए और रिपोर्ट दर्ज की । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि उसके द्वारा दर्ज की गई मर्ग रिपोर्ट में नंदलाल, भगवत और रामदुलार अर्थात् क्रमश: अभियुक्त सं. 8 से 10 का उल्लेख नहीं है । यद्यपि उसने कथन किया कि उसने पुलिस को सारा ब्योरा दिया था किंतु केवल

पुलिस ही बता सकती है कि क्यों पूर्वोक्त तीनों अपीलार्थियों के नाम इसमें नहीं हैं ।

20. पूर्णिमा (अभि. सा. 13), खोम लाल (अभि. सा. 9) की पत्नी ने भी यह कथन किया है कि आत्माराम (अभि. सा. 1) लगभग 7.00 बजे अपराह्न में रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने जा रहा था । उसने यह कथन किया है कि 8.00 बजे से 8.30 बजे अपराह्न के बीच अभियुक्त व्यक्ति अर्थात् चरणदास जांगड़े, तुलसी जांगड़े, चरनु जांगड़े, भगवत और अन्य उनके मकान पर आए जहां उन्होंने पहले उसकी सास मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) पर एक लाठी से हमला किया । उसके पश्चात् इस साक्षी ने उसी वृत्तांत को दोहराया जो मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) और खोम लाल (अभि. सा. 9) द्वारा दिया गया था ।

21. अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में दंड प्रक्रिया संहिता) की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में विनिर्दिष्ट रूप से यह कहा था कि आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा उस पर हमला किए जाने के पश्चात् उसे गंभीर क्षतियां पहुंची थीं और उसके पश्चात् वह अभियुक्त सं. 7 चरनु जांगड़े, अभियुक्त सं. 12 पलटन जांगड़े, अश्वनि और विनोद के साथ पुलिस थाने गया । जहां से उसे उपचार के लिए भटापारा अस्पताल भेजा गया था ।

22. डा. अनिता वर्मा (अभि. सा. 10) द्वारा किए गए अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार के चिकित्सा परीक्षण को भी निर्दिष्ट करना आवश्यक होगा । उसे पहुंचीं क्षतियां इस प्रकार हैं :–

- "खोपड़ी के बाएं पार्श्विक भाग पर 6 सें. मी. x 6 सें. मी. x 0.5 सें. मी. का विदीर्ण घाव ।
- पीठ, बाएं कंधे, बाईं भुजा पर लंबाई में 5 से 20 सें. मी. आकार के और चौड़ाई में 2 से 4 सें. मी. आकार के कई-सारे नील ।
- बाईं टांग पर 3 सें. मी. x 05 सें. मी. की खरोंच ।

- दाईं मध्यमा अंगुली की अंगुल्यास्थि के निकट सूजन, कोमलता और विकृति ।
- माथे पर 2 सें. मी. x 0.2 सें. मी. की खरोंच ।
- माथे के दाईं तरफ 1 सें. मी. x 0.2 सें. मी. की खरोंच ।
- दाएं टखने पर 2 सें. मी. x 0.5 सें. मी. की खरोंच ।
- बाईं पार्श्विक हड्डी का अस्थिभंग ।
- बाएं कंधे में अस्थिभंग ।
- मध्यमा अनामिका अंगुली के निकट अंगुल्यास्थि का अस्थिभंग ।
- बहिर्जंघिका के शाफ्ट का इसके संयोजन पर एक तिहाई ऊपर और एक तिहाई मध्य में अस्थिभंग ।"

23. अभि. सा. 14, अन्वेषण अधिकारी ने स्वीकार किया है कि मर्ग सूचना रिपोर्ट में नंदलाल, भगवत और रामदुलार अर्थात् क्रमश: अभियुक्त सं. 8 से 10 के नामों का उल्लेख नहीं है । अन्वेषण अधिकारी ने यह भी स्वीकार किया है कि घटनास्थल पंचनामा में भी उनके नामों का उल्लेख नहीं है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि प्रदर्श डी-9 में अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार के साथ तारीख 3 नवंबर, 2006 को 8.30 बजे अपराह्न में घटना घटने का उल्लेख है । उसने यह भी स्वीकार किया कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को उसके सिर, बाएं टांग के टखने और दाएं हाथ की मध्यमा अंगुली पर गंभीर क्षतियां थीं । उसने यह भी स्वीकार किया कि नरेश कुमार को 11.45 बजे अपराह्न में पुलिस थाने से डाक्टर के पास परीक्षण के लिए ले जाया गया था ।

24. इस प्रकार, अभि. सा. 14, अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से यह देखा जा सकता है कि पुलिस को घटना के बारे में जानकारी कम से कम तारीख 3 नवंबर, 2006 को 11.45 बजे अपराह्न से पहले ही थी । निस्संदेह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत करने में हुआ मात्र विलंब अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं होगा । प्रथम इत्तिला

रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब का प्रभाव प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न होगा । वर्तमान मामले में, स्वीकृत रूप से, अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को गंभीर क्षतियां पहुंची थीं जिनको अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है । अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार द्वारा यह एक विनिर्दिष्ट प्रतिरक्षा ली गई है कि जब वह शराब पीने के पश्चात् आ रहा था, तो उस पर आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा हमला किया गया था । उसके पश्चात्, वह अभियुक्त सं. 7 चरनु जांगड़े, अभियुक्त सं. 12 पलटन जांगड़े, अश्विनी और विनोद के साथ पुलिस थाने गया, उसके पश्चात् उसे चिकित्सीय उपचार के लिए रेफर कर दिया गया था । अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार की क्षतियों पर विचार करते हुए यह मुश्किल प्रतीत होता है कि वह घटना के दूसरे भाग में भाग ले सकता था । अभियोजन पक्ष ने आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा तथा अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार द्वारा दर्ज कराई गई पहली रिपोर्ट को छिपाया है । यदि नरेश कुमार का 11.45 बजे अपराह्न में परीक्षण किया गया था, तो पुलिस को अवश्य कम से कम 11.00 बजे अपराह्न में घटना के बारे में कुछ न कुछ जानकारी रही होगी । इसलिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में कम से कम 4 घंटे का विलंब है ।

25. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की इन अंतर्वस्तुओं पर विश्वास करते हुए कि घटना लगभग 8.30 बजे अपराह्न में घटी थी और क्षतिग्रस्त व्यक्ति लगभग 10.00-11.00 बजे अपराह्न में बालोदा बाजार पहुंचे थे जहां उन्हें सूचित किया गया था कि जब तक वे रिपोर्ट दर्ज नहीं कराते उनका उपचार नहीं किया जा सकता, इसलिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में लगभग 4 से 5 घंटे के अतिरिक्त विलंब को स्पष्ट नहीं किया गया है । बालोदा बाजार और सुहेला पुलिस थाने के बीच की दूरी लगभग 15 किलोमीटर है । अभिलेख पर यह आया है कि दोनों स्थानों को जोड़ने के लिए बारहमासी चलने वाली सड़क है । इसलिए अधिक से अधिक सुहेला पुलिस थाने से बालोदा बाजार पहुंचने में लगभग 30-40 मिनट लगेंगे । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में चार घंटे के इस विलंब को कतई स्पष्ट नहीं किया गया है ।

26. हम पहले अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को पहुंची क्षतियों को

स्पष्ट न करने के संबंध में विवाद्यक पर विचार करेंगे । **लक्ष्मी सिंह और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में, जो मामला भी भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि से उद्भूत हुआ था, इस न्यायालय को अभियुक्त को पहुंची क्षतियों को स्पष्ट न करने के विवाद्यक पर विचार करना था । इस न्यायालय ने इस विवाद्यक पर पूर्ववर्ती निर्णयों को निर्दिष्ट करने के पश्चात् यह मत व्यक्त किया :–

> "12. ..... हमें यह प्रतीत होता है कि हत्या के मामले में अभियुक्त को लगभग घटना के समय पर या लड़ाई-झगड़े के दौरान पहुंची क्षतियों को स्पष्ट न करना एक अति महत्वपूर्ण परिस्थिति है जिससे न्यायालय निम्नलिखित निष्कर्ष निकाल सकता है कि :–
>
> > '(1) अभियोजन पक्ष ने घटना की उत्पत्ति और आरंभ को छिपाया है और इस प्रकार सत्य वृत्तांत प्रस्तुत नहीं किया है;
> >
> > (2) साक्षी, जिन्होंने अभियुक्त के शरीर पर क्षतियां मौजूद होने की बात से इनकार किया है, एक अत्यधिक तात्विक बिंदु पर झूठ बोल रहे हैं और इसलिए उनका साक्ष्य अविश्वसनीय है;
> >
> > (3) यदि प्रतिरक्षा पक्ष का ऐसा वृत्तांत है जिसमें अभियुक्त के शरीर पर पहुंची क्षतियों को स्पष्ट किया गया है तो यह बात अभियोजन के पक्षकथन पर संदेह करने के लिए अधिसंभाव्य हो जाती है ।'
>
> अभियोजन पक्ष की ओर से अभियुक्त के शरीर पर पहुंची क्षतियों को स्पष्ट करने में चूक वहां अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है जहां साक्ष्य में हितबद्ध या विद्वेषी साक्षियों का साक्ष्य समाविष्ट हो या जहां प्रतिरक्षा पक्ष ऐसा वृत्तांत देता है जो अभियोजन पक्ष द्वारा

---

[1] (1976) 4 एस. सी. सी. 394.

दिए गए वृत्तांत के मुकाबले अधिसंभाव्य हो । प्रस्तुत मामले में, जब यह अभिनिर्धारित किया जाए, जो अवश्य किया जाना चाहिए, कि अपीलार्थी दशरथ सिंह को गंभीर क्षतियां पहुंची थीं जिनको अभियोजन पक्ष द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है, तब न्यायालय के लिए अभि. सा. 1 से 4 और 6 के साक्ष्य पर विशिष्ट रूप से तब विश्वास करना कठिन होगा जब इन साक्षियों में से कुछ ने यह कहते हुए झूठ बोला है कि उन्होंने अभियुक्त के शरीर पर कोई क्षति नहीं देखी थी । इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि न तो सेशन न्यायाधीश और न ही उच्च न्यायालय ने अभियोजन पक्षकथन में प्रकट होने वाली इस महत्वपूर्ण खामी या कमी पर सम्यक् रूप से विचार किया था । हम यह भी कहना चाहेंगे कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा गुजरात राज्य **बनाम** बाई फातिमा [(1975) 2 एस. सी. सी. 7 = 1975 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 384] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, ऐसे मामले हो सकते हैं जहां अभियोजन पक्ष द्वारा ऐसी क्षतियों को स्पष्ट न करने से अभियोजन के पक्षकथन पर प्रभाव न पड़े । यह सिद्धांत स्पष्ट रूप से उन मामलों पर लागू होगा जहां अभियुक्त को पहुंची क्षतियां गौण और सरसरी हैं या जहां साक्ष्य इतना स्पष्ट और निश्चायक, इतना स्वतंत्र और अहितबद्ध, इतना अधिसंभाव्य, संगत और भरोसेमंद है कि इससे अभियोजन पक्ष की ओर से क्षतियों को स्पष्ट करने में चूक का दूर-दूर तक प्रभाव दिखाई नहीं देता है । तथापि, वर्तमान मामला निश्चित रूप से ऐसा मामला नहीं है, और इसलिए उच्च न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन में की इस गंभीर कमी को अविश्वसनीय आधारों पर अस्वीकार करके गलती की है ।"

27. **राजस्थान राज्य** बनाम **माधो और एक अन्य**[1]**, मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **मिश्रीलाल (मृत) और अन्य**[2] और **नागरथिनम और अन्य**

---

[1] (1991) 2 (सप्ली.) एस. सी. सी. 396.

[2] (2003) 9 एस. सी. सी. 426.

बनाम **राज्य (पुलिस निरीक्षक द्वारा प्रतिनिधित्व)**[1] वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा क्षतियों को स्पष्ट न करने के विषय में इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया गया है ।

28. निर्विवाद रूप से, वर्तमान मामले में अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को पहुंची क्षतियों को गौण या सरसरी नहीं समझा जा सकता । साक्षी भी हितबद्ध साक्षी हैं क्योंकि वे मृतक के घनिष्ठ नातेदार हैं । अभिलेख पर यह आया है कि सरपंच के निर्वाचन को लेकर दोनों परिवारों के बीच पूर्ववर्ती दुश्मनी थी । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **रामाशीष रे** बनाम **जगदीश सिंह**[2] वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है, पूर्ववर्ती दुश्मनी एक दुधारी तलवार होती है । एक ओर, इससे हेतु का पता चल सकता है और दूसरी ओर, मिथ्या रूप से फंसाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता ।

29. हमने इसमें पहले ही अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को पहुंची क्षतियों को देखा है । खोम लाल द्वारा तारीख 4 नवंबर, 2006 को 3.15 बजे पूर्वाह्न में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने से बहुत पहले पुलिस अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को चिकित्सीय परीक्षण के लिए ले गई थी । नरेश कुमार को चिकित्सा परीक्षण के लिए चिकित्सा अधिकारी के पास भेजते हुए ज्ञापन में यह उल्लिखित है कि अभियुक्त सं. 11 ने पुलिस को सूचित किया था कि लगभग 8.30 बजे अपराह्न में उस पर आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा हमला किया गया था । निर्विवाद रूप से, अभियोजन पक्ष ने उक्त घटना के विषय में सूचना को छिपाया है । अभियोजन पक्ष ने आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को भी छिपाया है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष ने घटना की वास्तविक उत्पत्ति को छिपाने का प्रयत्न किया है । मामले के इस पहलू के साथ अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार को पहुंची क्षतियों को स्पष्ट न करने की बात को ध्यान में रखते हुए हमारा यह सुविचारित मत है कि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार संदेह के फायदे का हकदार है ।

---

[1] (2006) 9 एस. सी. सी. 57.

[2] (2005) 10 एस. सी. सी. 498.

30. अब अन्य तीन अभियुक्तों अर्थात् अभियुक्त सं. 8 नंद लाल, अभियुक्त सं. 9 भगवत और अभियुक्त सं. 10 रामदुलार की अपील पर आते हैं । उनके मामले पर विचार करने के लिए हमें प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में विलंब को ध्यान में रखना होगा । निस्संदेह, हर मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब अभियोजन के पक्षकथन के लिए घातक नहीं होगा । यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा । वर्तमान मामले में, जैसी कि इसमें ऊपर पहले ही चर्चा की गई है, यह मान लिया जाए कि घटना 8.30 बजे अपराह्न में घटी थी और क्षतिग्रस्त व्यक्ति 10.00-11.00 बजे अपराह्न के बीच बालोदा बाजार में थे, और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि बालोदा बाजार से सुहेला पुलिस थाने के बीच की दूरी 15 किलोमीटर है, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने में 4.00 घंटे के विलंब से अभियोजन के पक्षकथन की असलियत पर गंभीर संदेह पैदा होता है । यह बात और अधिक स्पष्ट हो जाती है चूंकि अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार ने, किसी भी दशा में, घटना के बारे में पुलिस को 11.45 बजे अपराह्न से पूर्व सूचित किया था । आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा उस पर किए गए हमले के संबंध में उसके द्वारा दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को छिपाए जाने, साथ ही आत्माराम (अभि. सा. 1) द्वारा अभियुक्त सं. 11 नरेश कुमार के विरुद्ध दर्ज कराई गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को छिपाया जाना संदेह को बढ़ाता है ।

31. हम **रमेश बाबूराव देवास्कर और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों को उपयोगी रूप से निर्दिष्ट कर सकते हैं :–

> "19. इस प्रकार के मामले में, दो समूहों के बीच दुश्मनी की बात स्वीकार की जाती है । इस प्रकार की स्थिति में, क्या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट समय-पूर्व की थी या नहीं, इस पर भी गंभीर विचार किया जाना आवश्यक है । इस प्रकृति के मामले में, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक मूल्यवान साक्ष्य होती है, भले ही यह एक सारभूत

[1] (2007) 13 एस. सी. सी. 501.

साक्ष्य न हो । असम्यक् विलंब के बिना प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने की बात पर जोर देने का कारण उन परिस्थितियों जिनमें अपराध किया गया था, अभियुक्तों के नाम, उनके द्वारा निभाई गई भूमिकाओं, आयुध जो प्रयुक्त किए गए थे और साथ ही प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के नामों के संबंध में शीघ्रता से जानकारी अभिप्राप्त करना है । जहां पक्षकारों के बीच तनातनी हो और ऐसे दृष्टांत हों जिनके परिणामस्वरूप एक या अन्य की मृत्यु हुई हो, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराना सदैव महत्वपूर्ण समझा जाता है ।"

जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक मूल्यवान साक्ष्य है भले ही यह सारभूत साक्ष्य न हो । तुरंत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने से अनेक व्यक्तियों को फंसाने के विषय में संदेह दूर हो जाता है, विशिष्ट रूप से जब मामला दो समूहों के बीच लड़ाई का हो । जब पक्षकारों के बीच तनातनी हो, तुरंत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराना अभियोजन के पक्षकथन को विश्वसनीय बनाता है ।

32. निर्विवाद रूप से, वर्तमान मामला हितबद्ध साक्षियों के साक्ष्य पर आधारित है । निस्संदेह, उनमें से दो क्षतिग्रस्त साक्षी हैं । **वेडिवेलू थेवर** बनाम **मद्रास राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है :–

"11. ..... अत: हमारी राय में, यह एक सुदृढ़ और भली-भांति स्थिर विधि का नियम है कि किसी तथ्य को साबित या नासाबित करने के लिए न्यायालय का सरोकार आवश्यक साक्ष्य की गुणवत्ता से है न कि मात्रा से । साधारणतया, इस संदर्भ में मौखिक साक्ष्य को तीन प्रवर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् :

(1) पूर्णत: विश्वसनीय ।

(2) पूर्णत: अविश्वसनीय ।

---

[1] [1957] एस. सी. आर. 981.

(3) न तो पूर्णत: विश्वसनीय और न ही पूर्णत: अविश्वसनीय ।

12. सबूत के प्रथम प्रवर्ग में, न्यायालय को दोनों में से किसी प्रकार के अपने निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए – वह किसी एकमात्र साक्षी के परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध या दोषमुक्त कर सकता है, यदि यह साक्षी भर्त्सना या हितबद्धता, अक्षमता या कूटरचित साक्ष्य के संदेह से ऊपर पाया जाता है । दूसरे प्रवर्ग में, न्यायालय को अपने निष्कर्ष पर पहुंचने में समान रूप से कोई कठिनाई नहीं है । तीसरे प्रवर्ग के मामलों में ही न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए और विश्वसनीय परिसाक्ष्य, प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक, द्वारा तात्विक विशिष्टियों में संपुष्टि के लिए प्रत्याशा की जानी चाहिए.....।"

33. इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि "पूर्णत: विश्वसनीय" साक्षी के प्रवर्ग में अभियोजन पक्ष के लिए ऐसे किसी साक्षी के परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि के लिए जोर देने में कोई कठिनाई नहीं है । "पूर्णत: अविश्वसनीय" साक्षी की दशा में, पुन:, कोई कठिनाई नहीं है । क्योंकि किसी "पूर्णत: अविश्वसनीय" साक्षी द्वारा दिए गए मौखिक परिसाक्ष्य के आधार पर कोई दोषसिद्धि नहीं की जा सकती है । वास्तविक कठिनाई तीसरे प्रवर्ग के साक्ष्य में आती है जो भागत: विश्वसनीय और भागत: अविश्वसनीय है । ऐसे मामलों में, न्यायालय से सतर्क रहने और अनाज से भूसे को अलग करने तथा प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक विश्वसनीय परिसाक्ष्य से इसकी और संपुष्टि की ईप्सा करने की अपेक्षा की जाती है ।

34. निर्विवाद रूप से, वर्तमान मामले में अभि. सा. 2 और 9 क्षतिग्रस्त साक्षी हैं । इसलिए उनकी मौजूदगी को विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता । तथापि, जैसा कि इसमें ऊपर पहले ही मत व्यक्त किया गया है, साबित पूर्ववर्ती दुश्मनी की दशा में मिथ्या फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता । वर्तमान मामले में, यह देखना होगा कि अभियुक्त सं. 12 पलटन जांगड़े के संपूर्ण परिवार को आलिप्त किया गया है । यद्यपि अभि. सा. 2 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में

अभियुक्तों की शनाख्त की थी और उनको नामित किया था, तो भी उसने यह कहा था कि हालांकि वह अभियुक्त व्यक्तियों के नातेदारों को पहचानती है किंतु उसे उनके नाम स्मरण नहीं हैं । इसलिए पलटन के संपूर्ण परिवार को फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता ।

35. जैसा कि इसमें ऊपर पहले ही चर्चा की गई है, नंद लाल, भगवत और रामदुलार के नामों का मर्ग रिपोर्ट में उल्लेख नहीं है, जो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने से पूर्व दर्ज की गई थी, इसी प्रकार उनके नाम मृत्युसमीक्षा पंचनामा और घटनास्थल पंचनामा में भी नहीं पाए गए हैं । समकालीन दस्तावेजों में उनके नामों का उल्लेख न होने की परिस्थिति के साथ प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने में विलंब को ध्यान में रखते हुए, उक्त अभियुक्तों को मिथ्या रूप से फंसाए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है । हमारे मत में, इन अभियुक्तों की पूर्ण रूप से हितबद्ध साक्षियों के मौखिक साक्ष्य के आधार पर, पर्याप्त संपुष्टि के बिना, दोषसिद्धि संधार्य नहीं होगी ।

36. अभियोजन पक्ष ने बलीराम साहू (अभि. सा. 3), इंद्र साहू (अभि. सा. 5), जीवन लाल (अभि. सा. 6) और बुधेराम (अभि. सा. 8) की परीक्षा की है, उनमें से किसी ने भी अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया है । अभि. सा. 2, 9 और 13 के अनुसार, वह साक्षी बलीराम साहू (अभि. सा. 3) था जिसने क्षतिग्रस्त व्यक्तियों को बालोदा बाजार ले जाने के लिए टैक्टर की व्यवस्था की थी तथापि, उसने यह कथन किया है कि यद्यपि मंगतीन बाई (अभि. सा. 2) घटना के बारे में उसे सूचित करने के लिए उसके मकान पर आई थी, किंतु उसने उसे यह नहीं बताया था कि अभियुक्तों में से किस अभियुक्त ने मृतक और क्षतिग्रस्त व्यक्तियों पर हमला किया था । हमारे मत में, इसलिए उक्त अपीलार्थी भी संदेह के फायदे के हकदार होंगे ।

37. अत: हमारा सुविचारित मत है कि अपीलार्थी नंद लाल, भगवत, रामदुलार और नरेश कुमार संदेह के फायदे के हकदार हैं ।

38. परिणामत:, हम निम्नलिखित आदेश पारित करते हैं :

(i) ये अपीलें मंजूर की जाती हैं;

(ii) छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 11 नवंबर, 2014 को पारित निर्णय और आदेश तथा विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 24 मई, 2008 को पारित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाते हैं; और

(iii) अपीलार्थी आरोपित आरोपों से दोषमुक्त किए जाते हैं और यदि उनकी किसी अन्य मामले में आवश्यकता नहीं है, तुरंत स्वतंत्र किए जाने का निदेश दिया जाता है ।

39. लंबित आवेदन (आवेदनों), यदि कोई है, का निपटारा हो जाएगा ।

40. इस निर्णय से विलग होने से पूर्व, हमें अभियुक्त सं. 8 से 10 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री विकास उपाध्याय और प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री सुमीर सोढी द्वारा की गई मूल्यवान सहायता के लिए हमारी सराहना को अभिलेख पर लाना चाहिए । विद्वान् काउंसेल श्री रजनीत बी. मराड़, जिसे उच्चतम न्यायालय विधिक सेवाएं प्राधिकरण के माध्यम से अभियुक्त सं. 11 के लिए न्याय-मित्र के रूप में नियुक्त किया गया था, द्वारा किए गए श्रमसाद्धय प्रयासों का विशेष उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 375

रावसाहेब उर्फ **रावसाहेबगौड़ा आदि**

बनाम

कर्नाटक राज्य

[2010 की दांडिक अपील सं. 1109-1110]

16 मार्च, 2023

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई, न्यायमूर्ति विक्रमनाथ और
न्यायमूर्ति संजय करोल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – अधिकांश अभियोजन साक्षियों का पक्षद्रोही हो जाना – एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर आठ अभियुक्तों की दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां घटनास्थल पर अभियुक्तों की मौजूदगी को विवादग्रस्त न किया गया हो, प्रत्यक्षदर्शी साक्षी की विस्तारपूर्वक प्रतिपरीक्षा करने के बावजूद वह अपने इस परिसाक्ष्य पर अडिग रहा हो कि अभियुक्तों ने मृतक को पकड़ लिया था और उसे गंभीर क्षतियां कारित की थीं और उसके द्वारा प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में स्पष्ट साक्ष्य देने के कारण उसका परिसाक्ष्य भरोसेमंद, विश्वासोत्पादक और विश्वसनीय होने पर ऐसे एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जा सकता है क्योंकि साक्ष्य की मात्रा नहीं गुणवत्ता मायने रखती है इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा सभी अभियुक्तों के विरुद्ध अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने पर अभियुक्तों की दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

इन अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं कि अभियुक्तों द्वारा मृतक की दिन-दहाड़े हत्या कर दी गई थी । उक्त घटना के संबंध में उसी दिन पुलिस थाने में एक रिपोर्ट दर्ज की गई । अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण करते हुए शव को बरामद किया और इसे मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा । शव पर गंभीर प्रकृति की बहुत-सारी क्षतियां धारदार आयुधों से कारित की गई थी । उक्त अपराध के संबंध में विचारण न्यायालय ने

सभी आठ अभियुक्तों को हत्या के अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । अपील में उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि की और अपील खारिज कर दी । निचले न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय के समक्ष एकमात्र मुद्दा जो विचार के लिए उद्भूत हुआ, वह यह था कि जब अन्य साक्षियों ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन न किया हो तो क्या किसी एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के परिसाक्ष्य के आधार पर आठ अभियुक्तों को आजीवन कारावास भुगतने के लिए अनुज्ञात किया जा सकता है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य के प्रतिपरीक्षा वाले भाग का परिशीलन करने पर अखंडनीय रूप से प्रकट होता है कि अभियुक्त घटनास्थल पर झाड़ियों में छिपे हुए थे । यह साक्षी, विस्तारपूर्वक प्रतिपरीक्षा किए जाने के बावजूद, इस आशय के अपने परिसाक्ष्य पर अडिग रहा कि अभियुक्तों ने मृतक को पकड़ लिया था और उसके शरीर पर गंभीर क्षतियां कारित की थी । अभियुक्तों ने भागने से उसे रोकने के लिए मिर्ची पाउडर का एक आयुध के रूप में प्रयोग किया था और उसे जमीन पर धक्का दे दिया था । यद्यपि यह साक्षी इस बारे में स्पष्ट नहीं था कि अभियुक्तों में से किसने मृतक पर उसके नीचे गिर जाने के पश्चात् हमला किया था किंतु इसके पश्चात् उसने उनमें से प्रत्येक द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में स्पष्ट रूप से कथन किया है । अभि. सा. 7 ने, पक्षद्रोही हो जाने के बावजूद, अपने अविवादग्रस्त परिसाक्ष्य में घटनास्थल पर अभियुक्त सं. 1, 2 और 3 के मौजूद होने का कथन किया है । घटना के तुरंत पश्चात् वे गोलाभावी गांव की ओर भागते हुए देखे गए थे । इसके अतिरिक्त, उसने मृतक को कई क्षतियां पहुंचे हुए देखा था और उसके शरीर पर मिर्ची पाउडर भी पाया था । यह न्यायालय यहां केवल यह अभिलिखित कर सकता है कि लाक्कप्पा सिद्धापुर (अभि. सा. 9) और अशोक मारेगुड्डी (अभि. सा. 19) यद्यपि न्यायालय में पक्षद्रोही हो गए थे, तो भी उन्होंने वास्तव में पुलिस के समक्ष इसी प्रकार के कथन किए थे जिनसे उनका सामना कराया गया था और यह तथ्य किसी भी स्थिति में अन्य अभियोजन साक्षियों के माध्यम से

साबित किया गया है । पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए, एक मात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अभि. सा. 1 के संबंध में प्रश्नों का उत्तर उसका परिसाक्ष्य भरोसेमंद, विश्वास करने योग्य, सत्य और विश्वसनीय होने के कारण सकारात्मक दिया जाता है । मजिस्ट्रेट के पास प्रथम इत्तिला रिपोर्ट पहुंचने में विलंब के संबंध में विधि की स्थिर स्थिति यह है कि प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की बात को प्रदर्शित न करने की दशा में प्रत्येक विलंब मामले के लिए घातक नहीं है । वर्तमान मामले में, यद्यपि न्यायालय के समक्ष इस सिद्धांत का अवलंब लिया गया है किंतु अभियुक्तों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को दर्शित करने के लिए कोई दलील नहीं दी गई है । पर्याप्त समर्थन रहित कथन न्यायालय को प्रभावित नहीं कर सकते । यहां तक कि संबंधित मजिस्ट्रेट के पास प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने में विलंब भी अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास न करने का कारण नहीं हो सकता है । यह उपबंधों का अननुपालन करने का मामला नहीं है और समान रूप से विलंब इतना अत्यधिक नहीं है जिससे कोई संदेह पैदा हो सके । तारीख 13 अगस्त, 2004 को 4.45 बजे अपराह्न में रजिस्ट्रीकृत की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को तुरंत प्रेषित किया गया था और यह 1.15 बजे पूर्वाह्न में प्राप्त हो गई थी । केवल इस कारण कि अभियुक्त सं. 2 से 4 के अतिरिक्त किसी अन्य अभियुक्त से कोई बरामदगी नहीं हुई थी, इसका यह अर्थ नहीं है कि अन्य अभियुक्त घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे; केवल इस कारण कि कई-सारे साक्षी पक्षद्रोही हो गए थे, इस बात से स्वयमेव अभि. सा. 1 के साक्ष्य को नामंजूर करने के लिए आधार नहीं मिलता है; और यह कि अभि. सा. 1 मृतक का भाई है और इसलिए एक हितबद्ध तथा एक संयोगी साक्षी है, अमान्य दलीलें हैं । इसी पृष्ठभूमि में हम अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री नागमुथु एस. और डा. के. राधाकृष्णन की दलीलों में कोई बल नहीं पाते हैं कि एकमात्र साक्ष्य के आधार पर 8 व्यक्तियों की दोषसिद्धि न्यायोचित नहीं है, विशिष्ट रूप से जब प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में उसके परिसाक्ष्य में कोई अस्पष्टता नहीं है । शिकायत लिखने में अभि. सा. 24 की भूमिका को केवल इस कारण नकारात्मक नहीं लिया जा सकता क्योंकि वह एक अधिवक्ता था और इसलिए उसने पूरा ब्योरा देने की बात पर ध्यान

दिया था । अभि. सा. 1 ने अपनी शिकायत में यह कहा है कि वह पढ़ना-लिखना नहीं जानता है । जिस व्यक्ति को शिकायत लिखने के लिए अभि. सा. 24 को बुलाने की जिस व्यक्ति की भूमिका समझी जा सकती है या अभि. सा. 1 के निदेशों पर या पुलिस द्वारा तैयार किए गए टिप्पणों के आधार पर शिकायत लिखने में विसंगति, उस सीमित समयांतराल को ध्यान में रखते हुए, इतनी अचंभित करने वाली नहीं है, जिसमें ये सारे क्रियाकलाप हुए थे क्योंकि विद्वान् सेशन न्यायाधीश के दृष्टिकोण के संबंध में विशेष इजाजत लेकर की गई इन अपीलों में आग्रह किए गए आधार से विश्वास पैदा होता है । यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष के पक्षकथन की उत्पत्ति डगमगा गई है या संदेहास्पद हो जाती है । शिकायत अभिकथित रूप से एक अधिवक्ता (अभि. सा. 24) द्वारा लिखी गई थी न कि पुलिस कार्मिकों की सहायता से याची द्वारा । क्या इससे अभियोजन के पक्षकथन पर संदेह उत्पन्न होता है ? इस न्यायालय के सुविचारित मत में, कोई संदेह उत्पन्न नहीं होता है । क्योंकि प्रतिरक्षा पक्ष ने घटनास्थल पर अपनी मौजूदगी को स्वीकार किया है और स्वतंत्र साक्षियों ने प्रत्येक अभियुक्त को विनिर्दिष्ट भूमिका के लिए उत्तरदायी ठहराया है । एक हत्या कारित की गई है ऐसा दोनों निचले न्यायालयों द्वारा असंदिग्ध और समवर्ती रूप से अभिनिर्धारित किया गया है । इसके पश्चात् विशेष परिस्थितियों की विद्यमानता या न्यायालयों द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण, जिसको उन्होंने चुनौती देने की ईप्सा की है, के विपरीत कोई समान रूप से तथ्यों संबंधी अधिसंभाव्य वृत्तांत को सिद्ध करना इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों पर है । प्राथमिक दलील यह दी गई कि एकमात्र साक्षी के साक्ष्य का अवलंब लेकर कुल मिलाकर 8 लोगों (दो की मृत्यु हो जाने पर उनके विरुद्ध कार्यवाहियों का उपशमन हो जाने पर अब 6) को दोषसिद्ध करना बड़ी बात है । इस न्यायालय द्वारा विद्वान् काउंसेल से इस बारे में पूछे गए एक विनिर्दिष्ट प्रश्न पर कि अभि. सा. 1 की सत्यता को अधिक्षिप्त करने के लिए क्या प्रश्न उठा सकते हैं । इसका उत्तर यह दिया गया कि कई सारे बाह्य कारकों के साथ-साथ अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्यों को देखते हुए इस साक्षी की विश्वसनीयता को ध्वस्त करने के लिए तत्व मौजूद हैं – जो दलील इस न्यायालय के विचार से हस्तक्षेप करने योग्य नहीं हैं । न तो अभियुक्तों की संख्या

और न ही उनकी मौजूदगी को विवादग्रस्त किया गया है, इसलिए यह न्यायालय विधि की दृष्टि से यह अभिनिर्धारित नहीं कर सकता कि अभियुक्तों को निचले न्यायालयों द्वारा गलत रूप से दोषसिद्ध किया है । (पैरा 12, 13, 20, 21, 22, 23 और 24)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2023]	2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन 158 : **राम गोपाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	17.7
[2022]	(2022) 6 एस. सी. सी. 52 : **करण सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	17.2, 23
[2022]	2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 1313 : **चोटकु** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	16
[2022]	2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 57 : **गीता देवी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	17.9
[2022]	2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 150 : **राजेश यादव** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	25
[2021]	(2021) 6 एस. सी. सी. 116 : **गुरुदत्त पाठक** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	17.9
[2021]	(2021) 5 एस. सी. सी. 283 : **कलामणि टेक्स** बनाम **पी. बालासुब्रमण्यन** ;	17.10
[2020]	(2020) 6 एस. सी. सी. 378 : **ओमबीर सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	17.6
[2019]	(2019) 7 एस. सी. सी. 711 : **जगदीश** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	23
[2019]	(2019) 13 एस. सी. सी. 653 : **राजस्थान राज्य** बनाम **मदान** ;	26
[2018]	(2018) 6 एस. सी. सी. 591 : **भास्करराव** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	25

[2018] (2018) 6 एस. सी. सी. 610 :
सतपाल सिंह बनाम **हरियाणा राज्य** ; 17.7

[2016] (2016) 10 एस. सी. सी. 537 :
भगवान जगन्नाथ मरकद बनाम
महाराष्ट्र राज्य ; 17.2, 17.4, 26

[2016] (2016) 2 एस. सी. सी. 607 :
राजस्थान राज्य बनाम **दाउद खान** ; 17.6

[2013] (2013) 14 एस. सी. सी. 434 :
रोहतास कुमार बनाम **हरियाणा राज्य** ; 17.2, 23

[2011] (2011) 9 एस. सी. सी. 479 :
मृणाल दास बनाम **त्रिपुरा राज्य** ; 17.1

[2011] (2011) 7 एस. सी. सी. 421 :
भजन सिंह उर्फ हरभजन सिंह बनाम
हरियाणा राज्य ; 20

[2005] (2005) 9 एस. सी. सी. 195 :
हरबंश कौर बनाम **हरियाणा राज्य** ; 25

[2003] (2003) 11 एस. सी. सी. 231 :
साधुराम बनाम **राजस्थान राज्य** ; 17.3

[1994] (1994) 5 एस. सी. सी. 188 :
मेहराज बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 17.6

[1989] (1989) 1 एस. सी. सी. 437 :
लालजी बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 17.8

[1984] (1984) 4 एस. सी. सी. 116 :
शरद बिरधीचंद सारदा बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 17.10

[1980] (1980) 4 एस. सी. सी. 425 :
मरुदानल अगस्ती बनाम **केरल राज्य** ; 16

[1979] (1979) 1 एस. एस. सी. 355 :
गोपाल रेड्डी बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 17.5

[1976] (1976) 1 एस. सी. सी. 434 :
करुणाकरण बनाम **तमिलनाडु राज्य** ; 17.3, 23

[1965] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 202 :
मशाल्ती बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 17.8, 24

[1955] ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 807 :
एटले बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** । 17.9

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2010 की दांडिक अपील सं. 1109-1110 (इसके साथ 2011 की दांडिक अपील सं. 1229, 1230, 2012 की दांडिक अपील सं. 213 और 2013 की दांडिक अपील सं. 682).

2006 की दांडिक अपील सं. 546 और 599 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, धारवाड़ न्यायपीठ द्वारा तारीख 20 नवंबर, 2009 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री नागमुथु एस., डा. के. राधाकृष्णन, ज्येष्ठ अधिवक्तागण, रामेश्वर प्रसाद गोयल, सी. एम. अंगाड़ी, मनीष गोस्वामी, एम. वेंकटेसुलु, (सुश्री) मनीषा चावा, हिमानी पांडेय, वैरावन, (श्रीमती) रजनी के. प्रसाद, बी. कृष्ण प्रसाद, (सुश्री) एन. अन्नापूर्णी, (सुश्री) सुनीता सिंह और (सुश्री) आभा आर. शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री शुभ्रांशु पाधी, विशाल बंसल, (सुश्री) राजेश्वरी शंकर, निरूप सुकृति, मोहम्मद ओवैस, वी. एन. रघुपति और महेन्द्र पाल गुप्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संजय करोल ने दिया ।

न्या. करोल – एकमात्र मुद्दा जो हमारे विचार के लिए उद्भूत होता

है, यह है कि क्या किसी एकमात्र साक्षी के परिसाक्ष्य के आधार पर आठ व्यक्तियों को आजीवन कारावास भुगतने के लिए अनुज्ञात किया जा सकता है, जैसा कि निचले न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप से अभिनिर्धारित किया गया है । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, हम इस बात की परीक्षा करने के लिए कर्तव्याबद्ध हैं कि क्या इस एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी यांकप्पा पंचागवी (अभि. सा. 1) का परिसाक्ष्य विश्वास करने योग्य है ? ; क्या वह भरोसेमंद है ? ; क्या उसने सत्यतापूर्वक अभिसाक्ष्य दिया है ? ; क्या उसका परिसाक्ष्य विश्वसनीय और अतिरंजनाओं, सुधारों या तात्विक विसंगतियों से मुक्त है जिससे इसे अविश्वसनीय या संदेहास्पद न ठहराया जा सके ; और क्या अभियोजन पक्ष ने सभी अभियुक्तों के विरुद्ध अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया है या नहीं ? इन सभी की हमारे द्वारा परीक्षा की जानी है ।

2. यह विवादग्रस्त नहीं है कि यह पाया गया था कि सत्यप्पा नामक व्यक्ति की गांव कलटिप्पी, जमाखंडी तालुका में दिन-दहाड़े हत्या कर दी गई थी । यह भी विवादग्रस्त नहीं है कि उक्त घटना के संबंध में उसी दिन ही अर्थात् तारीख 13 अगस्त, 2004 को 4.00 बजे अपराह्न में तेरदाल पुलिस थाना, जिला भागलकोट, कर्नाटक में एक रिपोर्ट दर्ज की गई थी । यह भी विवादग्रस्त नहीं है कि अन्वेषण अधिकारी श्री हनमप्पा संगप्पा केरी (अभि. सा. 32), जिसने अन्वेषण किया था, घटनास्थल पर पहुंचा और आरंभिक जांच करने के पश्चात् और अन्वेषण करते हुए शव को बरामद किया और इसे मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा जो डा. शब्बीर पटेल, अभि. सा. 27 द्वारा की गई थी । उक्त विशेषज्ञ द्वारा सम्यक् रूप से साबित मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श पी-25) से सिद्ध होता है कि मृतक को उसके शरीर के विभिन्न महत्वपूर्ण अंगों पर चाकू से कारित की गई 21 क्षतियां पहुंची थीं । गंभीर प्रकृति की बहुत-सारी क्षतियां धारदार आयुध (आयुधों) से कारित की गई थी । वे शरीर के सभी महत्वपूर्ण अंगों पर होने के कारण उनके परिणामस्वरूप मृतक की मृत्यु हो गई थी । केवल इस अपील में इस न्यायालय ने यह अवेक्षा की है कि उक्त अपराध के संबंध में विचारण न्यायालय ने सभी आठ अभियुक्तों अर्थात् रामप्पा (अभियुक्त सं. 1), शंकर (अभियुक्त सं. 2), कृष्णनप्पा (अभियुक्त सं. 3), गुलप्पा गवप्पा कारीगर (अभियुक्त सं. 4), बीरप्पा (अभियुक्त सं. 5), रावसाहेब लक्ष्मण पाटिल (अभियुक्त सं. 6),

यांकप्पा शिवप्पा नायक (अभियुक्त सं. 7) और पारप्पा **उर्फ** गुलप्पा (अभियुक्त सं. 8) को विभिन्न आयुधों अर्थात् जाम्बिया/जाम्बे (धारदार आयुध), बटन चाकू का उपयोग करके हत्या करने के लिए दोषसिद्ध किया था । मिर्ची पाउडर को भी हमले के आयुध के रूप में प्रयुक्त किया गया था ।

3. विचारण न्यायालय के सुविचारित मत में, अधिकांश अभियोजन साक्षियों (जिनकी संख्या 32 थी) ने पक्षद्रोही होने के बावजूद अभि. सा. 1 के अखंडनीय परिसाक्ष्य, जिसका समर्थन पक्षद्रोही साक्षी अर्थात् शासप्पा रेड्डी (अभि. सा. 7) के परिसाक्ष्य के अखंडनीय भाग द्वारा हुआ था, अभियोजन के पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया गया था । इसलिए विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया और उन्हें इसमें नीचे दी गई सारणी में उपदर्शित अनुसार कारावास भुगतने का दंडादेश दिया –

क्र. सं.	**नाम**	**धारा जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता, 1860 के अधीन दंडादेश दिया गया था**
1.	रामप्पा शंकर (अभि. सं. 1)	143 – प्रत्येक को छह माह का साधारण कारावास और 500/- रुपए का जुर्माना 147 – प्रत्येक को छह माह का साधारण कारावास और 500/- रुपए का जुर्माना 148 – प्रत्येक को एक वर्ष का साधारण कारावास और 1,000/- रुपए का जुर्माना 504 – प्रत्येक को एक वर्ष का साधारण कारावास और 1,000/- रुपए का जुर्माना 302 – प्रत्येक को आजीवन कारावास और 1,000/- रुपए का जुर्माना
2.	शंकर (अभि. सं. 2)	
3.	कृष्णप्पा (अभि. सं. 3)	
4.	गुलप्पा गवप्पा कारीगर (अभि. सं. 4)	
5.	बीरप्पा (अभि. सं. 5)	
6.	रावसाहेब लक्ष्मण पाटिल (अभि. सं. 6)	
7.	यांकप्पा शिवप्पा नायक (अभि. सं. 7)	
8.	पारप्पा **उर्फ** गुलप्पा (अभि. सं. 8)	

सभी अभियुक्तों को दिए गए एक समान दंडादेश साथ-साथ चलने थे ।

4. उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों और निकाले गए निष्कर्षों से सहमति व्यक्त करते हुए पक्षकारों के बीच एक भूमि/सीमा विवाद के संबंध में पूर्व दुश्मनी होने के तथ्य का भी उल्लेख किया ।

5. हमारे समक्ष केवल तीन अभियुक्तों अर्थात् (i) रावसाहेब **उर्फ** रावसाहेबगौड़ा (अभि. सं. 6), (ii) यांकप्पा शिवप्पा नायक (अभि. सं. 7) और पारप्पा **उर्फ** गुलप्पा (अभि. सं. 8) ने विशेष इजाजत लेकर इन दो अपीलों द्वारा उक्त निर्णय को चुनौती दी है ।

6. संक्षेप में, हम यह सारांश दे सकते हैं कि मृतक की मृत्यु धारदार आयुधों से कारित की गई बहुत-सारी क्षतियों के परिणामस्वरूप हुई थी । संक्षिप्तता के लिए, हमें दोहराने की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि ऊपर पहले ही उल्लेख किया गया है मृतक को पहुंचीं क्षतियां और विदीर्ण घाव शरीर के विभिन्न अंगों पर थे । घटनास्थल पर मौजूद अधिकांश साक्षियों या घटना घटित होने से पूर्व की घटनाओं या जिनके कारण घटना घटित हुई थी उसके साक्षियों ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था । तथापि, इसका यह अर्थ नहीं है कि इन सभी साक्षियों के परिसाक्ष्य स्वयंमेव त्यक्त हो जाते हैं और इसके स्वाभाविक परिणामस्वरूप अभियुक्तों की दोषमुक्ति हो जाएगी ।

7. यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए सामान्य तौर पर तथ्य संबंधी समवर्ती निष्कर्षों में बहुत ही विशेष परिस्थितियों या निचले न्यायालयों द्वारा कारित की गई गंभीर गलती की दशा के सिवाय हस्तक्षेप नहीं करता है । केवल जहां उच्च न्यायालय ने "महत्वपूर्ण परिस्थितियों" और "साबित तथ्यों" की अनदेखी या उपेक्षा की हो या "दांडिक विधिशास्त्र के सुस्थिर सिद्धांतों का अतिक्रमण और गलत रूप से लागू किया हो" या अभियुक्तों को संदेह का फायदा देने के लिए इनकार किया हो, आदि, वहां यह न्यायालय विधिक रूप से गलत विनिश्चयों को ठीक करने की कार्यवाही करेगा । हमें केवल इस कारण से भी तब तक हस्तक्षेप नहीं

करना चाहिए कि हम एक भिन्न निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं, जब तक निस्संदेह, निकाले गए निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए बाध्यकारी परिस्थितियां न हों और यह कि अभियुक्त निर्दोष/दोषी थे । निस्संदेह, समवर्ती प्रकार की दोषसिद्धि के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए परिसीमाएं हैं ।

8. हम किसी पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले पर विचार नहीं कर रहे हैं । अपराध तथा इसके कारणों दोनों के संबंध में यहां साक्ष्य प्रत्यक्ष है ।

9. इस प्रक्रम पर, हम अभियुक्तों और मृतक के बीच संबंध को अभिलिखित कर सकते हैं जो दूर के चचेरे भाई हैं । दोनों पक्षकारों की एक-दूसरे से सटी हुई भूमियां थीं । मृतक (सत्यप्पा) यांकप्पा पंचागवी (अभि. सा. 1) का सगा भाई है । अभियुक्त सं. 4 और 5, अभियुक्त सं. 1 के सगे भाई हैं और अभियुक्त सं. 2 और 3 अभियुक्त सं. 1 के पुत्र हैं । अभियुक्त सं. 6 से 8 सभी अभियुक्त सं. 1 से 5 के नातेदार हैं । साक्षियों विशेष रूप से अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य में यह आया है कि विरोधी पक्षकारों के बीच बैलगाड़ी की सड़क के उपयोग को लेकर एक विवाद था, जिसका इस सीमा तक खंडन नहीं किया गया है । इस संबंध में घटना से छह माह पूर्व एक झगड़ा हुआ था तब अभियुक्त सं. 1 ने इसके संबंध में एक शिकायत फाइल की थी । परिवार/गांव के बुजुर्गों के बीच-बचाव से विवाद सुलझ गया था । किंतु तो भी उक्त साक्षी के कथन के अनुसार विवाद अभिकथित रूप से बना हुआ था । शासप्पा रेड्डी (अभि. सा. 7), जो पक्षकारों का एक नातेदार है, ने यद्यपि आरंभ में यह कहा था कि मृतक सत्यप्पा और अभियुक्तों के बीच कोई विवाद नहीं था किंतु इसके पश्चात् उसी समय यह स्पष्ट किया कि घटना से 15 दिन पूर्व भूमि के संबंध में विवाद पैदा हुआ था और "मेरी सलाह देने पर भी अभियुक्त सं. 1 रामप्पा ने सत्यप्पा को आने-जाने का रास्ता नहीं दिया" । यहां तक कि पांडप्पा सिदारेड्डी (अभि. सा. 8) ने भूमि को लेकर पक्षकारों के बीच विवाद के तथ्य के बारे में अभिसाक्ष्य नहीं दिया था । इस प्रकार, हमारे मत में परस्पर विवाद होने के तथ्य के संबंध में यह नहीं कहा जा सकता है कि निचले न्यायालयों के निष्कर्षों के संबंध में अभिलेख पर सामग्री से उत्पन्न नहीं होते हैं या अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के गलत मूल्यांकन पर आधारित हैं ।

10. अगला प्रश्न जो विचार के लिए उद्भूत होता है यह है कि किसने अपराध किया था और किस रीति में किया था । निचले न्यायालयों ने समवर्ती रूप से अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य का पूरी तरह से मूल्यांकन करने के पश्चात् यह पाया था कि अभियुक्तों ने ऊपर निर्दिष्ट विभिन्न आयुधों का प्रयोग करके अपराध कारित किया था ।

11. आगे, अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य का परिशीलन करने पर हमने यह पाया है कि उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि दुर्भाग्यपूर्ण दिन अर्थात् 13 अगस्त, 2004 को वह और मृतक दोनों तेरदाल के रूप में ज्ञात एक स्थान पर मिले थे जहां मृतक ने उसे 50,000/- रुपए की राशि सौंपी थी, जो उसने ग्रामीण बैंक सासालट्टी शाखा से व्यपहृत किए थे । मृतक चारा खरीदने के पश्चात् अपनी साइकिल पर कल्टिप्पी गांव (अपने निवास स्थान) की ओर लौटने लगा । यह साक्षी पीछे बैठी एक सवारी, अशोक मारेगुड्डी (अभि. सा. 19) के साथ उसके पीछे-पीछे जाने लगा । रास्ते में लगभग 2.45 बजे अपराह्न में इस साक्षी ने पाया कि सभी अभियुक्त (1 से 8), जो जाली कांटी पेड़ों में छिपे हुए थे, मृतक की ओर दौड़े । अभियुक्त सं. 2 और 8 यह गाली देने लगे कि 'फाउंड सत्या सूलेमागने निन्नानु कोंडु हाकुत तेवे' (वेश्या की औलाद, हम तुझे जान से मार देंगे) । उनको देखकर मृतक अपनी साइकिल को छोड़कर उस स्थल से भागने लगा और सभी अभियुक्त उसका पीछा करने लगे । उसके पश्चात्, अभियुक्त सं. 8 पारप्पा **उर्फ** गुलप्पा ने मृतक के चेहरे पर मिर्ची पाउडर फेंक दिया ; अभियुक्त सं. 1 और 2 ने मृतक की गर्दन के बाईं तरफ और छाती पर जांबिया/जांबे से प्रहार किए ; अभियुक्त सं. 3 से 7 ने बटन चाकू से शरीर के विभिन्न भागों पर प्रहार किए, जिसके परिणामस्वरूप मृतक की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । अभियुक्त तुरंत गोलाभावी गांव की ओर भाग गए । यह साक्षी सहायता के लिए चिल्लाया तो शासप्पा रेड्डी (अभि. सा. 7), पांडप्पा सिदारेड्डी (अभि. सा. 8), श्रीशैल (अभि. सा. 11) और रामप्पा (अभि. सा. 12) घटनास्थल पर पहुंचें । साथ लगी भूमि के स्वामी अर्थात् लाकव्वा सिद्धापुर (अभि. सा. 9) और सुशिलव्वा (अभि. सा. 13) भी पहुंचें । उसने एक अधिवक्ता अर्थात् हनामंत भीमप्पा रेड्डी (अभि. सा. 24) के माध्यम से एक शिकायत लिखवाई और अनपढ़ होने के कारण उस

पर अपने अंगूठे की छाप लगाई तथा पुलिस के पास रिपोर्ट दर्ज की ।

12. हम यहां केवल यह अभिलिखित कर सकते हैं कि घटनास्थल पर अभियुक्तों की मौजूदगी को उनमें से किसी के द्वारा विवादग्रस्त नहीं किया गया है । ऐसा हम न केवल साक्षियों की उनके द्वारा की गई प्रतिपरीक्षा से अपितु साक्षियों के परिसाक्ष्यों, जिसके बारे में हम इसमें इसके पश्चात् उल्लेख करेंगे, के माध्यम से भी कह सकते हैं, जिन्होंने अभियुक्तों द्वारा मृतक पर हमला किए जाने के मुद्दे पर अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन न करने के बावजूद इस बात को लेकर अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया है । अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य के प्रतिपरीक्षा वाले भाग का परिशीलन करने पर अखंडनीय रूप से प्रकट होता है कि अभियुक्त घटनास्थल पर झाड़ियों में छिपे हुए थे । यह साक्षी, विस्तारपूर्वक प्रतिपरीक्षा किए जाने के बावजूद, इस आशय के अपने परिसाक्ष्य पर अडिग रहा कि अभियुक्तों ने मृतक को पकड़ लिया था और उसके शरीर पर गंभीर क्षतियां कारित की थीं । अभियुक्तों ने भागने से उसे रोकने के लिए मिर्ची पाउडर का एक आयुध के रूप में प्रयोग किया था और उसे जमीन पर धक्का दे दिया था । यद्यपि यह साक्षी इस बारे में स्पष्ट नहीं था कि अभियुक्तों में से किसने मृतक पर उसके नीचे गिर जाने के पश्चात् हमला किया था किंतु इसके पश्चात् उसने उनमें से प्रत्येक द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में स्पष्ट रूप से कथन किया है ।

13. अभि. सा. 7 ने, पक्षद्रोही हो जाने के बावजूद, अपने अविवादग्रस्त परिसाक्ष्य में घटनास्थल पर अभियुक्त सं. 1, 2 और 3 के मौजूद होने का कथन किया है । घटना के तुरंत पश्चात् वे गोलाभावी गांव की ओर भागते हुए देखे गए थे । इसके अतिरिक्त, उसने मृतक को कई क्षतियां पहुंचे हुए देखा था और उसके शरीर पर मिर्ची पाउडर भी पाया था । हम यहां केवल यह अभिलिखित कर सकते हैं कि लाक्कप्पा सिद्धापुर (अभि. सा. 9) और अशोक मारेगुड्डी (अभि. सा. 19) यद्यपि न्यायालय में पक्षद्रोही हो गए थे, तो भी उन्होंने वास्तव में पुलिस के समक्ष इसी प्रकार के कथन किए थे जिनसे उनका सामना कराया गया था और यह तथ्य किसी भी स्थिति में अन्य अभियोजन साक्षियों के माध्यम से साबित किया गया है ।

14. पूर्वोक्त को ध्यान में रखते हुए, एक मात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अभि. सा. 1 के संबंध में प्रश्नों का उत्तर उसका परिसाक्ष्य भरोसेमंद, विश्वास करने योग्य, सत्य और विश्वसनीय होने के कारण सकारात्मक दिया जाता है ।

15. विधि के इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए कि क्या एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी का परिसाक्ष्य सभी आठ व्यक्तियों को आजीवन सलाखों के पीछे भेजने के लिए पर्याप्त है या नहीं, हमें न्यायालय के समक्ष दी गई दलीलों पर विचार करना होगा ।

16. यह कहा जाता है कि साक्षियों की मात्रा नहीं गुणवत्ता मायने रखती है और चूंकि अभि. सा. 1 मृतक का भाई होने के कारण एक हितबद्ध साक्षी है और यह कि उसका कथन "अंतर्निहित रूप से विश्वसनीय" या "उत्तम गुणवत्ता" का नहीं है इसलिए जैसा कि इस न्यायालय द्वारा हाल ही में अभिनिर्धारित किया गया है दो संभाव्य निर्वचन निकलने पर जो अभियुक्तों के पक्ष में हो उसे अपनाया जाना चाहिए । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने अपनी दलीलों के समर्थन में प्राथमिक रूप से **मरुदानल अगस्ती** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले और **चोटकु** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले हाल ही के मामले का विशिष्ट रूप से उस भाग के लिए अवलंब लिया जिसमें विद्वान् खंड न्यायपीठ ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को तुरंत वितरण एक्सप्रेस डिलिवरी द्वारा भेजे जाने के बावजूद इसे मजिस्ट्रेट के पास पहुंचने में 29 घंटे के विलंब को एक "गंभीर खामी" पाया था ।

17. इस न्यायालय ने अनेक अवसरों पर इसी प्रकार के मामलों पर विचार किया है और ऐसी विचारणा से मामलों का विनिश्चय करने के लिए विभिन्न सिद्धांत निकाले हैं । वर्तमान मुकदमे को विनिश्चित किए जाने के लिए उनमें से कुछ अनिवार्य सिद्धांत ये हैं –

17.1 **पक्षद्रोही साक्षी का साक्ष्य :**

क) अपराध करने के संबंध में किसी पक्षद्रोही साक्षी के साक्ष्य का

---

[1] (1980) 4 एस. सी. सी. 425.

[2] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 1313.

संपुष्टिकारी भाग ग्राह्य है । केवल इस कारण कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किए गए कथन से विचलन किया गया है, ऐसे साक्षियों के कथनों को पूर्णतया अविश्वसनीय नहीं कहा जा सकता ;

ख) किसी पक्षद्रोही साक्षी का साक्ष्य दोषसिद्धि का आधार बन सकता है ;

ग) प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य का मूल्यांकन करने का साधारण सिद्धांत यह है कि जब किसी मामले में बड़ी संख्या में अपराधी अंतर्वलित हों, तो बुद्धिमानी होगी कि यह आवश्यक है, किंतु सदैव नहीं, कि न्यायालय सतर्कता के उपाय के रूप में कम से कम दो और साक्षियों से इसकी संपुष्टि की ईप्सा करे । जो भी स्थिति हो, सिद्धांत साक्षियों की मात्रा की बजाय गुणवत्ता का है । **मृणाल दास** बनाम **त्रिपुरा राज्य**[1] वाला मामला देखें ।

17.2 **लोप, कमियों का प्रभाव :**

साक्ष्य की संपूर्ण रूप से परीक्षा करने पर सत्यता की झलक परिलक्षित होनी चाहिए । न्यायालय द्वारा ऐसे लोप और कमियों को असम्यक् महत्व नहीं देना चाहिए जिससे अभियोजन के पक्षकथन का आधार न डगमगाता हो । **रोहतास कुमार** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] ; **भगवान जगन्नाथ मरकद** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[3] और **करण सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[4] वाले मामले देखें ।

17.3 **एकमात्र साक्षी पर अवलंब :**

यदि कोई साक्षी पूरी तरह से विश्वसनीय है तब उसके आधार पर की गई दोषसिद्धि में किसी रीति में कमी होना नहीं कहा जा सकता है । **करुणाकरण** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[5] और **साधुराम** बनाम **राजस्थान राज्य**[6] वाले मामले देखें ।

---

[1] (2011) 9 एस. सी. सी. 479.

[2] (2013) 14 एस. सी. सी. 434.

[3] (2016) 10 एस. सी. सी. 537.

[4] (2022) 6 एस. सी. सी. 52.

[5] (1976) 1 एस. सी. सी. 434.

[6] (2003) 11 एस. सी. सी. 231.

17.4 **घनिष्ठ नातेदार का परिसाक्ष्य :**

कोई साक्षी घनिष्ठ नातेदार है, यह बात उसके परिसाक्ष्य को नामंजूर करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है । यहां तक कि "पक्षपाती" या "हितबद्ध" साक्षी के साक्ष्य को यंत्रवत रूप से नामंजूर करने से न्याय की हानि हो सकती है । "एक बात में मिथ्या तो सब बात में मिथ्या" का सिद्धांत ऐसा नहीं है जो साधारण रूप से लागू होता हो । **भगवान जगन्नाथ मरकद** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** (उपर्युक्त) वाला मामला देखें ।

17.5 **अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता :**

दो मतों से उद्भूत संदेह का फायदा देने के लिए किसी व्यक्ति को हकदार होने के लिए अभियुक्त के समर्थन में संभाव्य मत अवश्य इतना निकटवर्ती युक्तियुक्त होना चाहिए जितना उसके विरुद्ध है । **गोपाल रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें ।

17.6 **प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भेजने में विलंब :**

जब तक गंभीर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ा हो, मजिस्ट्रेट को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भेजने में मात्र विलंब का स्वयंमेव अभियोजन के पक्षकथन पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ेगा । **राजस्थान राज्य** बनाम **दाउद खान**[2] वाला मामला देखें । किसी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का पूर्व-दिनांकित या समयपूर्व होने के विरुद्ध एक बाह्य जांच वह समय है जिस पर इसे मजिस्ट्रेट को प्रेषित किया जाता है या मजिस्ट्रेट द्वारा इसे प्राप्त किया जाता है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट की प्रति को तुरंत प्रेषित करने से यह सुनिश्चित होता है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में कोई छलसाधन या जोड़-तोड़ नहीं है । **मेहराज** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3] और **ओमबीर सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[4] वाले मामले देखें ।

17.7 **अंतिम बार देखे जाने का सिद्धांत :**

अंतिम बार देखे जाने की कहानी दोषसिद्धि के लिए स्वयंमेव एक

---

[1] (1979) 1 एस. एस. सी. 355.

[2] (2016) 2 एस. सी. सी. 607.

[3] (1994) 5 एस. सी. सी. 188.

[4] (2020) 6 एस. सी. सी. 378.

कमजोर आधार समझा जाता है । तथापि, जब इसके साथ अन्य कारक हैं जैसे जब मृतक को अंतिम बार अभियुक्त के साथ देखा गया था, मृतक के शव की बरामदगी के समय की निकटता इत्यादि तब अभियुक्त साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 के अधीन स्पष्टीकरण देने के लिए आबद्ध है । यदि वह ऐसा नहीं करता है, या ऐसा स्पष्टीकरण देता है जिसे गलत स्पष्टीकरण कहा जा सकता है या यदि हेतु सिद्ध हो जाता है, तो किसी अन्य कल्पना की संभाव्यता समाप्त होने पर इसके आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । **सतपाल सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] और **राम गोपाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले देखें ।

17.8 **ऐसे मामले जिनमें कई अभियुक्त अंतर्ग्रस्त हों** :

भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 149 के लागू होने के संबंध में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ, जिसमें हम में से एक (न्यायमूर्ति बी. आर. गवई) एक सदस्य थे, निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

> "30. भारतीय दंड संहिता की धारा 149 विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों के उन कार्यों के लिए प्रतिनिधिक दायित्व की घोषणा करती है जो उस जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने या कोई ऐसा अपराध करने में किया जाता है जिसका किया जाना उस जमाव के सदस्य उस उद्देश्य को अग्रसर करने में जानते थे । यदि कोई विधिविरुद्ध जमाव कोई अपराध कारित करने के सामान्य उद्देश्य के साथ गठित किया जाता है और यदि वह अपराध विधिविरुद्ध जमाव के किसी सदस्य के द्वारा उस उद्देश्य को अग्रसर करने में कारित किया जाता है, तो जमाव के सभी सदस्य उस अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी होंगे, भले ही एक या अधिक ने, न कि सभी ने, अपराध कारित किया हो । पुन:, यदि किसी विधिविरुद्ध जमाव के किसी सदस्य द्वारा कोई अपराध किया जाता है और वह अपराध ऐसा है जिसके बारे में विधिविरुद्ध जमाव के सदस्य सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में संभाव्य जानते थे,

---

[1] (2018) 6 एस. सी. सी. 610.

[2] 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन 158.

तो हर व्यक्ति जो उस अपराध के किए जाने के समय उस जमाव का सदस्य है, उस अपराध का दोषी होगा । (हरि **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य, 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1131 और शंभू नाथ **बनाम** बिहार राज्य, ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 725 वाले मामले देखें) ।"

स्पष्ट कृत्य और सक्रिय भागीदारी से अपराध करने वाले व्यक्ति का सामान्य आशय उपदर्शित हो सकता है, जबकि विधिविरुद्ध जमाव में मात्र मौजूदगी से धारा 149 के अधीन प्रतिनिधिक रूप से आपराधिक दायित्व हो सकता है । **लालजी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें ।

जब किसी मामले में बड़ी संख्या में हमलावर अंतर्ग्रस्त हों तब साक्षी के लिए ऐसे व्यक्तियों में से प्रत्येक द्वारा उसमें निभाई गई भूमिका का वर्णन करना संभव नहीं है । अभियोजन के लिए प्रत्येक सदस्य की अंतर्ग्रस्तता को विशेष रूप से उसने कौन-सा और क्या कृत्य किया था, के संबंध में साबित करना आवश्यक नहीं है । **मशाल्ती** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाला मामला देखें ।

17.9 **अपील न्यायालय की शक्ति :**

(क) अपील न्यायालय को दोषसिद्धि के आदेश की तरह दोषमुक्ति के आदेश में भी साक्ष्य का मूल्यांकन करने की व्यापक शक्तियां हैं जिसमें निर्दोषिता की उपधारणा का प्रश्न भी होता है जो मामले के सभी प्रक्रमों पर जारी रहता है । ऐसे न्यायालय को विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को सम्यक् महत्व देना चाहिए । (**एटले** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3] वाला मामला देखें) ।

(ख) **गुरुदत्त पाठक** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[4] वाले मामले को निर्दिष्ट करते हुए इस न्यायालय ने **गीता देवी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[5]

---

[1] (1989) 1 एस. सी. सी. 437.

[2] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 202.

[3] ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 807.

[4] (2021) 6 एस. सी. सी. 116.

[5] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 57.

वाले मामले में इस पहलू पर विधि का मूल्यांकन किया और फिर यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय को प्रथम अपील न्यायालय होने के नाते अभिलेख पर के साक्ष्य पर अवश्य विचार-विमर्श/पुनर्मूल्यांकन करना चाहिए । ऐसा करने में असफलता मामले को विचार के लिए प्रतिप्रेषित करने के लिए पर्याप्त एक अच्छा आधार है ।

17.10 **अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की शक्ति :**

अति विशेष परिस्थितियों या उच्च न्यायालय द्वारा कारित विधि की गंभीर गलतियों की मौजूदगी के अभाव में यह न्यायालय निचले न्यायालयों के तथ्य संबंधी समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करता है । (**शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाला मामला देखें) ।

अनुच्छेद 136 के अधीन परिसीमाएं स्वयं अधिरोपित परिसीमाएं हैं जहां मामूली अनुक्रम में साक्ष्य का मूल्यांकन स्पष्ट गलती या निर्णय के अभाव में तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक विशेष इजाजत की विषयवस्तु स्पष्ट रूप से अनुचित न हो । (**कलामणि टेक्स** बनाम **पी. बालासुब्रमण्यन**[2] वाला देखें) ।

18. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना चाहिए कि विद्वान् विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषसिद्ध करके गलती की है क्योंकि अभि. सा. 1 का कथन, जो कई अभियुक्तों के संबंध में अप्रत्यक्ष है, किसी भी तरह दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए एक ठोस आधार नहीं है ।

19. न्यायालय के समक्ष दी गई दलीलों, मामले के अभिलेख का गठन करने वाली तात्विक वस्तुओं और प्रदर्शों पर विचार करने के पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि शिकायतकर्ता, अभि. सा. 1 के एकमात्र साक्ष्य और अभि. सा. 7 (एक पक्षद्रोही साक्षी) के समर्थनकारी साक्ष्य के आधार पर अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है । निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

---

[1] (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

[2] (2021) 5 एस. सी. सी. 283.

"अभियोजन पक्ष ने शिकायतकर्ता और ऊपर निर्दिष्ट अन्य साक्षियों के स्वीकार्य साक्ष्य को प्रस्तुत करके अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध अपने पक्षकथन को साबित किया है और इसलिए अभियुक्त जो घातक आयुधों से लैस थे, विधिविरुद्ध जमाव करने, बल्वा करने के अपराधों के दोषी पाए गए हैं और उन्होंने तारीख 13 अगस्त, 2004 को लगभग 3.00 बजे अपराह्न में मृतक सत्यप्पा को गंदी गालियां दीं और फिर उन्होंने तेरदाल से कलटिप्पी जाने वाली सार्वजनिक सड़क पर हत्या कर दी और इसलिए उन्हें तद्नुसार दंडित किया जाना चाहिए ।"

उच्च न्यायालय द्वारा इस मत की अभिपुष्टि निश्चायक कारणों को प्रमाणित करते हुए और अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य का पूरी तरह से यह मूल्यांकन करके की गई है कि शिकायत लिखवाने में हनमंत भीमप्पा रेड्डी (अभि. सा. 24) की सहायता लेने की बात से उसकी विश्वसनीयता पर कोई प्रश्न खड़ा नहीं होता है; कार्य समय 8.00 बजे अपराह्न तक होने के कारण अभि. सा. 28 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सौंपे जाने के समय के बारे में विसंगति को मुख्य परीक्षा में किए गए कथन में निरस्त नहीं किया गया था जहां उल्लिखित समय 4.45 बजे अपराह्न था ।

20. मजिस्ट्रेट के पास प्रथम इत्तिला रिपोर्ट पहुंचने में विलंब के संबंध में विधि की स्थिर स्थिति यह है कि प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की बात को प्रदर्शित न करने की दशा में प्रत्येक विलंब मामले के लिए घातक नहीं है । (**भजन सिंह** उर्फ **हरभजन सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाला मामला देखें) । **चोटकू** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय "अन्वेषण में किए गए ऐसे विलंब और यहां तक कि अन्वेषण की विश्वसनीयता पर विचार करने के लिए कर्तव्यबद्ध है ।" वर्तमान मामले में, यद्यपि न्यायालय के समक्ष इस सिद्धांत का अवलंब लिया गया है किंतु अभियुक्तों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को दर्शित करने के लिए कोई दलील नहीं दी गई है । पर्याप्त समर्थन रहित कथन न्यायालय को प्रभावित नहीं कर सकते । यहां तक कि संबंधित मजिस्ट्रेट

---

[1] (2011) 7 एस. सी. सी. 421.

के पास प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त होने में विलंब भी अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास न करने का कारण नहीं हो सकता है । यह उपबंधों का अननुपालन करने का मामला नहीं है और समान रूप से विलंब इतना अत्यधिक नहीं है जिससे कोई संदेह पैदा हो सके । तारीख 13 अगस्त, 2004 को 4.45 बजे अपराह्न में रजिस्ट्रीकृत की गई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को तुरंत प्रेषित किया गया था और यह 1.15 बजे पूर्वाह्न में प्राप्त हो गई थी ।

21. केवल इस कारण कि अभियुक्त सं. 2 से 4 के अतिरिक्त किसी अन्य अभियुक्त से कोई बरामदगी नहीं हुई थी, इसका यह अर्थ नहीं है कि अन्य अभियुक्त घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे; केवल इस कारण कि कई-सारे साक्षी पक्षद्रोही हो गए थे, इस बात से स्वयंमेव अभि. सा. 1 के साक्ष्य को नामंजूर करने के लिए आधार नहीं मिलता है; और यह कि अभि. सा. 1 मृतक का भाई है और इसलिए एक हितबद्ध तथा एक संयोगी साक्षी है, अमान्य दलीलें हैं । इसी पृष्ठभूमि में हम अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री नागमुथु एस. और डा. के. राधाकृष्णन की दलीलों में कोई बल नहीं पाते हैं कि एकमात्र साक्ष्य के आधार पर 8 व्यक्तियों की दोषसिद्धि न्यायोचित नहीं है, विशिष्ट रूप से जब प्रत्येक अभियुक्त द्वारा निभाई गई भूमिका के संबंध में उसके परिसाक्ष्य में कोई अस्पष्टता नहीं है ।

22. शिकायत लिखने में अभि. सा. 24 की भूमिका को केवल इस कारण नकारात्मक नहीं लिया जा सकता क्योंकि वह एक अधिवक्ता था और इसलिए उसने पूरा ब्यौरा देने की बात पर ध्यान दिया था । अभि. सा. 1 ने अपनी शिकायत में यह कहा है कि वह पढ़ना-लिखना नहीं जानता है । जिस व्यक्ति को शिकायत लिखने के लिए अभि. सा. 24 को बुलाने की जिस व्यक्ति की भूमिका समझी जा सकती है या अभि. सा. 1 के निदेशों पर या पुलिस द्वारा तैयार किए गए टिप्पणों के आधार पर शिकायत लिखने में विसंगति, उस सीमित समयांतराल को ध्यान में रखते हुए, इतनी अचंभित करने वाली नहीं है, जिसमें ये सारे क्रियाकलाप हुए थे क्योंकि विद्वान् सेशन न्यायाधीश के दृष्टिकोण के संबंध में विशेष इजाजत लेकर की गई इन अपीलों में आग्रह किए गए आधार से विश्वास पैदा होता है । यह नहीं कहा जा सकता है कि

अभियोजन पक्ष के पक्षकथन की उत्पत्ति डगमगा गई है या संदेहास्पद हो जाती है । शिकायत अभिकथित रूप से एक अधिवक्ता (अभि. सा. 24) द्वारा लिखी गई थी न कि पुलिस कार्मिकों की सहायता से याची द्वारा । क्या इससे अभियोजन के पक्षकथन पर संदेह उत्पन्न होता है ? हमारे सुविचारित मत में, कोई संदेह उत्पन्न नहीं होता है । क्योंकि प्रतिरक्षा पक्ष ने घटनास्थल पर अपनी मौजूदगी को स्वीकार किया है और स्वतंत्र साक्षियों ने प्रत्येक अभियुक्त को विनिर्दिष्ट भूमिका के लिए उत्तरदायी ठहराया है । एक हत्या कारित की गई है ऐसा दोनों निचले न्यायालयों द्वारा असंदिग्ध और समवर्ती रूप से अभिनिर्धारित किया गया है । इसके पश्चात् विशेष परिस्थितियों की विद्यमानता या न्यायालयों द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण, जिसको उन्होंने चुनौती देने की ईप्सा की है, के विपरीत कोई समान रूप से तथ्यों संबंधी अधिसंभाव्य वृत्तांत को सिद्ध करना इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों पर है ।

23. प्राथमिक दलील यह दी गई कि एकमात्र साक्षी के साक्ष्य का अवलंब लेकर कुल मिलाकर 8 लोगों (दो की मृत्यु हो जाने पर उनके विरुद्ध कार्यवाहियों का उपशमन हो जाने पर अब 6) को दोषसिद्ध करना बड़ी बात है । इस न्यायालय द्वारा विद्वान् काउंसेल से इस बारे में पूछे गए एक विनिर्दिष्ट प्रश्न पर कि अभि. सा. 1 की सत्यता को अधिक्षिप्त करने के लिए क्या प्रश्न उठा सकते हैं । इसका उत्तर यह दिया गया कि कई सारे बाह्य कारकों के साथ-साथ अन्य साक्षियों के परिसाक्ष्यों को देखते हुए इस साक्षी की विश्वसनीयता को ध्वस्त करने के लिए तत्व मौजूद हैं – जो हमारे विचार से हस्तक्षेप करने योग्य नहीं हैं । क्योंकि उच्च स्तर की संवीक्षा की अपेक्षा, जैसा कि **जगदीश** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है, असमाधानप्रद ठहराए जाने के लिए परिवर्ती साक्ष्य पर विश्वसनीय प्रश्न उठाया जाना चाहिए जो इसमें नहीं किया गया है । अभि. सा. 7 द्वारा अपनी मुख्य परीक्षा में की गई स्वीकारोक्तियों को विवादग्रस्त नहीं किया गया है और न ही अभियुक्तों में से किसी की मौजूदगी को विवादग्रस्त किया गया है, जैसा कि पहले ही मत व्यक्त किया गया है । **मृणाल**

[1] (2019) 7 एस. सी. सी. 711.

दास (उपर्युक्त), **रोहतास कुमार** (उपर्युक्त), **करण सिंह** (उपर्युक्त) और **करुणाकरण** (उपर्युक्त) वाले मामलों में उल्लिखित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य के आधार पर निस्संदेह अभियुक्तों की दोषसिद्धि की जा सकती है ।

24. हमने **मशाल्ती** (उपर्युक्त) वाले ऐतिहासिक निर्णय का भी उल्लेख किया है जिसमें चार विद्वान् न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियोजन पक्ष को विनिर्दिष्ट व्यक्तियों के विनिर्दिष्ट कृत्यों को साबित करने की आवश्यकता नहीं है । न तो अभियुक्तों की संख्या और न ही उनकी मौजूदगी को विवादग्रस्त किया गया है, इसलिए हम विधि की दृष्टि से यह अभिनिर्धारित नहीं कर सकते कि अभियुक्तों को निचले न्यायालयों द्वारा गलत रूप से दोषसिद्ध किया है ।

25. अभि. सा. 1 मृतक का भाई होने के नाते एक हितबद्ध साक्षी है; साथ ही वह एकमात्र साक्षी भी है जिसका विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अवलंब लिया गया है, इसे हमारे समक्ष निचले न्यायालयों के निर्णयों को प्रश्नगत करने के लिए एक आधार के रूप में प्रस्तुत किया गया है । **हरबंश कौर** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित अनुसार विधि की स्थिति को यह मत व्यक्त करते हुए स्पष्ट किया गया है कि विधि की ऐसी कोई प्रतिपादना नहीं है जो किसी घनिष्ट नातेदार के कथन पर केवल इसी कारण संदेह करती हो । **भास्करराव** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामले में एक चेतावनी दी गई है जो निस्संदेह इसी मुद्दे पर है किंतु हम **राजेश यादव** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3] वाले मामले में इस न्यायालय की मताभिव्यक्ति का भी उल्लेख कर सकते हैं जिसमें यह मत व्यक्त किया गया है :–

> "30. पुन: एक बार, हम चेतावनी भरे शब्दों में दोहराते हैं, विचारण न्यायालय पूर्वोक्त पहलू पर विनिश्चय करने के लिए सर्वोत्तम न्यायालय है क्योंकि किसी साक्षी के निर्धारण के आधार

---

[1] (2005) 9 एस. सी. सी. 195.

[2] (2018) 6 एस. सी. सी. 591.

[3] 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 150.

पर कोई अंकगणितीय संगणना या नियमनिष्ठ सिद्धांत नहीं बनाया जा सकता है क्योंकि सत्यता का पता लगाने की यात्रा को विचारण न्यायाधीश की दृष्टि के माध्यम से बेहतर रूप से देखा जा सकता है । वास्तव में, यही इस अधिनियमिति के पीछे का वास्तविक उद्देश्य है जो न्यायालय को अधिकतम विवेकाधिकार देती है ।"

26. निचले न्यायालयों ने, जैसा कि हमने पहले ही मत व्यक्त किया है, अभि. सा. 1 के परिसाक्ष्य पर विश्वास न करने का कोई कारण नहीं पाया है । वास्तव में, इसके ठीक विपरीत इन्होंने इसका अवलंब लिया है । **भगवान जगन्नाथ मरकद** (उपर्युक्त) और **राजस्थान राज्य** बनाम **मदान**[1] वाले मामले में जो अभिनिर्धारित किया गया है उसे ध्यान में रखते हुए हम इस संबंध में अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल से सहमत नहीं हैं ।

27. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि, दी गई दलीलों, मूल्यांकन और विश्लेषण की गई विधि को ध्यान में रखते हुए हम वर्तमान अपीलों में गुणागुण की कमी पाते हैं और इसलिए इन्हें खारिज किया जाता है । अभियुक्तों को, यदि वे जमानत पर हैं, तुरंत संबंधित न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने का निदेश दिया जाता है । लंबित आवेदन, यदि कोई है (हैं) का तदनुसार निपटारा हो जाएगा ।

अपीलें खारिज की गईं ।

जस.

---

[1] (2019) 13 एस. सी. सी. 653.

[2023] 1 उम. नि. प. 399

नीरज दत्ता

बनाम

राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार)

[2009 की दांडिक अपील सं. 1669]

17 मार्च, 2023

न्यायमूर्ति अभय एस. ओका और न्यायमूर्ति राजेश बिंदल

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) – धारा 7, 13(1)घ और 13(2) – लोक सेवक द्वारा पदीय कार्य के लिए वैध पारिश्रमिक से भिन्न परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण – आपराधिक अवचार – अवैध परितोषण की मांग का सबूत – शिकायतकर्ता की मृत्यु हो जाने के कारण प्रत्यक्ष साक्ष्य का अभाव – विशेष न्यायालय द्वारा पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – संधार्यता – जहां अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त-लोक सेवक द्वारा की गई मांग को साबित करने के लिए छाया साक्षी के साक्ष्य के अतिरिक्त कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया और उस साक्षी के साक्ष्य से भी यह निष्कर्ष निकालना संभव नहीं होने पर कि मांग और प्रतिग्रहण अवैध परितोषण के लिए थे तथा अभिलेख पर ऐसी कोई परिस्थिति नहीं लाए जाने जिससे परितोषण के लिए मांग साबित होती हो, वहां धारा 7 के अधीन अपराध के संघटक सिद्ध नहीं होने के कारण निचले न्यायालयों द्वारा की गई अभियुक्त-लोक सेवक की दोषसिद्धि को अपास्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी दिल्ली विद्युत बोर्ड में कार्यरत थी । शिकायतकर्ता को अपनी दुकान में बिजली का मीटर लगवाना था । चूंकि क्षेत्र के दुकानदारों ने अपीलार्थी के माध्यम से बिजली के मीटर लगवाए थे, इसलिए शिकायतकर्ता उससे मिला । उसने उसे बिजली के मीटर के मुद्दे पर चर्चा करने के लिए अपने निवास पर बुलाया । जब शिकायतकर्ता उससे मिला तो उसने मीटर संस्थापित करने

के लिए 15,000/- रुपए की राशि की मांग की और अंततोगत्वा बातचीत के पश्चात् यह मांग 10,000/- रुपए में तय हुई । शिकायतकर्ता के अनुसार, अपीलार्थी ने यह कहा कि वह अपराह्न में 3.00 और 4.00 बजे के बीच उसकी दुकान पर आएगी और तब शिकायतकर्ता उसे बिजली के मीटर के लिए कागजात और रिश्वत के रूप में 10,000/- रुपए सौंप दे । शिकायतकर्ता ने यह कहा कि उसके पास रिश्वत के लिए उसकी मांग को स्वीकार करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था । शिकायतकर्ता द्वारा इस बारे में भ्रष्टाचार निवारण ब्यूरो में शिकायत की गई । पूर्वोक्त शिकायत के आधार पर एक जाल बिछाया गया । अभि. सा. 5 श्री एस. के. अवस्थी छाया साक्षी था । जब वह शिकायतकर्ता तथा छापामार दल के सदस्यों के साथ 3.50 बजे अपराह्न में शिकायतकर्ता की दुकान पर गया, तो अपीलार्थी वहां मौजूद नहीं थी । लगभग 4.40 बजे अपराह्न में शिकायतकर्ता के पास टेलीफोन आया कि अपीलार्थी अपराह्न में लगभग 5.30/6.00 बजे आएगी । अपीलार्थी 5.20 बजे अपराह्न में सह-अभियुक्त के साथ आई और दस्तावेजों तथा 10,000/- रुपए की रिश्वत की मांग की, जिसका शिकायतकर्ता द्वारा संदाय किया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया । विचारण आरंभ होने से पूर्व ही शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई । विशेष न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी की दोषिता को साबित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त पारिस्थितिक साक्ष्य है । वास्तव में, पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर निष्कर्ष अभिलिखित किया गया कि मांग और प्रतिग्रहण की बात साबित होती है । विद्वान् विशेष न्यायालय के अपीलार्थी के संबंध में दोषसिद्धि के आदेश की उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई किंतु सह-अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया गया । अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, प्रत्यक्ष साक्ष्य अभि. सा. 5 - श्री एस. के. अवस्थी के साक्ष्य के रूप में है । इस मामले में, शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई थी और इसलिए उसकी परीक्षा नहीं की जा सकी थी । छापामार दल में अभि. सा. 5 श्री एस. के. अवस्थी,

सिंचाई विभाग में एक अधिकारी; अभि. सा. 6 श्री ओ. डी. यादव, यातायात निरीक्षक और अभि. सा. 7 श्री निरंजन सिंह, सहायक पुलिस आयुक्त थे । शिकायत के अनुसार, जिसे शिकायतकर्ता के माध्यम से साबित नहीं किया जा सका था, अभियोजन का यह पक्षकथन है कि शिकायतकर्ता से अपीलार्थी द्वारा पहली मांग तारीख 17 अप्रैल, 2000 को सवेरे उस समय की गई थी जब वह उससे उसके निवास पर मिला था । इस मांग के आधार पर विरचित कोई आरोप नहीं है । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, दूसरी मांग छापे के दौरान की गई थी । अपीलार्थी के मकान में की गई पहली मांग के बारे में कतई कोई साक्ष्य नहीं है क्योंकि वहां शिकायतकर्ता के सिवाय कोई और मौजूद नहीं था । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, अभि. सा. 5 अपीलार्थी द्वारा तारीख 17 अप्रैल, 2000 को लगभग 5.20 बजे अपराह्न में की गई दूसरी मांग का साक्षी था । अभि. सा. 5 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया था कि यद्यपि शिकायतकर्ता ने छापामार दल को यह सूचित किया था कि अपीलार्थी लगभग 3.50 बजे अपराह्न में उसकी दुकान पर आएगी, किंतु अपीलार्थी नहीं आई थी । बाद में, शिकायतकर्ता को एक टेलीफोन आया जिसमें यह सूचित किया गया कि वह (अपीलार्थी) 5.30/6.00 बजे अपराह्न में आएगी । अंततोगत्वा, अभि. सा. 5 के पक्षकथन के अनुसार, लगभग 5.20 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सह-अभियुक्त के साथ शिकायतकर्ता की दुकान पर आई । अभि. सा. 5 का वृत्तांत, जिससे अभियोजन पक्ष के अनुसार मांग का गठन होता है, इस प्रकार है : "श्रीमती नीरज दत्ता ने शिकायतकर्ता से उसके बिजली के मीटर से संबंधित कागजात और 10,000/- रुपए उसे देने के लिए कहा क्योंकि वह जल्दी में थी । शिकायतकर्ता ने अपने बिजली के मीटर के दस्तावेज और अपनी कमीज की बाईं जेब से 10,000/- रुपए के उपचारित करंसी नोट निकालकर श्रीमती नीरज दत्ता को उसके दाएं हाथ में सौंपे । श्रीमती नीरज दत्ता ने उक्त करंसी नोट अपने सहयोगी योगेश कुमार को गिनने के लिए दिए और उसने शिकायतकर्ता से कहा कि उसका काम हो जाएगा ।" शेष मुख्य परीक्षा अपीलार्थी द्वारा प्रतिग्रहण करने और उससे बरामदगी होने के संबंध में है । अब प्रश्न यह है कि क्या अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त द्वारा की गई परितोषण की मांग को साबित किया है । जब यह

न्यायालय धारा 7 के अर्थांतर्गत मांग के सबूत के मुद्दे पर विचार करता है, तो यह पूर्णरूपेण धन के लिए मांग नहीं हो सकती है अपितु यह अवैध पारिश्रमिक से भिन्न परितोषण की मांग होनी चाहिए । अभि. सा. 5 ने जो कुछ कहा है वह यह है कि जब अपीलार्थी शिकायतकर्ता की दुकान पर गई, तब उसने शिकायतकर्ता को यह कहते हुए बिजली के मीटर से संबंधित कागजात और 10,000/- रुपए उसे देने के लिए कहा कि वह जल्दी में है । यह ऐसा मामला नहीं है जहां अपीलार्थी द्वारा शिकायतकर्ता से बिजली का मीटर लगाने के लिए छाया साक्षी की मौजूदगी में परितोषण की कोई विनिर्दिष्ट मांग की गई थी । अभि. सा. 5 ने यह कथन नहीं किया है कि उसकी मौजूदगी में अपीलार्थी और शिकायतकर्ता के बीच कोई चर्चा हुई थी, जिसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि अपीलार्थी द्वारा परितोषण के लिए मांग की गई थी । इस साक्षी को इस बारे में कोई जानकारी नहीं थी कि शिकायतकर्ता और अपीलार्थी के बीच पहले क्या घटित हुआ था । अभि. सा. 5 को स्वीकृत रूप से उस प्रयोजन के बारे में कोई जानकारी नहीं थी जिसके लिए शिकायतकर्ता द्वारा अपीलार्थी को अभिकथित रूप से नकदी सौंपी गई थी । अभि. सा. 5 के साक्ष्य के अतिरिक्त, कोई अन्य साक्ष्य नहीं है जो अपीलार्थी द्वारा की गई मांग को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रयोग किया गया हो । यहां तक कि अभि. सा. 5 के मुख्य परीक्षा में किए गए कथनों को सही मान लेने पर भी यह निष्कर्ष निकालना असंभव है कि अपीलार्थी द्वारा परितोषण के रूप में 10,000/- रुपए की मांग की गई थी । धन का संदाय करने के लिए की गई हर मांग परितोषण के लिए मांग नहीं होती है । धन के लिए मात्र मांग से कुछ और अधिक होना चाहिए । एक और उल्लेखनीय महत्वपूर्ण पहलू है जिससे अभियोजन के पक्षकथन के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । मृत शिकायतकर्ता द्वारा तारीख 17 अप्रैल, 2000 को भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो द्वारा अभिलिखित किए गए उसके कथन के रूप में फाइल की गई शिकायत में उसने यह कहा था कि तारीख 6 मई, 1996 के आवेदन के अनुसरण में उसकी दुकान में एक मीटर लगाया गया था और कुछ महीनों के पश्चात् उसने पाया कि मीटर हटा लिया गया था । तथापि, विशेष न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के पैरा 19 में यह मत व्यक्त किया है कि तारीख 25 अप्रैल, 2000 को शिकायतकर्ता की प्रेरणा पर

बिजली का मीटर चोरी हो जाने के संबंध में एक शिकायत रजिस्ट्रीकृत की गई थी । इस प्रकार, शिकायतकर्ता द्वारा मीटर चोरी हो जाने के संबंध में शिकायत रिश्वत के लिए अभिकथित मांग के 8 दिन पश्चात् की गई थी । वास्तव में, अभि. सा. 7 ने यह स्वीकार किया था कि शिकायतकर्ता ने बिजली का मीटर लगाने के लिए उसके द्वारा किए गए आवेदन की प्रति प्रस्तुत नहीं की थी । अभि. सा. 7 ने यह भी कथन किया था कि शिकायतकर्ता ने स्पष्ट रूप से यह नहीं बताया था कि उसने ऐसा आवेदन दिया था । ऐसा आवेदन देने के सबूत के अभाव में, नया मीटर लगाने के लिए रिश्वत की मांग के संबंध में अभियोजन का पक्षकथन संदेहास्पद हो जाता है । इसके अलावा, तारीख 24 अप्रैल, 2000 तक शिकायतकर्ता ने इस अपराध के कारित होने के संबंध में कोई शिकायत दर्ज नहीं कराई थी । इससे एक नया बिजली का मीटर लगाने के लिए तारीख 17 अप्रैल, 2000 को परितोषण की मांग करने के संबंध में अभियोजन का पक्षकथन अत्यधिक संदेहास्पद हो जाता है । प्रस्तुत मामले में, अभिलेख पर लाई गई ऐसी कोई परिस्थिति नहीं है जिससे परितोषण के लिए मांग साबित होती हो । अत: भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के संघटक सिद्ध नहीं होते हैं और परिणामत: धारा 13(1)(घ) के अधीन अपराध लागू नहीं होगा । (पैरा 15, 16, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2021] (2021) 3 एस. सी. सी. 687 :
एन. विजयकुमार बनाम **तमिलनाडु राज्य** ; 11, 12

[2015] (2015) 10 एस. सी. सी. 152 :
पी. सत्यनारायण मूर्ति बनाम
जिला पुलिस निरीक्षक, आंध्र प्रदेश राज्य
और एक अन्य ; 4, 11

[2014] (2014) 13 एस. सी. सी. 55 :
बी. जयराज बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 4, 11

[2001] (2001) 1 एस. सी. सी. 691 :

एम. नरसिंग राव बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** । 4

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 1669.

2007 की दांडिक अपील सं. 4 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा तारीख 2 अप्रैल, 2009 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री एस. नागमुथु, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सतिन्द्र एस. गुलाटी और राज किशोर चौधरी

प्रत्यर्थी की ओर से (सुश्री) ऐश्वर्या भाटी, सर्वश्री जयंत के. सूद, अपर महा-सालिसिटर, श्रीकांत नीलप्पा टेरडल, (सुश्री) स्निधा मेहरा, (सुश्री) रुखमिणी बोबडे, संजय कुमार त्यागी, अदित खुराना, सुभ्रांशु पाधि, उदय खन्ना, (सुश्री) पूर्णिमा सिंह, (सुश्री) मनीषा चावा (सुश्री) बी. एल. एन. शिवानी और (सुश्री) शिविका मेहरा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय एस. ओका ने दिया ।

न्या. ओका – अपीलार्थी को विशेष न्यायाधीश, दिल्ली द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में 'भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम') की धारा 7 और धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(घ) के खंड (i) और (ii) के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया था । सह-अभियुक्त श्री योगेश कुमार को विशेष न्यायाधीश द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 12 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था । उच्च न्यायालय द्वारा सह-अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया गया था । अपीलार्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 की उपधारा (2) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 15,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया गया था । धारा 7 के अधीन

दंडनीय अपराध के लिए उसे दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया गया था । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर भी दंडादेश अधिरोपित किए गए थे । उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की दोषसिद्धि को आक्षेपित निर्णय द्वारा कायम रखा गया है ।

2. शिकायतकर्ता श्री रविजीत सिंह की विचारण आरंभ होने से पूर्व ही मृत्यु हो गई थी । वास्तव में, अभि. सा. 7, अन्वेषण अधिकारी ने अभिसाक्ष्य दिया था कि शिकायतकर्ता की हत्या कर दी गई थी । शिकायतकर्ता ने अपनी शिकायत में यह कहा था कि वह विकासपुरी, नई दिल्ली में स्थित एक दुकान में कारों की खरीद-फरोख्त का कार्य कर रहा है । उसका पक्षकथन यह है कि उसकी दुकान में बिजली का मीटर नहीं लगा हुआ था, इसलिए उसने तारीख 6 मई, 1996 को एक बिजली के मीटर के लिए आवेदन किया । उसके द्वारा तारीख 17 अप्रैल, 2000 को फाइल की गई शिकायत में भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो द्वारा अभिलिखित किए गए अपने कथन में उसने यह कहा था कि तारीख 6 मई, 1996 के आवेदन के अनुसरण में उसकी दुकान में एक मीटर संस्थापित किया गया था और कुछ महीनों के पश्चात् उसने पाया कि मीटर को उखाड़ लिया गया था । चूंकि क्षेत्र के दुकानदारों ने अपीलार्थी के माध्यम से बिजली के मीटर लगवाए थे, इसलिए शिकायतकर्ता उससे मिला । तारीख 17 अप्रैल, 2000 को 7.30 बजे पूर्वाह्न में उसे अपीलार्थी, जो स्थानीय क्षेत्र में दिल्ली विद्युत बोर्ड/विद्युत विभाग में निरीक्षक के रूप में कार्यरत थी, से एक टेलीफोन आया । उसने उसे बिजली के मीटर के मुद्दे पर चर्चा करने के लिए अपने निवास पर बुलाया । जब शिकायतकर्ता 8.00 बजे पूर्वाह्न में उससे मिला तो उसने मीटर संस्थापित करने के लिए 15,000/- रुपए की राशि की मांग की और अंततोगत्वा बातचीत के पश्चात् उसने यह मांग 10,000/- रुपए में तय की । शिकायतकर्ता के अनुसार, अपीलार्थी ने यह कहा था कि वह अपराह्न में 3.00 और 4.00 बजे के बीच उसकी दुकान पर आएगी और तब शिकायतकर्ता उसे बिजली के मीटर के लिए कागजात और रिश्वत के रूप में 10,000/- रुपए सौंप दे । शिकायतकर्ता ने यह कहा कि उसके पास रिश्वत के लिए उसकी

मांग को स्वीकार करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था ।

3. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि पूर्वोक्त शिकायत के आधार पर एक जाल बिछाया गया । अभि. सा. 5 श्री एस. के. अवस्थी छाया साक्षी था । जब वह शिकायतकर्ता तथा छापामार दल के सदस्यों के साथ 3.50 बजे अपराह्न में शिकायतकर्ता की दुकान पर गया, तो अपीलार्थी वहां मौजूद नहीं थी । लगभग 4.40 बजे अपराह्न में शिकायतकर्ता के पास टेलीफोन आया कि अपीलार्थी अपराह्न में लगभग 5.30/6.00 बजे आएगी । अपीलार्थी 5.20 बजे अपराह्न में सह-अभियुक्त के साथ आई और दस्तावेजों तथा 10,000/- रुपए की रिश्वत की मांग की, जिसका शिकायतकर्ता द्वारा संदाय किया गया । विशेष न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी की दोषिता को साबित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त पारिस्थितिक साक्ष्य है । वास्तव में, पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर एक निष्कर्ष अभिलिखित किया गया कि मांग और प्रतिग्रहण की बात साबित होती है । विद्वान् विशेष न्यायालय के अपीलार्थी के संबंध में दोषसिद्धि के आदेश की उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में पुष्टि की गई है ।

4. इस अपील की सुनवाई करते समय इस न्यायालय की दो माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठ इस निष्कर्ष पर पहुंची कि **बी. जयराज** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] और **पी. सत्यनारायण मूर्ति** बनाम **जिला पुलिस निरीक्षक, आंध्र प्रदेश राज्य और एक अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय की तीन माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठों के विनिश्चय **एम. नरसिंग राव** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[3] वाले मामले में पूर्ववर्ती तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय के विरोध में हैं । तद्नुसार, निम्नलिखित प्रश्न बृहत्तर न्यायपीठ के लिए निर्देशित किया गया :–

> "प्रश्न यह है कि क्या अवैध परितोषण की मांग के संबंध में शिकायतकर्ता के प्रत्यक्ष या प्राथमिक साक्ष्य के अभाव में

---

[1] (2014) 13 एस. सी. सी. 55.

[2] (2015) 10 एस. सी. सी. 152.

[3] (2001) 1 एस. सी. सी. 691.

अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए अन्य साक्ष्य के आधार पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 और धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(घ) के अधीन किसी लोक सेवक की आपराधिता/दोषिता का आनुमानिक निष्कर्ष निकालना अनुज्ञेय नहीं है ।"

5. ऊपर उल्लिखित प्रश्न को विनिश्चय के लिए एक संविधान न्यायपीठ को निर्देशित किया गया, जिसने तारीख 15 दिसंबर, 2022 के निर्णय (2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1724) द्वारा निर्देश का निपटारा किया । मोटे तौर पर, संविधान न्यायपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और 13(2) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अभियोजन में शिकायतकर्ता के परिसाक्ष्य के अभाव में अभियोजन पक्ष परितोषण की मांग को साबित करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य का भी अवलंब ले सकता है । उक्त विनिश्चय के पैरा 74 में संविधान न्यायपीठ ने अपने निष्कर्षों का सारांश दिया है ।

परस्पर विरोधी दलीलें

6. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. नागमुथु ने यह दलील दी कि यह ऐसा मामला है जहां अपीलार्थी द्वारा अवैध परितोषण की मांग का कोई साक्ष्य नहीं है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने दलील दी कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए किसी लोक सेवक द्वारा परितोषण की मांग का सबूत होना अत्यावश्यक है । उन्होंने दलील दी कि निचले न्यायालयों के निष्कर्ष अनुमान और अटकलबाजी पर आधारित हैं ।

7. अभियोजन पक्ष की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् अपर महा-सालिसिटर सुश्री ऐश्वर्या भाटी ने आक्षेपित निर्णयों का समर्थन किया । उन्होंने दलील दी कि अभि. सा. 5 ने मांग को साबित किया है । इसके अतिरिक्त, पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर मांग और प्रतिग्रहण को साबित किया गया था । उन्होंने यह भी दलील दी कि जब

एक बार मांग और प्रतिग्रहण की बात सिद्ध हो जाती है, तो यह उपधारणा की जाती है कि परितोषण के प्रतिग्रहण से हेतु या ईनाम विद्यमान होने की बात साबित होती है । विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने यह दलील दी कि आक्षेपित निर्णयों में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

विधिक स्थिति

8. साक्ष्य का विश्लेषण करने से पूर्व, हमें यह उल्लेख करना होगा कि हम भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और 13, जैसी कि वे तारीख 26 जुलाई, 2018 से 2018 के अधिनियम सं. 16 द्वारा किए गए संशोधन के पूर्व थीं, पर विचार कर रहे हैं । हम धारा 7 और 13 को उसी रूप में निर्दिष्ट कर रहे हैं जिस रूप में वे अपराध करने की तारीख को थीं । धारा 7, जैसी कि वह सुसंगत समय पर अस्तित्व में थी, इस प्रकार है :–

> "**7. लोक सेवक द्वारा पदीय कार्य के लिए वैध पारिश्रमिक से भिन्न परितोषण लिया जाना** – जो कोई लोक सेवक होते हुए या होने की प्रत्याशा रखते हुए वैध पारिश्रमिक से भिन्न किसी प्रकार का भी कोई परितोषण इस बात के करने के लिए हेतु या इनाम के रूप में किसी व्यक्ति से अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए प्रतिगृहीत या अभिप्राप्त करेगा या प्रतिगृहीत करने को सहमत होगा या अभिप्राप्त करने का प्रयत्न करेगा कि वह लोक सेवक अपना कोई पदीय कार्य करे या करने से प्रविरत रहे अथवा किसी व्यक्ति को अपने पदीय कृत्यों के प्रयोग में कोई अनुग्रह या अननुग्रह दिखाए या दिखाने से प्रविरत रहे अथवा केंद्रीय सरकार या किसी राज्य की सरकार या संसद् या किसी राज्य विधान-मंडल में या धारा 2 के खंड (ग) में निर्दिष्ट किसी स्थानीय प्राधिकारी, निगम या सरकारी कंपनी में या किसी लोक सेवक के यहां, चाहे वह नामित हो या नहीं, किसी व्यक्ति का कोई उपकार या अपकार करे या करने का प्रयत्न करे, वह कारावास से, जिसकी अवधि छह माह से कम नहीं होगी किंतु सात वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से भी दंडित किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण –

(क) "लोक सेवक होने की प्रत्याशा रखते हुए" – यदि कोई व्यक्ति जो किसी पद पर होने की प्रत्याशा न रखते हुए, दूसरों को प्रवंचना से यह विश्वास करा कर कि वह किसी पद पर होने वाला है और यह कि तब वह उनका उपकार करेगा, उससे परितोषण अभिप्राप्त करेगा, तो वह छल करने का दोषी हो सकेगा किंतु वह इस धारा में परिभाषित अपराध का दोषी नहीं है ।

(ख) "परितोषण" – "परितोषण" शब्द से धन संबंध परितोषण तक, या उन परितोषणों तक ही, जो धन में आंके जाने योग्य हैं, निर्बंधित नहीं है ।

(ग) "वैध पारिश्रमिक" – "वैध पारिश्रमिक" शब्द उस पारिश्रमिक तक ही निर्बंधित नहीं है जिसकी मांग कोई लोक सेवक विधि पूर्ण रूप से कर सकता है, किंतु इसके अंतर्गत वह समस्त पारिश्रमिक आता है जिसको प्रतिगृहीत करने के लिए उस सरकार या संगठन द्वारा, जिसकी सेवा में है, उसे अनुज्ञा दी गई है ।

(घ) "करने के लिए हेतुक या इनाम" – वह व्यक्ति जो वह कार्य करने के लिए हेतुक या इनाम के रूप में, जिसे करने का उसका आशय नहीं है, या जिसे करने की स्थिति में वह नहीं है या जो उसने नहीं किया है, परितोषण प्राप्त करता है, इस पद के अंतर्गत आता है ।

(ड.) जहां कोई लोक सेवक किसी व्यक्ति को यह गलत विश्वास करने के लिए उत्प्रेरित करता है कि सरकार में उसके असर से उस व्यक्ति को कोई हक अभिप्राप्त हुआ है, और इस प्रकार उस व्यक्ति को इस सेवा के लिए पुरस्कार के रूप में लोक सेवक को धन या कोई अन्य परितोषण देने के लिए उत्प्रेरित करता है, तो यह इस धारा के अधीन लोक सेवक द्वारा किया गया अपराध होगा ।"

9. धारा 13(1)(घ), जैसी कि सुसंगत समय पर अस्तित्व में थी, इस प्रकार है :–

"13. लोक सेवक द्वारा आपराधिक अवचार – (1) कोई लोक सेवक आपराधिक अवचार का अपराध करने वाला कहा जाता है, –

(क) .....

(ख) .....

(ग) .....

(घ) यदि वह –

(i) भ्रष्ट या अवैध साधनों से अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा अभिप्राप्त करता है; या

(ii) लोक सेवक के रूप में अपनी स्थिति का अन्यथा दुरुपयोग करके अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा अभिप्राप्त करता है; या

(iii) लोक सेवक के रूप में पद धारण करके किसी व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा बिना किसी लोक हित के अभिप्राप्त करता है; या

(ड.) ..... ।"

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए परितोषण के लिए मांग और उसका प्रतिग्रहण अत्यावश्यक है ।

10. संविधान न्यायपीठ को उस प्रश्न का विनिश्चय करने के लिए कहा गया था जिसे हमने पहले ही उद्धृत किया है । पैरा 74 में संविधान न्यायपीठ के निष्कर्षों का सारांश दिया गया है, जो इस प्रकार है :–

"74. पूर्वोक्त चर्चा से जो निकलकर आता है उसका सारांश निम्नलिखित है :–

(क) <u>अभियुक्त लोक सेवक की अधिनियम की धारा 7 और 13(1)(घ)(i) और (ii) के अधीन दोषिता को सिद्ध करने के लिए</u>

लोक सेवक द्वारा अवैध परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण के विवाद्यक तथ्य के रूप में अभियोजन पक्ष द्वारा सबूत दिया जाना अत्यावश्यक है ।

(ख) अभियुक्त की दोषिता को सिद्ध करने के लिए, अभियोजन पक्ष को पहले अवैध परितोषण की मांग को और इसके पश्चात् तथ्य के रूप में इसके प्रतिग्रहण की बात को साबित करना चाहिए । इस विवाद्यक तथ्य को या तो प्रत्यक्ष साक्ष्य द्वारा, जो मौखिक साक्ष्य की प्रकृति का हो सकता है या दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है ।

(ग) इसके अतिरिक्त, विवाद्यक तथ्य अर्थात् अवैध परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण के सबूत को प्रत्यक्ष मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के अभाव में पारिस्थितिक साक्ष्य द्वारा भी साबित किया जा सकता है ।

(घ) विवाद्यक तथ्य अर्थात् लोक सेवक द्वारा अवैध परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण को साबित करने के लिए निम्नलिखित पहलुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए :

(i) यदि लोक सेवक से कोई मांग किए बिना रिश्वत देने वाले द्वारा संदाय करने की प्रस्थापना की जाती है और लोक सेवक मात्र प्रस्थापना को प्रतिगृहीत करता है और अवैध परितोषण प्राप्त करता है, तो यह अधिनियम की धारा 7 के अनुसार एक प्रतिग्रहण का मामला है । ऐसे मामले में लोक सेवक द्वारा पहले से मांग किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

(ii) दूसरी ओर, यदि लोक सेवक मांग करता है और रिश्वत देने वाला मांग को स्वीकार करता है और मांग किए गए परितोषण को देता है जो उसके पश्चात् लोक सेवक द्वारा प्राप्त किया जाता है, तो यह एक अभिप्राप्ति का मामला है । अभिप्राप्ति के मामले में, अवैध परितोषण के लिए पहले से

मांग लोक सेवक से उत्पन्न होती है । यह अधिनियम की धारा 13(1)(घ)(i) और (ii) के अधीन अपराध है ।

(iii) उपरोक्त (i) और (ii) दोनों दशाओं में, क्रमश: रिश्वत देने वाले द्वारा प्रस्थापना और लोक सेवक द्वारा मांग को अभियोजन पक्ष द्वारा विवाद्यक तथ्य के रूप में साबित किया जाना चाहिए । दूसरे शब्दों में, अवैध परितोषण के मात्र प्रतिग्रहण या प्राप्ति से किसी और बात के बिना क्रमश: अधिनियम की धारा 7 या धारा 13(1)(घ)(i) और (ii) के अधीन अपराध नहीं बनेगा । अत: अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध सिद्ध करने के लिए एक प्रास्थापना को होना अपेक्षित है जो रिश्वत देने वाले से उत्पन्न होती है और जिसे लोक सेवक द्वारा प्रतिगृहीत किया जाता है जिससे यह अपराध बन जाता है । इसी प्रकार, लोक सेवक द्वारा पहले से की गई मांग को जब रिश्वत देने वाले द्वारा स्वीकार किया जाता है और बदले में संदाय किया जाता है जो लोक सेवक द्वारा प्राप्त किया जाता है, अधिनियम की धारा 13(1)(घ) और (i) तथा (ii) के अधीन अभिप्राप्ति का अपराध होगा ।

(ङ) अवैध परितोषण और प्रतिग्रहण या अभिप्राप्ति के संबंध में तथ्य की उपधारणा न्यायालय द्वारा अनुमान द्वारा केवल तभी की जा सकती है जब बुनियादी तथ्यों को सुसंगत मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साबित किया गया है न कि इनके अभाव में । अभिलेख पर सामग्री के आधार पर न्यायालय को इस बात पर विचार करते समय कि क्या मांग के तथ्य को अभियोजन पक्ष द्वारा साबित किया गया है या नहीं, तथ्य की उपधारणा करने का विवेकाधिकार है । निस्संदेह, तथ्य की उपधारणा अभियुक्त द्वारा खंडन किए जाने के अध्यधीन है और खंडन के अभाव में उपधारणा बनी रहेगी ।

(च) उस दशा में जब शिकायतकर्ता 'पक्षद्रोही' हो जाता है, या मृत्यु हो गई है या विचारण के दौरान अपना साक्ष्य देने के लिए

अनुपलब्ध है, तो अवैध परितोषण की मांग को किसी अन्य साक्षी के साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है जो पुन: या तो मौखिक रूप से या दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साक्ष्य दे सकता है या अभियोजन पक्ष मामले को पारिस्थितिक साक्ष्य द्वारा सिद्ध कर सकता है । विचारण का उपशमन नहीं हो जाता है, न ही इसके परिणामस्वरूप अभियुक्त लोक सेवक की दोषमुक्ति का आदेश किया जाता है ।

(छ) जहां तक अधिनियम की धारा 7 का संबंध है, विवाद्यक तथ्य के सबूत के आधार पर धारा 20 न्यायालय को यह उपधारणा करने के लिए आदिष्ट करती है कि अवैध परितोषण उक्त धारा में यथा वर्णित हेतु या इनाम के प्रयोजन के लिए था । न्यायालय द्वारा उक्त उपधारणा एक विधिक उपधारणा या विधि की उपधारणा के रूप में की जानी चाहिए । निस्संदेह, उक्त उपधारणा भी खंडनीय है । धारा 20 धारा 13(1)(घ) (i) और (ii) को लागू नहीं होती है ।

(ज) हम स्पष्ट करते हैं कि अधिनियम की धारा 20 के अधीन विधि की उपधारणा ऊपर बिंदु (ड.) में निर्दिष्ट तथ्य की उपधारणा से भिन्न है क्योंकि विधि की उपधारणा एक आज्ञापक उपधारणा है जबकि तथ्य की उपधारणा वैवेकिक प्रकृति की है ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

निर्देशित प्रश्न का उत्तर पूर्वोक्त निर्णय के पैरा 76 में दिया गया था, जो इस प्रकार है :–

"76. तद्नुसार, इस संविधान न्यायपीठ के विचार के लिए निर्देशित प्रश्न का निम्नलिखित उत्तर दिया जाता है :

शिकायतकर्ता के साक्ष्य (प्रत्यक्ष/प्राथमिक, मौखिक/दस्तावेजी साक्ष्य) के अभाव में अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए अन्य साक्ष्य के आधार पर किसी लोक सेवक की अधिनियम की धारा 7 और अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(घ) के

अधीन अपराधिता/दोषिता का आनुमानिक निष्कर्ष निकालना अनुज्ञेय है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

11. संविधान न्यायपीठ द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 20 के अधीन उपधारणा के प्रश्न का भी यह अभिनिर्धारित करते हुए उत्तर दिया गया है कि केवल विवाद्यक तथ्यों के सबूत के आधार पर ही धारा 20 न्यायालय को यह उपधारणा करने का आदेश देती है कि अवैध परितोषण धारा 7 (जैसी कि वह 2018 के संशोधन से पूर्व अस्तित्व में थी) में वर्णित अनुसार हेतु या ईनाम के प्रयोजन के लिए था । वास्तव में, संविधान न्यायपीठ ने **बी. जयराज** (उपर्युक्त) और **पी. सत्यनारायण मूर्ति** (उपर्युक्त) वाले मामलों में तीन माननीय न्यायाधीशों की न्यायपीठों द्वारा किए गए दो विनिश्चयों का अनुमोदन किया है । **एन. विजयकुमार** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामलों में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ का एक अन्य विनिश्चय है, जिसमें **बी. जयराज** (उपर्युक्त) और **पी. सत्यनारायण मूर्ति** (उपर्युक्त) वाले मामलों में अपनाए गए दृष्टिकोण का अनुसरण किया गया है । **बी. जयराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय के पैरा 9 में इस न्यायालय ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 20 के अधीन उपधारणा पर विचार किया है । पैरा 9 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है :–

"9. जहां तक अधिनियम की धारा 20 के अधीन की जाने वाली अनुज्ञेय उपधारणा का संबंध है, ऐसी उपधारणा केवल अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के संबंध में की जा सकती है न कि धारा 13(1)(घ)(i) और (ii) के अधीन । किसी भी स्थिति में, केवल अवैध परितोषण के प्रतिग्रहण का सबूत होने पर भी अधिनियम की धारा 20 के अधीन यह उपधारणा की जा सकती है कि ऐसा परितोषण कोई पदीय कार्य करने या करने से प्रविरत रहने के लिए प्राप्त किया गया था । अवैध परितोषण के प्रतिग्रहण

[1] (2021) 3 एस. सी. सी. 687.

का सबूत केवल तभी हो सकता है जब मांग का सबूत हो । चूंकि वर्तमान मामले में इसका अभाव है । इसलिए प्राथमिक तथ्यों का, जिनके आधार पर धारा 20 के अधीन विधिक उपधारणा की जा सकती है, पूरी तरह से अभाव है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

धारा 20 के अधीन उपधारणा का केवल तभी अवलंब लिया जा सकता है जब धारा 7 के अधीन साबित किए जाने के लिए अपेक्षित दो मूलभूत तथ्य साबित हो जाते हैं । उक्त दो मूलभूत तथ्य हैं परितोषण की 'मांग' और 'प्रतिग्रहण' । धारा 20 के अधीन उपधारणा यह है कि जब तक प्रतिकूल साबित नहीं किया जाता है, परितोषण के प्रतिग्रहण के बारे में यह उपधारणा की जाएगी कि यह हेतु या ईनाम के लिए था, जैसा कि धारा 7 द्वारा अनुध्यात किया गया है । इससे यह अभिप्रेत है कि जब एक बार अवैध परितोषण की मांग और इसके प्रतिग्रहण के मूलभूत तथ्य साबित हो जाते हैं, तो तब तक इसके प्रतिकूल साबित नहीं किया जाता है न्यायालय को यह उपधारणा करनी होगी कि धारा 7 द्वारा अनुध्यात अनुसार परितोषण हेतु या ईनाम के रूप में मांगा और प्रतिगृहीत किया गया था । तथापि, यह उपधारणा खंडनीय है । यहां तक कि अधिसंभाव्यता की प्रबलता के आधार पर भी अभियुक्त इस उपधारणा का खंडन कर सकता है ।

12. **एन. विजयकुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में तीन माननीय न्यायाधीशों की एक अन्य न्यायपीठ ने धारा 20 के अधीन उपधारणा और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और धारा 13(2) के साथ पठित धारा 13(1)(घ) के खंड (i) और (ii) के अधीन दंडनीय अपराधों को सिद्ध करने के लिए अपेक्षित सबूत की मात्रा के मुद्दे पर विचार किया था । पैरा 26 में न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"26. यह समान रूप से सुस्थिर है कि मात्र बरामदगी से ही अभियुक्त के विरुद्ध अभियोजन पक्ष का आरोप साबित नहीं हो सकता है । सी. एम. गिरीश बाबू **बनाम** केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो [(2009) 3 एस. सी. सी. 779 = (2009) 2 एस. सी. सी.

(क्रिमिनल) 1] और बी. जयराज **बनाम** आंध्र प्रदेश राज्य [(2014) 13 एस. सी. सी. 55 = (2014) 5 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 543] वाले मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों के प्रतिनिर्देश किया जा सकता है । इस न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णयों में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7, 13(1)(घ)(i) और (ii) के अधीन मामले पर विचार करते हुए यह दोहराया गया है कि आरोप को साबित करने के लिए युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित किया जाना चाहिए कि अभियुक्त ने धन को यह जानते हुए कि यह रिश्वत है, स्वेच्छा से प्रतिगृहीत किया था । अवैध परितोषण के लिए मांग के सबूत का अभाव और करंसी नोट मात्र कब्जे में होने या बरामदगी होना ऐसे अपराध का गठन करने के लिए पर्याप्त नहीं है । उक्त निर्णयों में यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि यहां तक कि अधिनियम की धारा 20 के अधीन उपधारणा केवल अवैध परितोषण के लिए मांग और उसका प्रतिग्रहण साबित हो जाने के पश्चात् ही की जा सकती है । यह भी भलीभांति सुस्थिर है कि दांडिक विधिशास्त्र में निर्दोषिता की आरंभिक उपधारणा विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषमुक्ति से दोहरी हो जाती है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

इस प्रकार, परितोषण के लिए मांग और इसके प्रतिग्रहण को अवश्य युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया जाना चाहिए ।

13. धारा 7, जैसी तारीख 26 जुलाई, 2018 से पूर्व अस्तित्व में थी, वर्तमान धारा 7 से भिन्न थी । असंशोधित धारा 7 में, जो वर्तमान मामले में लागू होती है, विनिर्दिष्ट रूप से "कोई परितोषण" का उल्लेख है । प्रतिस्थापित धारा 7 में "परितोषण" शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, किंतु इसमें एक व्यापक शब्द "असम्यक् लाभ" का प्रयोग किया गया है । जब अभिकथन अभियुक्त द्वारा परितोषण की मांग करने और उसके प्रतिग्रहण का हो, तो यह कोई पदीय कार्य करने के लिए या करने से प्रविरत रहने से हेतु या ईनाम के रूप में होना चाहिए । इस तथ्य को कि परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण धारा 7 में उपबंधित अनुसार हेतु

या ईनाम के लिए थे, इसे धारा 20 के अधीन उपधारणा का अवलंब लेकर साबित किया जा सकता है बशर्ते मांग और प्रतिग्रहण के मूलभूत अभिकथन साबित हो गए हों । इस मामले में, हमारा सरोकार भी धारा 13(1)(घ) के खंड (i) और (ii) के अधीन दंडनीय अपराध से है, जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन दंडनीय है । धारा 13 की उपधारा (1) का खंड (घ), जो तारीख 26 जुलाई, 2018 के संशोधन से पूर्व कानून की पुस्तक में अस्तित्व में था, को पहले ही उद्धृत किया गया है । धारा 13(1)(घ) के खंड (i) और (ii) के मात्र अनुशीलन से यह स्पष्ट है कि अवैध परितोषण के प्रतिग्रहण का सबूत धारा 13(1)(घ) के खंड (i) और (ii) के अधीन अपराधों को साबित करने के लिए आवश्यक होगा । संविधान न्यायपीठ द्वारा जो अधिकथित किया गया है उसे ध्यान में रखते हुए, किसी प्रस्तुत मामले में किसी लोकसेवक द्वारा अवैध परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण को प्रत्यक्ष मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य के अभाव में पारिस्थितिक साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है । संविधान न्यायपीठ ने निर्देशित प्रश्न का उत्तर देते हुए यह मत व्यक्त किया है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और धारा 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए लोक सेवक की अपराधिता/या दोषिता का आनुमानिक निष्कर्ष निकालना अनुज्ञेय है । निष्कर्ष यह है कि प्रत्यक्ष साक्ष्य के अभाव में मांग और/या प्रतिग्रहण की बात को सदैव पारिस्थितिक साक्ष्य जैसे अन्य साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है ।

14. किसी लोकसेवक द्वारा की गई परितोषण की मांग और प्रतिग्रहण के अभिकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया जाना चाहिए । संविधान न्यायपीठ का विनिश्चय युक्तियुक्त संदेह के परे सबूत की इस आरंभिक अपेक्षा को कम नहीं करता है । संविधान न्यायपीठ उन तरीकों के विवाद्यक पर विचार कर रहा था जिनके द्वारा मांग साबित की जा सकती है । संविधान न्यायपीठ ने यह अधिकथित किया कि सबूत केवल प्रत्यक्ष मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा होना आवश्यक नहीं है अपितु यह पारिस्थितिक साक्ष्य सहित अन्य साक्ष्य

द्वारा भी हो सकता है । जब परितोषण के लिए मांग को साबित करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य का अवलंब लिया जाता है, तो अभियोजन पक्ष को उस प्रत्येक स्थिति को अवश्य सिद्ध करना चाहिए जिससे अभियोजन पक्ष चाहता है कि न्यायालय दोषिता का निष्कर्ष निकाले । इस प्रकार सिद्ध तथ्य अवश्य केवल एक कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं कि अभियुक्त द्वारा परितोषण के लिए मांग की गई थी । अत: इस मामले में हमें यह परीक्षा करनी होगी कि क्या मांग का कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य है । यदि हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मांग का कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है तो इस न्यायालय को इस बात पर विचार करना होगा कि क्या मांग को साबित करने के लिए कोई पारिस्थितिक साक्ष्य है ।

अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार

15. अब, अभिलेख पर के साक्ष्य पर आते हैं । अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, प्रत्यक्ष साक्ष्य अभि. सा. 5 श्री एस. के. अवस्थी के साक्ष्य के रूप में है । इस मामले में, शिकायतकर्ता की मृत्यु हो गई थी और इसलिए उसकी परीक्षा नहीं की जा सकी थी । छापामार दल में अभि. सा. 5 श्री एस. के. अवस्थी, सिंचाई विभाग में एक अधिकारी; अभि. सा. 6 श्री ओ. डी. यादव, यातायात निरीक्षक और अभि. सा. 7 श्री निरंजन सिंह, सहायक पुलिस आयुक्त थे । शिकायत के अनुसार, जिसे शिकायतकर्ता के माध्यम से साबित नहीं किया जा सका था, अभियोजन का यह पक्षकथन है कि शिकायतकर्ता से अपीलार्थी द्वारा पहली मांग तारीख 17 अप्रैल, 2000 को सवेरे उस समय की गई थी जब वह उससे उसके निवास पर मिला था । इस मांग के आधार पर विरचित कोई आरोप नहीं है । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, दूसरी मांग छापे के दौरान की गई थी । अपीलार्थी के मकान में की गई पहली मांग के बारे में कतई कोई साक्ष्य नहीं है क्योंकि वहां शिकायतकर्ता के सिवाय कोई और मौजूद नहीं था । अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, अभि. सा. 5 अपीलार्थी द्वारा तारीख 17 अप्रैल, 2000 को लगभग 5.20 बजे अपराह्न में की गई दूसरी मांग का साक्षी था । अभि. सा. 5 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया था कि यद्यपि शिकायतकर्ता ने छापामार दल को यह सूचित किया था कि अपीलार्थी

लगभग 3.50 बजे अपराह्न में उसकी दुकान पर आएगी, किंतु अपीलार्थी नहीं आई थी । बाद में, शिकायतकर्ता को एक टेलीफोन आया जिसमें यह सूचित किया गया कि वह (अपीलार्थी) 5.30/6.00 बजे अपराह्न में आएगी । अंततोगत्वा, अभि. सा. 5 के पक्षकथन के अनुसार, लगभग 5.20 बजे अपराह्न में अपीलार्थी सह-अभियुक्त के साथ शिकायतकर्ता की दुकान पर आई । अभि. सा. 5 का वृत्तांत, जिससे अभियोजन पक्ष के अनुसार मांग का गठन होता है, इस प्रकार है :–

> "श्रीमती नीरज दत्ता ने शिकायतकर्ता से उसके बिजली के मीटर से संबंधित कागजात और 10,000/- रुपए उसे देने के लिए कहा क्योंकि वह जल्दी में थी । शिकायतकर्ता ने अपने बिजली के मीटर के दस्तावेज और अपनी कमीज की बाईं जेब से 10,000/- रुपए के उपचारित करंसी नोट निकालकर श्रीमती नीरज दत्ता को उसके दांए हाथ में सौंपे । श्रीमती नीरज दत्ता ने उक्त करंसी नोट अपने सहयोगी योगेश कुमार को गिनने के लिए दिए और उसने शिकायतकर्ता से कहा कि उसका काम हो जाएगा ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

16. शेष मुख्य परीक्षा अपीलार्थी द्वारा प्रतिग्रहण करने और उससे बरामदगी होने के संबंध में है । अब प्रश्न यह है कि क्या अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त द्वारा की गई परितोषण की मांग को साबित किया है । जब हम धारा 7 के अर्थांतर्गत मांग के सबूत के मुद्दे पर विचार करते हैं, तो यह पूर्णरूपेण धन के लिए मांग नहीं हो सकती है अपितु यह अवैध पारिश्रमिक से भिन्न परितोषण की मांग होनी चाहिए । अभि. सा. 5 ने जो कुछ कहा है वह यह है कि जब अपीलार्थी शिकायतकर्ता की दुकान पर गई, तब उसने शिकायतकर्ता को यह कहते हुए बिजली के मीटर से संबंधित कागजात और 10,000/- रुपए उसे देने के लिए कहा कि वह जल्दी में है । यह ऐसा मामला नहीं है जहां अपीलार्थी द्वारा शिकायतकर्ता से बिजली का मीटर लगाने के लिए छायासाक्षी की मौजूदगी में परितोषण की कोई विनिर्दिष्ट मांग की गई थी । अभि. सा. 5 ने यह कथन नहीं किया है कि उसकी मौजूदगी में अपीलार्थी और शिकायतकर्ता के बीच कोई चर्चा हुई थी, जिसके

आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि अपीलार्थी द्वारा परितोषण के लिए मांग की गई थी । इस साक्षी को इस बारे में कोई जानकारी नहीं थी कि शिकायतकर्ता और अपीलार्थी के बीच पहले क्या घटित हुआ था । अभि. सा. 5 को स्वीकृत रूप से उस प्रयोजन के बारे में कोई जानकारी नहीं थी जिसके लिए शिकायतकर्ता द्वारा अपीलार्थी को अभिकथित रूप से नकदी सौंपी गई थी ।

17. हम यहां यह उल्लेख कर सकते हैं कि अपीलार्थी के दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में दंड प्रक्रिया संहिता) की धारा 313 के अधीन अपने वृत्तांत के अनुसार वह तारीख 17 अप्रैल, 2000 को दिल्ली विद्युत बोर्ड के कार्यालय में अवर श्रेणी लिपिक के रूप में कार्य कर रही थी । उस दिन, वह उपभोक्ताओं से बकाया का संग्रह करने के लिए विभाग द्वारा चलाए जा रहे अभियान में शासकीय ड्यूटी में व्यस्त थी । उसका स्पष्टीकरण यह है कि शिकायतकर्ता उसका पड़ोसी था और वह विद्युत प्रभार जमा करने के लिए उसकी सहायता चाहता था । उसने यह कथन किया था कि पूर्व में उसने शिकायतकर्ता के माध्यम से एक कार की खरीद-फरोख्त का संव्यवहार किया था । उसने यह भी कथन किया कि शिकायतकर्ता का आपराधिक इतिवृत्त था और उसके विरुद्ध तीन प्रथम इत्तिला रिपोर्टें रजिस्ट्रीकृत थीं । इस संदर्भ में, अभि. सा. 5 से प्रतिपरीक्षा में प्रश्न पूछा गया था । अभि. सा. 5 द्वारा दिया गया सुसंगत उत्तर इस प्रकार है :–

> "मैं इस बात की पुष्टि या इनकार नहीं कर सकता कि अभियुक्त नीरज दत्ता ने अपने रोकड़िया और अन्य कर्मचारिवृंद जिसमें 4-5 सदस्य थे, के साथ जय विहार में आयोजित सिंगल डिलिवरी प्वाइंट कैंप में 71,000/- रुपए एकत्रित किए थे और वह अपने कर्मचारिवृंद के साथ अपनी कार में आ रही थी और रास्ते में वह शिकायतकर्ता, जो उसका पड़ोसी था, से अपनी पूर्ववर्ती कार के विक्रय आगम का अतिशेष एक लाख रुपए लेने के लिए शिकायतकर्ता की दुकान पर रुकी थी क्योंकि उसने उक्त कार को शिकायतकर्ता के माध्यम से मैसर्स सागर मोटर्स को बेचा था और यह रकम उसे शिकायतकर्ता के माध्यम से मैसर्स सागर मोटर्स से प्राप्त होनी थी ।"

यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अभि. सा. 5 ने इस सुझाव की शुद्धता की पुष्टि नहीं की किंतु यह कथन किया कि वह इस बात से इनकार भी नहीं कर सकता है । वास्तव में, अभि. सा. 7 अन्वेषण अधिकारी ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि अपीलार्थी की कार में 71,900/- रुपए की नकदी पाई गई थी । इससे प्रतिरक्षा पक्ष के इस कथन का समर्थन होता है कि अपीलार्थी द्वारा एक वसूली अभियान चलाया गया था । अभि. सा. 5 के साक्ष्य के अतिरिक्त, कोई अन्य साक्ष्य नहीं है जो अपीलार्थी द्वारा की गई मांग को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रयोग किया गया हो । यहां तक कि अभि. सा. 5 के मुख्य परीक्षा में किए गए कथनों को सही मान लेने पर भी यह निष्कर्ष निकालना असंभव है कि अपीलार्थी द्वारा परितोषण के रूप में 10,000/- रुपए की मांग की गई थी । धन का संदाय करने के लिए की गई हर मांग परितोषण के लिए मांग नहीं होती है । धन के लिए मात्र मांग से कुछ और अधिक होना चाहिए ।

18. एक और उल्लेखनीय महत्वपूर्ण पहलू है जिससे अभियोजन के पक्षकथन के बारे में गंभीर संदेह उत्पन्न होता है । मृत शिकायतकर्ता द्वारा तारीख 17 अप्रैल, 2000 को भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो द्वारा अभिलिखित किए गए उसके कथन के रूप में फाइल की गई शिकायत में उसने यह कहा था कि तारीख 6 मई, 1996 के आवेदन के अनुसरण में उसकी दुकान में एक मीटर लगाया गया था और कुछ महीनों के पश्चात् उसने पाया कि मीटर हटा लिया गया था । तथापि, विशेष न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के पैरा 19 में यह मत व्यक्त किया है कि तारीख 25 अप्रैल, 2000 को शिकायतकर्ता की प्रेरणा पर बिजली का मीटर चोरी हो जाने के संबंध में एक शिकायत रजिस्ट्रीकृत की गई थी । इस प्रकार, शिकायतकर्ता द्वारा मीटर चोरी हो जाने के संबंध में शिकायत रिश्वत के लिए अभिकथित मांग के 8 दिन पश्चात् की गई थी । वास्तव में, अभि. सा. 7 ने यह स्वीकार किया था कि शिकायतकर्ता ने बिजली का मीटर लगाने के लिए उसके द्वारा किए गए आवेदन की प्रति प्रस्तुत नहीं की

थी । अभि. सा. 7 ने यह भी कथन किया था कि शिकायतकर्ता ने स्पष्ट रूप से यह नहीं बताया था कि उसने ऐसा आवेदन दिया था । ऐसा आवेदन देने के सबूत के अभाव में, नया मीटर लगाने के लिए रिश्वत की मांग के संबंध में अभियोजन का पक्षकथन संदेहास्पद हो जाता है । इसके अलावा, तारीख 24 अप्रैल, 2000 तक शिकायतकर्ता ने इस अपराध के कारित होने के संबंध में कोई शिकायत दर्ज नहीं कराई थी । इससे एक नया बिजली का मीटर लगाने के लिए तारीख 17 अप्रैल, 2000 को परितोषण की मांग करने के संबंध में अभियोजन का पक्षकथन अत्यधिक संदेहास्पद हो जाता है ।

19. प्रस्तुत मामले में, अभिलेख पर लाई गई ऐसी कोई परिस्थिति नहीं है जिससे परितोषण के लिए मांग साबित होती हो । अत: भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के संघटक सिद्ध नहीं होते हैं और परिणामत: धारा 13(1)(घ) के अधीन अपराध लागू नहीं होगा ।

20. इसलिए यह अपील सफल होनी चाहिए । हम आक्षेपित निर्णय और विशेष न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हैं तथा अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त करते हैं । अपीलार्थी के जमानत बंधपत्रों को रद्द किया जाता है । यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2023] 1 उम. नि. प. 423

शिवशंकर और एक अन्य

बनाम

एच. पी. वेदव्यास चार

[2011 की सिविल अपील सं. 10215]

29 मार्च, 2023

न्यायमूर्ति बी. आर. गवई और न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 6, नियम 17 – अपीली प्रक्रम पर अभिवचनों का संशोधन – अनुज्ञेयता – न्यायालयों को ऐसे निवेदनों पर विचार करते हुए अति तकनीकी दृष्टिकोण अपनाने से बचना चाहिए और ऐसे निवेदन को मंजूर करने या न करने के लिए प्रत्येक मामले की विद्यमान परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए और ऐसी अनुज्ञा केवल विरल से विरलतम मामलों में प्रदान की जानी चाहिए तथा ऐसी अनुज्ञा विशेष रूप से अपीली प्रक्रम पर मात्र निवेदन करने के आधार पर प्रदान नहीं की जा सकती और जहां विचारण न्यायालय द्वारा वादियों को वादपत्र का संशोधन मंजूर करने के पश्चात् प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने के लिए अनेक अवसर दिए गए हों और उनके द्वारा इनका उपभोग नहीं किया गया और वाद डिक्रीत किया गया, वहां पश्चात्वर्ती घटनाओं के परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय द्वारा अपीली प्रक्रम पर लिखित कथन में संशोधन मंजूर करने के लिए अनुज्ञा न देने में कोई अनुचितता या अवैधता होना नहीं कहा जा सकता ।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 – आदेश 22, नियम 4 – आवश्यक पक्षकारों का असंयोजन – वाद का उपशमन – मामले के अभिलेख से यह दर्शित होने पर कि प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु हो जाने की दशा में मृत प्रतिवादी के प्रतिनिधियों सहित अन्य प्रतिवादियों द्वारा वाद में अपने हित का संयुक्त रूप से पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व किया जा रहा है और वे मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि भी हैं, तो ऐसी दशा में सभी अन्य विधिक प्रतिनिधियों और प्रतिवादियों के

असंयोजन के कारण उनकी ओर से इस अभिवाक् को स्वीकार नहीं किया जा सकता कि मृत प्रतिवादी के सभी अन्य विधिक प्रतिवादियों के असंयोजन के कारण वाद का उपशमन हो जाना चाहिए ।

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 6 – कब्जे के लिए वाद – प्रतिवादियों द्वारा संपत्ति का स्वामित्व पर-पक्षकारों के पास होने का अभिवाक् करते हुए वाद की संधार्यता को प्रश्नगत किया जाना – जब तथ्यों से यह प्रकट होता हो कि सुसंगत समय पर किसी भी पक्षकार के पास संपत्ति में हक नहीं था, तो केवल पूर्विक कब्जा अधिकारपूर्ण स्वामी के सिवाय समस्त संसार के विरुद्ध धारणात्मक स्वरूप में स्वामी के कब्जे के अधिकार का विनिश्चय करता है इसलिए प्रतिवादियों द्वारा किए गए ऐसे अभिवाक् को स्वीकार न करके उच्च न्यायालय द्वारा ठीक किया गया था ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 136 – उच्चतम न्यायालय की शक्ति – जब निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष अभिलेख पर की सामग्री की सही विचारणा और मूल्यांकन का परिणाम हों, तो ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं होगी ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि इस अपील में प्रत्यर्थी ने यह निवेदन करते हुए एक वाद फाइल किया गया कि "वाद में की अनुसूची की संपत्ति पर अन्य व्यक्तियों को संपत्ति का अन्यसंक्रामण करते हुए दस्तावेज सृजित करने सहित वादी के अधिकार, हक और हित में प्रथम और द्वितीय प्रतिवादियों को या तो स्वयं या उनकी ओर से किसी अन्य के माध्यम से हस्तक्षेप करने से निर्बंधित करते हुए स्थायी व्यादेश की डिक्री के लिए निर्णय प्रदान करना और खर्चा अधिनिर्णीत करना और ऐसा अन्य अनुतोष (अनुतोषों) को प्रदान करना जो न्याय और साम्या के हित में परिस्थितियों के अधीन ठीक और उचित समझा जाए ।" इस अपील में अपीलार्थियों ने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह प्रतिवाद करते हुए लिखित कथन फाइल किया कि विषयांतर्गत वाद संधार्य नहीं है, यह कि कब्जे के लिए कोई निवेदन नहीं किया गया है, यह कि वाद का ठीक प्रकार से मूल्यांकन नहीं किया गया है और यह कि वादांतर्गत संपत्ति के वास्तविक स्वामियों को पक्षकारों के रूप में

अभियोजित नहीं किया गया है । तत्पश्चात्, वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी ने वादपत्र का संशोधन करते हुए वादांतर्गत संपत्ति, जो एक मकान है, का कब्जा प्रत्यावर्तित करने के लिए और वादपत्र की अनुसूची में की संपत्ति में वादी के विधिपूर्ण कब्जे और उपभोग में किसी प्रकार की रीति में हस्तक्षेप न करने के लिए प्रतिवादियों को निदेश देते हुए डिक्री पारित करने का निवेदन किया गया । वादपत्र के संशोधन को मंजूर करते हुए आदेश को प्रतिवादियों द्वारा चुनौती नहीं दी गई और संशोधन के पश्चात् अतिरिक्त लिखित कथन भी फाइल नहीं किया गया । विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और लागू होने वाली विधि के उपबंधों पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित करते हुए वाद को डिक्रीत किया कि वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी प्रतिवादियों से वादपत्र की अनुसूची में की संपत्ति का कब्जा प्रत्युद्धरण करने का हकदार है । प्रतिवादी सं. 3 की वाद के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई । उत्तरजीवी प्रतिवादियों अर्थात् मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 में उच्च न्यायालय के समक्ष विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को चुनौती दी । उक्त प्रथम अपील में उन्होंने अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा की ईप्सा करते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । वस्तुतः, उन्होंने विचारण न्यायालय के समक्ष किसी प्रकार का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था । वादी-प्रत्यर्थी ने अपील की संधार्यता पर आक्षेप किया क्योंकि मूल वाद अर्थात् 1993 का मूल वाद सं. 6456 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया था । उच्च न्यायालय ने उक्त आक्षेप को नामंजूर कर दिया और तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय के अनुसार अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए आवेदन को मंजूर किया और मामले को प्रतिवादियों अर्थात् इस अपील में प्रथम अपीलार्थी और मृतक द्वितीय अपीलार्थी को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देने के पश्चात् नए सिरे से निपटारा करने के लिए विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दिया । वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के उक्त निर्णय को 2008 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 1279 में उच्चतम न्यायालय के समक्ष सारभूत

रूप से यह प्रतिवाद करते हुए चुनौती दी गई कि उक्त वाद विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया वाद होने के कारण उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अपील असंधार्य थी । उच्चतम न्यायालय द्वारा इजाजत दी गई और विशेष इजाजत याचिका से उद्भूत सिविल अपील अर्थात् 2009 की सिविल अपील सं. 5201 का तारीख 3 सितंबर, 2009 के निर्णय के अनुसार यह अभिनिर्धारित करते हुए निपटारा किया गया कि 1993 का मूल वाद सं. 6456 ऐसा वाद नहीं था जो विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन था क्योंकि ईप्सित अनुतोष इसकी परिधि के अंतर्गत नहीं आता है । जबकि वस्तुत:, अपील का नए सिरे से निपटारा करने के लिए तद्धीन मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हुए विचारण न्यायालय को निदेशित किया गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा निदेशित अनुसार साक्ष्य अभिलिखित किया जाए और उस पर उच्च न्यायालय को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए जिससे वह अनुबंधित समय के भीतर अपील का निपटारा करने के लिए समर्थ हो सके । वास्तव में, इसी बीच उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिप्रेषण के आदेश के अनुसरण में विचारण न्यायालय ने मामले को हाथ में लिया और इसे प्रतिवादियों के साक्ष्य के लिए सूचीबद्ध किया । मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 (इस अपील में प्रथम अपीलार्थी और मृत द्वितीय अपीलार्थी) ने विचारण न्यायालय के समक्ष लिखित कथन के संशोधन के लिए एक आवेदन फाइल किया । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय के समक्ष तीन और आवेदन फाइल किए गए । तारीख 13 नवंबर, 2007 के आदेश द्वारा विचारण न्यायालय ने केवल दस्तावेजों को प्रस्तुत करने और अभि. सा. 1 को पुन: बुलाने की अनुज्ञा के लिए आवेदनों को मंजूर किया । वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी ने इसे 2007 की रिट याचिका सं. 18328 में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी और परिणामत:, उच्च न्यायालय ने तारीख 13 नवंबर, 2007 के उक्त आदेश पर रोक लगा दी । इसके पश्चात् ही उच्चतम न्यायालय द्वारा ऊपरवर्णित रीति में 2009 की सिविल अपील सं. 5201 का निपटारा किया गया था । इस न्यायालय के तारीख 3 अगस्त, 2009 के आदेश के अनुसरण में विचारण न्यायालय ने मामले को हाथ में लिया और इसे प्रतिवादियों के साक्ष्य के लिए सूचीबद्ध किया । उन्होंने लिखित

कथन का संशोधन करने की अनुज्ञा की ईप्सा करते हुए 2009 का अंतरिम आवेदन सं. 8 फाइल किया जिसे विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । उसके पश्चात्, द्वितीय प्रतिवादी ने मुख्य परीक्षा के एवज में शपथपत्र फाइल किया और प्रदर्श चिह्नित करवाए और उसकी प्रतिपरीक्षा भी की गई । तथापि, उन्होंने किसी अन्य साक्षी की परीक्षा नहीं कराई । बाद में, विचारण न्यायालय ने अभिलिखित किए गए साक्ष्य को अपनी रिपोर्ट सहित उच्च न्यायालय को प्रेषित कर दिया । रिपोर्ट और अभिलिखित किए गए साक्ष्य की प्राप्ति के अनुसरण में उच्च न्यायालय ने 2007 की नियमित अपील सं. 1966 को हाथ में लिया । प्रतिवादियों अर्थात् उस अपील में अपीलार्थियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अतिरिक्त आधार प्रस्तुत करने और लिखित कथन का संशोधन करने के लिए तीन अंतवर्ती आवेदन फाइल किए । अतिरिक्त आधार उठाने के लिए प्रकीर्ण सिविल आवेदन को सहमति के आधार पर मंजूर किया गया । तथापि, अन्य दो आवेदनों का जोरदार रूप से विरोध किया गया । उच्च न्यायालय ने दलीलों, परस्पर-विरोधी अभिवचनों के प्रतिनिर्देश करके दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक विचार करने के पश्चात् विरचित बिंदुओं का उत्तर इस अपील में अपीलार्थियों के विरुद्ध और इस अपील में प्रत्यर्थी के पक्ष में दिया । लिखित कथन का संशोधन करने और अतिरिक्त आधार प्रस्तुत करने की अनुज्ञा के लिए प्रकीर्ण आवेदन खारिज कर दिए गए । इस अपील में अपीलार्थियों द्वारा वाद की संधार्यता के संबंध में उठाए गए बिंदु को नामंजूर कर दिया गया और वाद को संधार्य होना अभिनिर्धारित किया गया । इस प्रश्न पर कि क्या वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है, इसे नकारात्मक अभिनिर्धारित किया गया । विरचित किए गए बिंदुओं पर निकाले गए निष्कर्षों के आधार पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी निर्णय और डिक्री का हकदार है, जैसी कि विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री की गई है और परिणामत: अपील को खर्चे सहित खारिज कर दिया तथा विचारण न्यायालय की डिक्री की पुष्टि की गई । इससे व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह न्यायालय इस स्थिर स्थिति से अनजान नहीं है कि अभिवचनों के संशोधन के लिए निवेदनों पर विचार करते हुए न्यायालयों को अति तकनीकी दृष्टिकोण अपनाने से बचना चाहिए । किंतु साथ ही साथ हमें इस स्थिति को भी स्मरण करना चाहिए कि लिखित कथन में संशोधन के लिए आवेदन के माध्यम से मात्र अनुरोध करने पर विशिष्ट रूप से अपीली प्रक्रम पर, वहां मंजूरी नहीं दी जा सकती जहां जिसे चुनौती दी गई है वह विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री है और दूसरे शब्दों में, चुनौती प्रतिकूल डिक्री के पश्चात् और एक असली, संधार्य कारण के बिना हो । संक्षेप में, विशिष्ट मामले की विद्यमान परिस्थितियों को यह विचार करने के लिए ध्यान में रखा जाना चाहिए कि क्या ऐसा निवेदन मंजूर किए जाने योग्य है या नहीं और निस्संदेह यह केवल विरल से विरलतम परिस्थितियों में मंजूर किए जाने योग्य है । प्रस्तुत मामले में, वादपत्र के संशोधन के लिए निवेदन को विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 1 सितंबर, 1995 के आदेश के अनुसार मंजूर किया गया था । तद्नुसार, वादी द्वारा संशोधन किया गया था । निर्विवाद रूप से, उसके पश्चात् एक वर्ष या उसके लगभग की अवधि के दौरान उसमें के प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन, यदि कोई है, फाइल करने के लिए आठ से अधिक अवसर दिए गए थे । निस्संदेह, अभिलेख पर की सामग्री से प्रकट होता है कि इन अवसरों का उपभोग नहीं किया गया था और कोई अतिरिक्त लिखित कथन फाइल नहीं किया गया था । उसके पश्चात्, अभिवचनों के आधार पर विवाद्यक विरचित किए गए थे । स्पष्ट रूप से, प्रतिवादियों ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था और इसके सर्वोत्तम कारण उन्हें ही ज्ञात हैं । उसके पश्चात् वाद को डिक्रीत किया गया । अंततोगत्वा, जिसकी परिणति 2007 की नियमित अपील सं. 1966 में तारीख 9 सितंबर, 2010 के आक्षेपित निर्णय सहित 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय के निर्णय के निबंधनों के अनुसार उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय और डिक्री में थोड़े उपांतरण के रूप में हुई । इस न्यायालय द्वारा उक्त सिविल अपील में निर्णय के अनुसरण में उच्च न्यायालय के तारीख 9 सितंबर, 2010 के निर्णय के शेष बचे निदेशों के निबंधनों के अनुसार, जो वास्तव में 2009 की सिविल अपील

सं. 5201 के निर्णय में विलय हो गए थे, द्वितीय प्रतिवादी अर्थात् मृत द्वितीय अपीलार्थी ने तारीख 16 सितंबर, 2009 की अपनी मुख्य परीक्षा के एवज में अपना शपथपत्र फाइल किया और प्रदर्श डी-1 से डी-9 चिह्नित कराए । इसके पश्चात् उसकी प्रतिपरीक्षा की गई । प्रतिवादियों की ओर से किसी अन्य साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी । अभिलेख पर की सामग्री और उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय से यह प्रकट होता है कि मूल प्रतिवादी 1 और 2, जो उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी थे, ने लिखित कथन के संशोधन के लिए और उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में अतिरिक्त आधार प्रस्तुत करने की अनुज्ञा के लिए अपने निवेदनों के समर्थन में विभिन्न दलीलें दी थीं और उन्हें हमारे समक्ष भी दोहराया गया है । यह दलील दी गई कि ऐसे निवेदन करने की ईप्सा करने में विलंब कथित प्रकीर्ण सिविल आवेदनों में किए गए निवेदनों को नामंजूर करने के लिए स्वयमेव एक कारण नहीं हो सकता है और यह भी कि ऐसे निवेदनों को मंजूर करने से इस अपील में प्रत्यर्थी/उस अपील में प्रत्यर्थी पर किसी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा । इस निर्णय में इससे पूर्व निर्दिष्ट की गई घटनाओं के क्रम पर उच्च न्यायालय ने उक्त आवेदनों पर विचार करते हुए और उन आवेदनों के संबंध में विरचित किए गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए भी स्पष्ट रूप से विचार किया था । उच्च न्यायालय द्वारा इन तथ्यों पर विचार किया गया था कि प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने के लिए वादपत्र के संशोधन के पश्चात् तारीख 7 मार्च, 1996 से विवाद्यक विरचित करने अर्थात् तारीख 15 अप्रैल, 1997 तक की अवधि के बीच आठ बार से अधिक अवसर दिए गए थे, यह कि 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 में फाइल किए गए अंतर्वर्ती आवेदन, जिसके आधार पर विचारण न्यायालय को प्रत्यर्थियों को तारीख 29 अक्तूबर, 2007 को पारित किए गए निर्णय और डिक्री के अनुसार साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देने के लिए निदेशित किया गया था, उन्होंने केवल यह दलील देते हुए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा चाही थी कि उन्हें साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर से वंचित किया गया था और उस सुसंगत समय पर भी लिखित कथन के संशोधन के लिए किसी अनुज्ञा की ईप्सा नहीं की गई थी । स्पष्ट रूप से, उच्च न्यायालय ने

यह भी मत व्यक्त किया था कि यदि इस प्रक्रम पर लिखित कथन के संशोधन को मंजूर किया जाता है, तो इससे नए सिरे से विवाद्यकों को विरचित करना आवश्यक हो जाएगा और पक्षकारों को अपने-अपने अधिकारों को इस प्रकार उठाना होगा मानो नया विचारण किया जा रहा हो । इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित पहलुओं पर भी विचार किया था : यह कि प्रतिवादियों द्वारा फाइल किए गए लिखित कथन में उन्होंने अपनी प्रतिरक्षा को प्रकट नहीं किया था और साथ ही उन्होंने उसमें यह भी अभिवाक् नहीं किया था कि वे वादांतर्गत संपत्ति पर काबिज हैं । यह कि उनके अभिवाक् से अनिवार्य रूप से लैटिन की अभिव्यक्ति 'जस्ट टेरटि' का सिद्धांत लागू होता है जिससे यह अभिप्रेत है कि 'तृतीय पक्षकार का अधिकार', यह कि उनके अनुसार तृतीय पक्षकार श्रीमन् माधव संघ, जो एक संगठन है और श्री विट्टल राव हैं, यह कि साक्ष्य में यह आया है कि उन तृतीय पक्षकारों ने इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी को बेदखल करने के लिए 1991 के एच. आर. सी. सं. 10020 के रूप में एक याचिका फाइल की थी । वास्तविकता यह है कि प्रतिवादियों ने यह अभिवाक् किया था कि वादांतर्गत संपत्ति का स्वामित्व उक्त तृतीय पक्षकारों के पास था और विनिर्दिष्ट रूप से कब्जे का दावा नहीं किया था और इसके पश्चात् ही उन्होंने यह एक नया अभिवाक् लाने की ईप्सा की थी कि उन पक्षकारों अर्थात् प्रथम प्रतिवादी/इस अपील में प्रथम अपीलार्थी के बीच हुए तारीख 1 मार्च, 1993 के विक्रय करार, प्रदर्श डी-1 के अनुसरण में वाद की अनुसूची में की संपत्ति प्रथम अपीलार्थी को परिदत्त कर दी गई थी । किंतु उच्च न्यायालय द्वारा इन्हें नामंजूर करते हुए दिया गया महत्वपूर्ण कारण यह है कि प्रथम प्रतिवादी/इस अपील में प्रथम अपीलार्थी कटघरे में नहीं आया था और मृत द्वितीय प्रतिवादी/द्वितीय प्रत्यर्थी ने अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा किए जाने के समय मुख्य परीक्षा की एवज में फाइल किए गए अपने शपथपत्र के पैरा 8 में और इसके द्वारा स्वयं यह स्वीकार किया था कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी तब वाद की अनुसूची 'क' में की संपत्ति (जिसमें 'ख' अनुसूची भी सम्मिलित है) पर काबिज था । इसके अतिरिक्त, यह पाया गया था कि प्रतिपरीक्षा के दौरान प्रति. सा. 1 ने

स्वीकार किया था कि प्रदर्श डी-1 की तारीख को संपत्ति का कब्जा नहीं लिया गया था क्योंकि श्रीमन् माधव संघ ने कब्जा प्राप्त करने और इसे प्रथम प्रतिवादी को सौंपने का आश्वासन दिया था । इस प्रकार, अभिलेख पर की सामग्री से प्रकट इन परिस्थितियों में, और जब इन पहलुओं और साक्ष्य पर उच्च न्यायालय द्वारा लिखित कथन में संशोधन करने के लिए अनुज्ञा को अस्वीकार करने के लिए विचार किया गया था, तो यह न्यायालय इसमें हस्तक्षेप करने के लिए कोई कारण या औचित्य नहीं पाता है । अपने मत को पुष्ट करने के लिए, यह न्यायालय कतिपय अन्य पहलुओं पर भी विचार करेगा । प्रति. सा. 1 द्वारा की गई ऊपर उल्लिखित स्वीकारोक्ति के मद्देनजर, लिखित कथन का संशोधन करके इस नए अभिवाक् को लाने के प्रयत्न को देखा जाना चाहिए कि द्वितीय प्रतिवादी (मृत द्वितीय अपीलार्थी) ने वाद की अनुसूची में की संपत्ति को तारीख 5 अक्तूबर, 2010 के विक्रय विलेख, प्रदर्श डी-2 के अनुसार खरीदा था । चूंकि स्वीकृत रूप से और निर्विवाद रूप से जिस वाद से अपील उद्भूत हुई थी वह वाद कब्जा-हक पर आधारित था, इसलिए विक्रय विलेख प्रदर्श डी-2 की वैधता पर इस अपील में विचार करने की आवश्यकता नहीं है और उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही विचार नहीं किया गया था । स्पष्ट रूप से, उच्च न्यायालय ने इस पर विचाराधीन वाद के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही करने से इनकार कर दिया था । यदि यह मान भी लिया जाए कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 के उपबंध प्रस्तुत मामले में लागू नहीं होते हैं, तो भी यह विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता है कि इस उपबंध में अंतर्विष्ट सिद्धांत प्रस्तुत मामले में लागू होता है । यह लगभग एक स्थिर स्थिति है कि जहां कहीं संपत्ति अंतरण अधिनियम लागू नहीं होता है, उक्त अधिनियम के उक्त उपबंध में का यह सिद्धांत, जो न्याय, साम्य और शुद्ध अंत:करण पर आधारित है, न्यायालय के द्वारा विक्रय इत्यादि जैसी इसी प्रकार की परिस्थिति में लागू होता है । वादकालीन कब्जे का अंतरण भी धारा 52 के अर्थांतर्गत संपत्ति का अंतरण होगा और इसलिए संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 का आशय यह है कि यदि किसी वाद के लंबित रहने के दौरान स्थावर संपत्ति में कोई अंतरण का अधिकार है तो ऐसा अंतरण विधि की दृष्टि में तब नास्ति होगा यदि

संबंधित संपत्ति में वाद के अन्य पक्षकार के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो । हम यह भी कहना चाहेंगे कि धारा 52 का प्रभाव यह है कि उस संपत्ति के संबंध में मुकदमे में सफल पक्षकार का अधिकार अन्यसंक्रामण से प्रभावित नहीं होगा, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि अंतरक के विरुद्ध संव्यवहार अविधिमान्य है । इस स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त सूत्र के सिद्धांतों के उपयोजन के प्रतिषेध का प्रभाव वाद के संस्थित करने पर हो जाएगा । जो भी स्थिति हो, इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि उच्च न्यायालय ने इन परिस्थितियों में अपीली प्रक्रम पर लिखित कथन के संशोधन के लिए आवेदन पर विचार करते हुए यह निष्कर्ष निकालने में पूरी तरह से न्यायोचित किया था कि इसकी मंजूरी देने से, वस्तुत: नए सिरे से विवाद्यकों को विरचित करना आवश्यक हो जाएगा और पक्षकारों को अपने अधिकारों को उठाने के लिए इस प्रकार बाध्य करेगा मानो नए सिरे से विचारण किया जा रहा हो । हमने पूर्वोक्त पहलुओं को केवल इस बिंदु को स्पष्ट करने के लिए निर्दिष्ट किया है कि चूंकि विषयांतर्गत वाद केवल कब्जा हक अर्थात् पूर्विक कब्जे पर आधारित है इसलिए मृत द्वितीय अपीलार्थी द्वारा वाद के लंबित रहते हुए संपत्ति खरीदे जाने के अभिवाक् को लाने के लिए लिखित कथन का संशोधन करने के लिए निवेदन के संबंध में निष्कर्ष और पारिणामिक नामंजूरी से यह नहीं कहा जा सकता है कि इसके परिणामस्वरूप घोर अन्याय हुआ है । इस संदर्भ में एक अन्य निर्विवाद स्थिति को निर्दिष्ट करना भी अनुचित नहीं होगा । अभिलेख पर की सामग्री से प्रकट होता है कि विचारण न्यायालय ने निर्णय और डिक्री पारित करने से पूर्व प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने के लिए कई अवसर दिए थे किंतु वे न केवल अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने में असफल रहे अपितु विचारण न्यायालय के समक्ष मूल कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान उसके समक्ष लिखित कथन के संशोधन के लिए कोई आवेदन फाइल करने में भी असफल रहे थे । यह वास्तविकता है कि प्रतिवादियों ने लिखित कथन के संशोधन के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष आवेदन उस समय फाइल किया था जब 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय के आदेश के अनुसरण में विचारण

न्यायालय को मामला केवल साक्ष्य अभिलिखित करने के प्रयोजन के लिए और इसे एक रिपोर्ट सहित उच्च न्यायालय को प्रेषित करने के लिए भेजा गया था जिससे उच्च न्यायालय 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 का निपटारा करने के लिए समर्थ हो सके । इसके अतिरिक्त, यह एक निर्विवाद तथ्य है कि 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 में लिखित कथन के संशोधन के लिए अनुज्ञा प्रदान करने हेतु निवेदन के साथ आवेदन फाइल करते समय भी प्रतिवादियों ने विलंब के लिए कोई कारण नहीं दिए थे और ऐसा आवेदन विचारण न्यायालय के समक्ष उस समय फाइल न करने के लिए कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण नहीं दिया था जब विचारण न्यायालय के समक्ष मूल कार्यवाहियां लंबित थीं । जो कारण दिया गया था वह यह है कि वे भूल और चूक के कारण अतिरिक्त लिखित कथन फाइल नहीं कर सके थे । लिखित कथन के संशोधन के लिए आवेदन फाइल न करने के लिए कोई अन्य कारण नहीं दिया गया था । संपूर्ण परिस्थितियों में, विशेष रूप से लिखित कथन के संशोधन के लिए निवेदन को नामंजूर करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए सुसंगत कारणों पर विचार करते हुए और विलंब तथा इसके लिए कोई कारण देने में असफलता और इसमें ऊपर उल्लिखित कारणों को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय को लिखित कथन के संशोधन के लिए निवेदन को नामंजूर करने में कोई अनुचितता या अवैधता होना अभिनिर्धारित करने के लिए कतई कोई कारण दिखाई नहीं देता है । इस न्यायालय ने निचले न्यायालयों के निर्णयों में सहमतिजन्य बिंदु पाए हैं । वाद की संधार्यता प्रश्नों पर, क्या वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है तथा क्या वाद को मूल तृतीय प्रतिवादी की मृत्यु होने पर सभी विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित न करने के कारण सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध उपशमन हो जाना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था, के बारे में निचले न्यायालयों ने अपीलार्थियों के विरुद्ध समवर्ती निष्कर्ष निकाले हैं । इस न्यायालय को समझ नहीं आता कि कैसे वाद की संधार्यता के संबंध में अभिवाक् विचार के लिए उद्भूत होता है । अपीलार्थियों की दलील यह है कि इसे विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया था और 2009 की सिविल अपील सं. 5201 का निपटारा

करते हुए इस न्यायालय ने इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी के विरुद्ध यह अभिनिर्धारित किया था कि वाद विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन नहीं है । परिणामत:, अपीलार्थियों के अनुसार वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी द्वारा कब्जे के लिए दावा किया गया अनुतोष ग्रहण करने योग्य नहीं था क्योंकि वह केवल कब्जा हक का दावा करने वाला व्यक्ति है और मूल प्रतिवादी सं. 2/मृत अपीलार्थी सं. 2 वाद की अनुसूची में की संपत्ति का विधिपूर्ण स्वामी है । यद्यपि ये दलीलें प्रथमदृष्ट्या आकर्षक और स्वीकार्य प्रतीत होती हैं किंतु वास्तविकता यह है कि वे पूरी तरह से अमान्य हैं और अभिलेख पर की सामग्री को देखते हुए ठीक ही उनके विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया है । (पैरा 14, 15, 16, 17, 18, 23, 24 और 25)

यह स्पष्ट है कि प्रतिवादियों के उपलब्ध अभिवचनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि उन्होंने अपने लिखित कथन में अपनी प्रतिरक्षा प्रकट नहीं की थी और साथ ही साथ उसमें यह भी अभिवाक् नहीं किया था कि वे वादांतर्गत संपत्ति पर काबिज हैं । इस न्यायालय के अनुसार, ऐसी परिस्थितियों में जब तथ्यों से किसी भी पक्षकार के पक्ष में सुसंगत समय पर हक प्रकट नहीं होता है, तो केवल पूर्विक कब्जा अधिकारपूर्ण स्वामी के सिवाय समस्त संसार के विरुद्ध स्वामी के धारणात्मक स्वरूप में भूमि के कब्जे के अधिकार का विनिश्चय करता है । इस संदर्भ में, 'पोसेसियो कोंट्रा ओम्नेस वालेट प्राएटर एयूर क्यू आयस सिट पोसेसनिस' (वह जिसके पास कब्जा है, उसके पास सभी के विरुद्ध अधिकार है उसके सिवाय जिसके पास असली अधिकार है) सूत्र को निर्दिष्ट करना उपयोगी है । इस मामले में अभिप्राप्त तथ्यात्मक स्थिति और ऊपरनिर्दिष्ट विनिश्चयों में स्थिर की गई विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का यह दृढ़ मत है कि उच्च न्यायालय ने वाद की संधार्यता के प्रश्न को सकारात्मक और इस अपील में प्रत्यर्थी के पक्ष में अभिनिर्धारित करके ठीक किया है । (पैरा 30 और 31)

अब, यह न्यायालय इस प्रश्न पर विचार करेगा कि क्या सभी प्रत्यर्थियों के विरुद्ध उन्हें प्रतिस्थापित न करने के कारण और मूल तृतीय

प्रतिवादी-हनुमय्या की मृत्यु होने पर सभी विधिक प्रतिनिधियों को पक्षकार बनाने में असफल रहने के कारण वाद का उपशमन होना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था, जैसी कि अपीलार्थियों द्वारा दलील दी गई है । इसी कारण के आधार पर यह दलील भी दी गई है कि आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण वाद दूषित है । अत: इन प्रश्नों पर संयुक्त रूप से विचार किया जाना चाहिए । स्पष्ट रूप से, निचले न्यायालयों ने प्रतिवादियों की उक्त दलीलों को कायम रखने से इनकार कर दिया था । यह उल्लेखनीय है कि अपीलार्थियों ने एक यह भी दलील दी है कि श्रीमन् माधव संघ जो एक संगठन है और श्री विट्टल राव को वाद के पक्षकारों के रूप में अभियोजित किया जाना चाहिए था और उनको अभियोजित न करने के कारण वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है । इस पर विचार करते हुए, इस तथ्य को भी ध्यान में रखा जाना आवश्यक है, जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही विचार किया गया था, कि पूर्वोक्त श्रीमन् माधव संघ और श्री विट्टल राव ने बेदखली के लिए इस अपील में प्रत्यर्थी के विरुद्ध 1991 की एचआरसी सं. 10020 के रूप में एक याचिका फाइल की थी जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि उसमें का प्रथम प्रत्यर्थी (इस अपील में प्रत्यर्थी) अनुसूचित संपत्ति के एक भाग के अधिभोग में है और उसने अवैध रूप से और अप्राधिकृत रूप से संपत्ति के अन्य दो भागों को उसमें के द्वितीय और तृतीय प्रत्यर्थियों अर्थात् श्री बी. रामचंद्र राव और श्री एन. मुरलीधर राव को क्रमश: 400/- रुपए और 300/- रुपए के मासिक किराए पर उप किराएदारी पर दिया है और उनसे किराया ले रहा है । इसके अतिरिक्त, यह तथ्य है कि इस अपील में मृत द्वितीय अपीलार्थी की प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा करते हुए उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि तारीख 1 मार्च, 1993 के विक्रय करार प्रदर्श डी-1 के निष्पादन के पश्चात् कोई कब्जा नहीं लिया गया था क्योंकि श्रीमन् माधव संघ ने कब्जा प्राप्त करने और इस अपील में प्रथम अपीलार्थी/प्रथम प्रतिवादी को सौंपने का आश्वासन दिया था । जब स्थिति यह है और जब विषयांतर्गत वाद ऐसा है जो पूर्विक कब्जे पर आधारित है, तो इस अपील में अपीलार्थियों की यह दलील औचित्यपूर्ण नहीं है कि श्रीमन् माधव संघ और श्री विट्टल राव के असंयोजन के

कारण वाद दूषित है । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अपीलार्थियों ने यह भी दलील दी है कि मृत प्रतिवादी सं. 3 के सभी विधिक प्रतिनिधियों को उसकी मृत्यु के उपरांत प्रतिस्थापित न करने के कारण वाद का सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध उपशमन हो जाना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था । यह दलील आधारहीन और गुणागुण रहित है तथा निचले न्यायालय द्वारा इसे ठीक ही नामंजूर किया गया है । इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि प्रथम अपीलार्थी और मृत द्वितीय अपीलार्थी के साथ-साथ उनके पिता हनुमय्या को भी वाद में प्रतिवादियों के रूप में नामित किया गया था और वे संयुक्त रूप से वाद की प्रतिरक्षा कर रहे थे । मूल तृतीय प्रतिवादी अर्थात् हनुमय्या की मृत्यु के उपरांत मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2, जो मूल प्रतिवादी सं. 3 के पुत्र हैं, ने संयुक्त हित का पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व करते हुए वाद का प्रतिवाद किया गया था और उसके पश्चात् वाद में प्रतिकूल निर्णय और डिक्री सहन करने के पश्चात् उच्च न्यायालय के समक्ष तत्परता से अपील फाइल की थी जिसकी परिणति अंततोगत्वा आक्षेपित निर्णय और डिक्री में हुई थी । यदि संयुक्त हित की दलील को सही मान लिया जाए, तो उसके पश्चात् भी, स्पष्ट रूप से वे संयुक्त हित को शीर्षक अपील फाइल करके तत्परता से अग्रसर कर रहे हैं । इस न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि अनुरूपता उस मामले में लागू होती है जहां प्रतिवादियों में से किसी की मृत्यु होने की दशा में भी जब अन्य प्रतिवादियों द्वारा मृत प्रतिवादी सहित संयुक्त रूप से वाद में संपदा/हित का पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व किया जा रहा हो और जब वे उसके विधिक प्रतिनिधि भी हों । ऐसे मामलों में, उक्त प्रतिवादी की मृत्यु के परिणामस्वरूप सभी विधिक उत्तराधिकारियों के असंयोजन के कारण प्रतिवादियों को यह दलील देते हुए नहीं सुना जा सकता कि मृत प्रतिवादी के सभी अन्य विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित न करने के कारण वाद का उपशमन हो जाना चाहिए । इस मामले में, यह उल्लेखनीय है कि मृत तृतीय प्रत्यर्थी के साथ-साथ प्रतिवादी सं. 1 और 2 संयुक्त रूप से अपने हित की प्रतिरक्षा कर रहे थे । अत: पूर्वोक्त विनिश्चय के विनिश्चयाधार को लागू करते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी/मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने मूल प्रतिवादी

सं. 3 की मृत्यु के बावजूद वाद की प्रतिरक्षा की थी और प्रथम अपील फाइल और अग्रसर की थी । द्वितीय अपीलार्थी की मृत्यु के उपरांत प्रथम अपीलार्थी द्वारा मृत द्वितीय अपीलार्थी के प्रतिस्थापित विधिक प्रतिनिधियों के साथ इस कार्यवाही में संयुक्त हित को पूर्णत: और सारभूत रूप से अग्रसर किया जा रहा है, इसलिए हम निचले न्यायालयों के इस दलील को नामंजूर करते हुए निकाले गए निष्कर्षों से असहमत होने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं कि मृत तृतीय प्रतिवादी के सभी विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित न करने के कारण सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध वाद का उपशमन हो जाना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था । इसी कारण से, यह दलील भी असफल हो जानी चाहिए कि उसके सभी विधिक उत्तराधिकारियों/प्रतिनिधियों के आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण वाद दूषित था । एक और अन्य कारण भी है, क्यों यह दलील असफल होनी चाहिए कि वाद मृत तृतीय प्रतिवादी श्री हनुमय्या के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर न लाने से आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित था । इस न्यायालय ने पहले ही उस पक्षकथन का उल्लेख किया है जिसे प्रतिवादियों ने वाद में फाइल लिखित कथन में आवश्यक अभिवचन किए बिना इसमें लाने की ईप्सा की थी । प्रदर्श डी-1 का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई कि अपीलार्थी/प्रथम प्रतिवादी के पक्ष में संयुक्त रूप से श्रीमन् माधव संघ और श्री विट्टल राव द्वारा निष्पादित वाद की अनुसूची में की संपत्ति के विक्रय करार के अनुसरण में इसका कब्जा इस अपील में प्रथम अपीलार्थी को सौंपा गया था । इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा की गई इसकी नामंजूरी को पहले ही कायम रखा है । तथापि, हम उक्त दलील से जो निकाल रहे हैं वह यह है कि इसके आधार पर अपीलार्थी आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के आधार को नहीं उठा सकते हैं, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, क्योंकि प्रथम अपीलार्थी को स्वयं उसी वाद में एक पक्षकार के रूप में नामित किया गया था और वह ऐसा व्यक्ति है जिसके पक्ष में यह विक्रय करार अभिकथित रूप से निष्पादित किया गया था । प्रदर्श डी-2 विक्रय विलेख के आधार पर दी गई दलील को भी उच्च न्यायालय द्वारा नामंजूर कर दिया गया था और इस न्यायालय ने भी उसे कायम रखा है । यह न्यायालय उसका पुन: इस स्थिति पर बल

देने के लिए उल्लेख कर सकता है कि इसके आधार पर बनाया गया मामला किसी भी प्रकार से आवश्यक पक्षकार/पक्षकारों के असंयोजन के बारे में दलील देने के लिए आधार नहीं हो सकता है । ऐसा इसलिए है क्योंकि मृत द्वितीय अपीलार्थी, जिसे तद्धीन विक्रेता दिखाया गया था, वाद में मूल द्वितीय प्रतिवादी था । उपरोक्त कारणों से भी आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन की दलील असफल होनी चाहिए । इस न्यायालय ने पहले ही यह पाया है कि निचले न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में सही हैं कि प्रतिवादियों का वाद की अनुसूची में की संपत्ति पर स्वामित्व का मामला नहीं था और प्रदर्श डी-2 के आधार पर ऐसा मामला लाने के लिए की गई ईप्सा को उच्च न्यायलय द्वारा नामंजूर कर दिया गया था और हमने इसे कायम रखा है । वे कब्जे के लिए कोई बेहतर दावा सिद्ध करने में भी असफल रहे हैं । उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि समुचित अभिवचनों के बिना साक्ष्य की कोई मात्रा मायने नहीं रखेगी, विधि की सही प्रतिपादना है । ऐसी परिस्थितियों में, इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने के लिए कतई कोई संकोच नहीं है कि मूल प्रतिवादी लिखित कथन में यह पर्याप्त और समुचित अभिवचन करने में असफल रहे थे कि उनके पास वादांतर्गत संपत्तियों के कब्जे के लिए बेहतर अधिकार हैं । समुचित अभिवचनों के बिना दिए गए सबूत की किसी मात्रा की कोई सुसंगतता नहीं होगी । निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने के लिए अभि. सा. 5 के साक्ष्य का ठीक ही अवलंब लिया है कि प्रतिवादियों को 'ख' अनुसूची की संपत्ति से बलपूर्वक बेकब्जा किया गया था । उक्त निष्कर्ष को कायम न रखने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है । ऊपर उल्लिखित प्रश्नों पर विचार करने और उत्तर देने के पश्चात् हम यह पता लगाने के लिए उत्सुकतापूर्वक विचार करेंगे कि क्या आक्षेपित निर्णय अनुचितता या किसी स्पष्ट अवैधता से ग्रसित है जिससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप करना आवश्यक हो । निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए ठोस कारण हमें इसका नकारात्मक उत्तर देने के लिए प्रेरित करते हैं । विचारण न्यायालय अभिलेख पर के साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी वाद की अनुसूची की उस संपत्ति का कब्जा

वापस लेने का हकदार है जिससे उसे बेकब्जा किया गया था और विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय को प्रेषित अतिरिक्त साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् ही तथा अनेक विनिश्चयों के प्रतिनिर्देश करके सभी दलीलों और पहलुओं पर विचार करते हुए उच्च न्यायालय ने केवल विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि की थी । जैसा कि पहले मत व्यक्त किया गया है, जब निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष अभिलेख पर की सामग्री की सही विचारणा और मूल्यांकन करने का परिणाम है, तो इसलिए उनमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । इस प्रकार, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वाद निर्विवाद रूप से पूर्व अनुज्ञा लेकर और अवैध रूप से बेकब्जा करने के आधार पर फाइल किया गया था, इसलिए हम विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान की गई डिक्री, जिसकी पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की गई है, के लिए इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी के हक पर निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों को विस्थापित करने के लिए मृत द्वितीय अपीलार्थी के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख प्रदर्श डी-2 (भले ही स्वामियों द्वारा निष्पादित किया गया हो) को स्थापित करने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं । (पैरा 32, 33, 36, 37, 38, 39, 40 और 41)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	(2016) 2 एस. सी. सी. 82 : **आंध्र प्रदेश राज्य** मार्फत **प्रधान सचिव और अन्य** बनाम **प्रताप करण और अन्य** ;	35
[2013]	(2013) 5 एस. सी. सी. 397 : **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लि.** बनाम **नानक बिल्डर्स एंड इन्वेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड** ;	16
[2012]	(2012) 8 एस. सी. सी. 148 : **भारत संघ** बनाम **इब्राहिम उद्दीन और एक अन्य** ;	38
[2011]	(2011) 2 एस. सी. सी. 330 : **गायत्री वूमेंस वेल्फेयर एसोसिएशन** बनाम **गौरम्मा और एक अन्य** ;	18, 19

[2000] (2000) 7 एस. सी. सी. 357 :
युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया, कलकत्ता बनाम
अभिजीत टी. कंपनी (प्रा.) लिमिटेड और अन्य ; 21

[1995] (1995) (सप्ली.) 3 एस. सी. सी. 331 :
भूरे खान बनाम **यासीम खान (मृत), विधिक**
प्रतिनिधियों की मार्फत और अन्य ; 34

[1989] (1989) 4 एस. सी. सी. 131 :
कृष्णा राम महाले (मृत), विधिक प्रतिनिधियों
की मार्फत बनाम **श्रीमती शोभा वेंकट राव** ; 27

[1987] (1987) 1 एस. सी. सी. 254 :
दुग्गी वीरा वेंकट गोपाला सत्यनारायण
बनाम **साकला वीरा राघवय्या और एक अन्य** ; 38

[1981] (1981) 3 एस. सी. सी. 103 :
हसमत राय और एक अन्य बनाम **रघुनाथ प्रसाद** ; 38

[1979] (1979) 4 एस. एस. सी. 163 :
पंडित ईश्वरदास बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**
और अन्य ; 18

[1971] 1971 जे. एल. जे. एस. एन. 159 :
रुखमानंद बनाम **दीनबंध** ; 22

[1968] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1165 :
नायर सर्विस सोसायटी लि. बनाम
रेवरेण्ड फादर के. सी. अलेक्जेंडर और अन्य ; 27, 28

[1900] (1900) आई. एल. आर. 23 मद्रास 179 :
मुस्तफा साहेब बनाम **संथा पिल्लै** । 28

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की सिविल अपील सं. 10215.

2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर द्वारा तारीख 9 सितंबर, 2010 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सुश्री किरन सूरी, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सर्वश्री टी. एस. शांति, नरेन्द्र कुमार और संजीव कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री नरेन्द्र हुड्डा, ज्येष्ठ अधिवक्ता, अलजो के. जोसफ, शौर्य लांबा, (सुश्री) शेलना के. और रितेश कुमार चौधरी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सी. टी. रविकुमार ने दिया ।

न्या. रविकुमार – 14वें अपर नगर सिविल न्यायाधीश, बंगलोर के न्यायालय की फाइल पर 1993 के मूल वाद सं. 6456 में प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 में माननीय कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलुरु द्वारा तारीख 9 सितंबर, 2010 को पारित निर्णय और डिक्री को प्रश्नगत करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन यह अपील फाइल की है । वे उक्त वाद में तृतीय प्रतिवादी, जिसकी इस वाद के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी, के पुत्र हैं । उन्होंने कथित प्रथम अपील 1993 के मूल वाद सं. 6456 में तारीख 4 जुलाई, 2007 के निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट होकर फाइल की थी । शीर्षक अपील के लंबित रहने के दौरान द्वितीय अपीलार्थी की मृत्यु हो गई और परिणामत: उसके विधिक उत्तराधिकारियों को अतिरिक्त अपीलार्थियों 2.1 से 2.4 के रूप में पक्षकार बनाया गया । फलस्वरूप, इस अपील में इसके पश्चात् मूल प्रथम अपीलार्थी और मृत द्वितीय अपीलार्थी के पक्षकार बनाए गए विधिक उत्तराधिकारियों को सामूहिक रूप से 'अपीलार्थियों' के रूप में, जब तक अन्यथा विनिर्दिष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया जाता है, वर्णित किया गया है । इस अपील में प्रत्यर्थी उक्त वाद में वादी था जो मूलत: यह निवेदन करते हुए फाइल किया गया था :–

> "वाद में संलग्न अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति पर और उसमें अन्य व्यक्तियों को संपत्ति का अन्यसंक्रामण करते हुए दस्तावेज सृजित करने सहित वादी के अधिकार, हक और हित में प्रथम और द्वितीय प्रतिवादियों को या तो स्वयं या उनकी ओर से किसी अन्य

के माध्यम से हस्तक्षेप करने से निर्बंधित करते हुए स्थायी व्यादेश की डिक्री के लिए निर्णय प्रदान करना और खर्चा अधिनिर्णीत करना और ऐसा अन्य अनुतोष (अनुतोषों) को प्रदान करना जो न्याय और साम्या के हित में परिस्थितियों के अधीन ठीक और उचित समझा जाए ।"

2. इस अपील में अपीलार्थियों ने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह प्रतिवाद करते हुए लिखित कथन फाइल किया कि विषयांतर्गत वाद संधार्य नहीं है, यह कि कब्जे के लिए कोई निवेदन नहीं किया गया है, यह कि वाद का ठीक प्रकार से मूल्यांकन नहीं किया गया है और यह कि वादांतर्गत संपत्ति के वास्तविक स्वामियों को पक्षकारों के रूप में अभियोजित नहीं किया गया है । तत्पश्चात्, वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी ने पैरा 9(क), अनुसूची 'क', 'ख' और 'ग' जोड़ते हुए वादपत्र का संशोधन किया और उनके संबंध में निवेदन अर्थात् निवेदन 'ख' भी किए । संयुक्त रूप से, वादांतर्गत संपत्ति, जो एक मकान है जिसका संख्यांक बी-91 है, को 'क अनुसूची' के रूप में वर्णित किया गया है और उसमें से वर्णित सीमाओं के भीतर 35 फुट × 40 फुट माप के एक भाग को 'ख अनुसूची' के रूप में वर्णित किया गया है । इसमें वर्णित अनुसार 'ग अनुसूची' परिसर सं. बी-91 का भाग है । संक्षेप में, संशोधित वादपत्र में किए गए निवेदन निम्नलिखित हैं :–

"(क) वादी को अनुसूची में के परिसरों का कब्जा प्रत्यावर्तित करने के लिए और अनुसूची में की संपत्ति में वादी के विधिपूर्ण कब्जे और उपभोग में किसी प्रकार की रीति में हस्तक्षेप न करने के लिए प्रतिवादियों को निदेश देते हुए प्रतिवादी सं. 1 से 3 के विरुद्ध शाश्वत व्यादेश का निर्णय और डिक्री ।

(ख) 'ख अनुसूची' में की संपत्ति, जो संलग्न कच्चे नक्शे में 'कखगघ' के रूप में चिह्नित है, का कब्जा प्रत्यावर्तित करने के लिए प्रत्यर्थियों को निदेश देते हुए आज्ञापक व्यादेश के लिए प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निर्णय और डिक्री, और 'गघङच' भाग, जो वाद की 'ग' अनुसूची के रूप में चिह्नित है, के लिए स्थायी व्यादेश के लिए डिक्री की जाए और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 18,

नियम 12 के अधीन अंत:कालीन लाभ की जांच के लिए डिक्री की जाए और वाद के खर्चे के साथ-साथ ऐसे अन्य अनुतोष या अनुतोषों के लिए डिक्री की जाए जो यह माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे ।"

3. स्पष्ट रूप से, प्रतिवादियों ने वादपत्र के संशोधन को मंजूर करते हुए आदेश को चुनौती नहीं दी और संशोधन के पश्चात् अतिरिक्त लिखित कथन भी फाइल नहीं किया ।

4. विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए :–

(1) क्या आवश्यक पक्षकारों के कुसंयोजन या असंयोजन के कारण वाद दूषित है ?

(2) क्या वादपत्र के लिए संदत्त की गई न्यायालय फीस अपर्याप्त है ?

(3) क्या वादी वाद की अनुसूची में के परिसरों के कब्जे के लिए हकदार है ?

5. यद्यपि वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी ने अपने दावों के समर्थन में मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए किंतु उसमें प्रतिवादी ने कतई कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया । विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और लागू होने वाली विधि के उपबंधों पर विचार करने के पश्चात् तारीख 4 जुलाई, 2007 के निर्णय के अनुसार यह अभिनिर्धारित करते हुए वाद को डिक्रीत किया कि वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी प्रतिवादियों से 'ख' अनुसूची की संपत्ति का कब्जा प्रत्युद्धरण के लिए हकदार है और परिणामत: प्रतिवादियों को उस तारीख से दो माह के भीतर 'ख' अनुसूची की संपत्ति को खाली करने और वादी (इस अपील में प्रत्यर्थी) को परिदान करने का निदेश दिया । इसके अतिरिक्त, यह भी डिक्रीत किया गया कि वादी प्रत्यर्थियों द्वारा से अनुबंधित अवधि के भीतर वाद की 'ख' अनुसूची की संपत्ति को खाली और परिदान करने में असफल रहने की दशा में विधि की सम्यक् प्रक्रिया द्वारा प्रतिवादियों से 'ख' अनुसूची की संपत्ति के कब्जे के प्रत्युद्धरण के लिए हकदार होगा । इसके अतिरिक्त, प्रतिवादियों

को शाश्वत व्यादेश द्वारा 'ग' अनुसूची की संपत्ति का वादी के शांतिपूर्ण कब्जे और उपभोग में हस्तक्षेप करने से निर्बंधित किया गया था ।

6. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, प्रतिवादी सं. 3 की वाद के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी । उत्तरजीवी प्रतिवादियों अर्थात् मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 में उच्च न्यायालय के समक्ष विचारण न्यायालय के तारीख 4 जुलाई, 2007 के निर्णय और डिक्री को चुनौती दी । उक्त प्रथम अपील में उन्होंने अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा की ईप्सा करते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में सिविल प्रक्रिया संहिता) के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । वस्तुतः, उन्होंने विचारण न्यायालय के समक्ष किसी प्रकार का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था । इस अपील में प्रत्यर्थी (वादी) ने अपील की संधार्यता पर आक्षेप किया क्योंकि मूल वाद अर्थात् 1993 का मूल वाद सं. 6456 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया था । उच्च न्यायालय ने उक्त आक्षेप को नामंजूर कर दिया और तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय के अनुसार अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए आवेदन को मंजूर किया और मामले को प्रतिवादियों अर्थात् इस अपील में प्रथम अपीलार्थी और मृतक द्वितीय अपीलार्थी को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देने के पश्चात् नए सिरे से निपटारा करने के लिए विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दिया । वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के उक्त निर्णय को 2008 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 1279 में इस न्यायालय के समक्ष सारभूत रूप से यह प्रतिवाद करते हुए चुनौती दी गई कि उक्त वाद विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया वाद होने के कारण उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अपील, जो 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 है, असक्षम थी । इस न्यायालय द्वारा इजाजत दी गई और विशेष इजाजत याचिका से उद्भूत सिविल अपील अर्थात् 2009 की सिविल अपील सं. 5201 का तारीख 3 सितंबर, 2009 के निर्णय के अनुसार यह अभिनिर्धारित करते हुए निपटारा किया गया कि

1993 का मूल वाद सं. 6456 है ऐसा वाद नहीं था जो विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन था क्योंकि ईप्सित अनुतोष इसकी परिधि के अंतर्गत नहीं आता है । जबकि वस्तुत:, अपील का नए सिरे से निपटारा करने के लिए तद्धीन मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हुए विचारण न्यायालय को निदेशित किया गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा निदेशित अनुसार साक्ष्य अभिलिखित किया जाए और उस पर उच्च न्यायालय को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए जिससे वह अनुबंधित समय के भीतर अपील का निपटारा करने के लिए समर्थ हो सके ।

7. मामले में आगे अग्रसर होने से पूर्व, हम प्रतिप्रेषण के ऐसे आदेश के प्रभाव पर विचार करना समुचित समझते हैं क्योंकि इससे निश्चित रूप से इस अपील पर विचार करने की जटिलता कम होगी । इस स्थिर स्थिति के विषय में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जिस न्यायालय को मामला प्रतिप्रेषित किया जाता है उसे प्रतिप्रेषण के आदेश का अनुपालन करना चाहिए और प्रतिप्रेषण के आदेश के विपरीत कार्य करना विधि के प्रतिकूल है । दूसरे शब्दों में, प्रतिप्रेषण के आदेश का इसकी सही भावना के अनुरूप पालन किया जाना चाहिए । सही है कि इस मामले में उच्च न्यायालय ने आरंभ में तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय के अनुसार मामले को नए सिरे से निपटारा करने के लिए विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया था और ऐसा करते हुए उसने विचारण न्यायालय को प्रतिवादियों को साक्ष्य पेश करने का अवसर देने का भी निदेश दिया था । किंतु इसके पश्चात् इसे इस न्यायालय द्वारा उपांतरित कर दिया गया था और 2000 की सिविल अपील सं. 5201 में के निर्णय के अनुसार मामले को 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 का नए सिरे से निपटारा करने के लिए उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया था और विचारण न्यायालय को भी जो निदेश दिया गया था वह केवल उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशानुसार साक्ष्य अभिलिखित करने और इसे रिपोर्ट सहित प्रेषित करने के लिए था जिससे उच्च न्यायालय प्रतिवादियों के अतिरिक्त रूप से अभिलिखित किए गए साक्ष्य पर भी विचार करते हुए अपील का निपटारा करने के लिए समर्थ

हो सके । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि साक्ष्य अभिलिखित करने के लिए और इसे रिपोर्ट सहित प्रस्तुत करने के लिए विचारण न्यायालय को दिए गए निदेश से अभिलेख पर पहले ही मौजूद साक्ष्य विलुप्त नहीं हो जाएगा या इसका विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त करने वाला प्रभाव नहीं होगा और निर्विवाद रूप से इसका प्रयोजन केवल उच्च न्यायालय को 1993 के मूल वाद सं. 6456 में विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध चुनौती देने वाली 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 पर न केवल विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही विचार किए गए साक्ष्य के आधार पर अपितु उसके तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय के आधार पर प्रतिवादियों के अतिरिक्त रूप से अभिलिखित किए गए साक्ष्य के आधार पर भी विचार करने के लिए समर्थ बनाना था ।

8. अब, हम मामले में आगे अग्रसर होंगे । वास्तव में, इसी बीच उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिप्रेषण के आदेश के अनुसरण में विचारण न्यायालय ने मामले को हाथ में लिया और इसे प्रतिवादियों के साक्ष्य के लिए सूचीबद्ध किया । मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 (इस अपील में प्रथम अपीलार्थी और मृत द्वितीय अपीलार्थी) ने विचारण न्यायालय के समक्ष लिखित कथन के संशोधन के लिए एक आवेदन फाइल किया । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय के समक्ष तीन और आवेदन अर्थात् (1) अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने की ईप्सा करते हुए ; (2) आठ दस्तावेज प्रस्तुत करने की अनुज्ञा की ईप्सा करते हुए ; और (3) अभि. सा. 1 को पुन: बुलाने की ईप्सा करते हुए फाइल किए गए । तारीख 13 नवंबर, 2007 के आदेश द्वारा विचारण न्यायालय ने केवल दस्तावेजों को प्रस्तुत करने और अभि. सा. 1 को पुन: बुलाने की अनुज्ञा के लिए आवेदनों को मंजूर किया । वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी ने इसे 2007 की रिट याचिका सं. 18328 में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी और परिणामत:, उच्च न्यायालय ने तारीख 13 नवंबर, 2007 के उक्त आदेश पर रोक लगा दी । इसके पश्चात् ही इस न्यायालय द्वारा ऊपर वर्णित रीति में 2009 की सिविल अपील सं. 5201 का निपटारा किया गया था । इस न्यायालय के तारीख 3 अगस्त, 2009 के आदेश के अनुसरण में विचारण न्यायालय ने मामले को हाथ में लिया और इसे प्रतिवादियों

के साक्ष्य के लिए सूचीबद्ध किया । उन्होंने लिखित कथन का संशोधन करने की अनुज्ञा की ईप्सा करते हुए 2009 का अंतरिम आवेदन सं. 8 फाइल किया जिसे विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । उसके पश्चात्, द्वितीय प्रतिवादी ने मुख्य परीक्षा के एवज में शपथपत्र फाइल किया और प्रदर्श डी-1 से डी-9 चिह्नित करवाए और उसकी प्रतिपरीक्षा भी की गई । तथापि, उन्होंने किसी अन्य साक्षी की परीक्षा नहीं कराई । बाद में, विचारण न्यायालय ने अभिलिखित किए गए साक्ष्य को अपनी रिपोर्ट सहित उच्च न्यायालय को प्रेषित कर दिया ।

8.1 रिपोर्ट और अभिलिखित किए गए साक्ष्य की प्राप्ति के अनुसरण में उच्च न्यायालय ने 2007 की नियमित अपील सं. 1966 को हाथ में लिया । प्रतिवादियों अर्थात् उस अपील में अपीलार्थियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष इसमें निम्नलिखित तीन अंतवर्ती आवेदन फाइल किए :–

(1) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 41, नियम 2 के अधीन प्रकीर्ण सिविल आवेदन सं. 10400/2010 अपील में अतिरिक्त आधार 16क और 16ख उठाने के लिए ।

(2) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 41, नियम 2 के अधीन प्रकीर्ण सिविल आवेदन सं. 11451/2010 अपील में अतिरिक्त आधार 16ग और 16घ उठाने के लिए ।

(3) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6, नियम 17 के अधीन प्रकीर्ण सिविल आवेदन सं. 11452/2010 लिखित कथन का संशोधन करने के लिए ।

8.2 अतिरिक्त आधार उठाने के लिए प्रकीर्ण सिविल आवेदन सं. 10400/2010 को सहमति के आधार पर मंजूर किया गया । तथापि, अन्य दो आवेदनों का जोरदार रूप से विरोध किया गया । मुख्य अपील पर तथा ऊपर निर्दिष्ट अन्य दो आवेदनों पर भी पक्षकारों को सुनने के पश्चात् माननीय उच्च न्यायालय ने विचार के लिए निम्नलिखित बिंदु विरचित किए :–

(i) "अपीलार्थियों द्वारा लिखित कथन में पैरा 26(ख) से 26(ङ) सम्मिलित करने के लिए संशोधन की ईप्सा करते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 6, नियम 17 के अधीन फाइल किया गया प्रकीर्ण आवेदन सिविल सं. 11452/2010 मंजूर किए जाने योग्य है या नामंजूर किए जाने योग्य है ?

(ii) क्या अपीलार्थियों द्वारा इस अपील में आधार सं. 16ग और 16घ के रूप में अतिरिक्त आधार उठाने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 41, नियम 2 के अधीन फाइल किया गया प्रकीर्ण आवेदन सिविल सं. 11451/2010 मंजूर किया जाना चाहिए या खारिज किया जाना चाहिए ?

(iii) क्या लाया गया वाद चलाने योग्य है या नहीं ?

(iv) क्या आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण वाद दूषित है ?

(v) क्या 1993 के मूल वाद सं. 6456 में 14वें अपर नगर सिविल न्यायालय द्वारा तारीख 4 जुलाई, 2007 को पारित किए गए निर्णय और डिक्री को उलटा जाना चाहिए, पुष्टि की जानी चाहिए या उपांतरित किया जाना चाहिए ?

(vi) क्या आदेश किया जाना चाहिए ?"

9. उच्च न्यायालय ने दलीलों, परस्पर-विरोधी अभिवचनों के प्रतिनिर्देश करके दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक विचार करने के पश्चात् विरचित बिंदुओं का उत्तर इस अपील में अपीलार्थियों के विरुद्ध और इस अपील में प्रत्यर्थी के पक्ष में दिया । लिखित कथन का संशोधन करने और अतिरिक्त आधार अर्थात् आधार सं. 16(ग) और 16(घ) उठाने की अनुज्ञा के लिए क्रमश: 2010 का प्रकीर्ण आवेदन सं. 11451 और 11452 खारिज कर दिए गए । इस अपील में अपीलार्थियों द्वारा वाद की संधार्यता के संबंध में उठाए गए बिंदु सं. 3 को नामंजूर कर दिया गया और वाद को संधार्य होना

अभिनिर्धारित किया गया । इस प्रश्न पर कि क्या वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन अर्थात् बिंदु सं. 4 के कारण दूषित है, इसे नकारात्मक अभिनिर्धारित किया गया । विरचित किए गए बिंदुओं पर निकाले गए निष्कर्षों के आधार पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी निर्णय और डिक्री का हकदार है, जैसी कि विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री की गई है और परिणामत: अपील को खर्चे सहित खारिज कर दिया तथा विचारण न्यायालय की डिक्री की पुष्टि की गई । इसलिए यह अपील की गई है ।

10. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल सुश्री किरन सूरी और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री नरेन्द्र हुड्डा को सुना ।

11. अपीलार्थियों ने उच्च न्यायालय के निर्णय को चुनौती देने के लिए कई-सारे आधार प्रस्तुत किए हैं । अन्य बातों के साथ-साथ यह दलील दी गई कि वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी वादपत्र में की 'ख' अनुसूची में की संपत्ति पर अपना कब्जा साबित करने में असफल रहा था । इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय इस दलील पर विचार करने में असफल रहा था कि विषयांतर्गत वाद वास्तव में श्री हनुमय्या, तृतीय प्रत्यर्थी, जिसकी विषयांतर्गत वाद के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी, के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने के लिए प्रत्यर्थी/वादी की असफलता के कारण उपशमन हो गया था । उनकी यह भी दलील है कि श्री रामा **उर्फ** राममूर्ति, मृत द्वितीय प्रत्यर्थी ने वादांतर्गत संपत्ति श्रीमन् माधव संघ, जो एक संगठन है और श्री विट्टल राव से विट्टल राव और माधव संघ के प्राधिकृत प्रतिनिधि द्वारा संयुक्त रूप से तारीख 5 अक्तूबर, 2000 को निष्पादित विक्रय विलेख के अनुसार क्रय की थी और इसलिए उच्च न्यायालय को विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि नहीं करनी चाहिए थी ।

12. हमने पहले ही इस तथ्य का उल्लेख किया है कि पैरा 26(ख) से 26(ङ) सम्मिलित करते हुए और अपील में अतिरिक्त आधार प्रस्तुत करने के लिए लिखित कथन का संशोधन करने के लिए निवेदन करते हुए प्रकीर्ण सिविल आवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया

गया था । उन निवेदनों के संदर्भ में विरचित बिंदुओं पर उच्च न्यायालय द्वारा सुसंगत तथ्यों के फेरफार के कारण संयुक्त रूप से विचार किया गया था । प्रस्तावित संशोधन का प्रकट प्रयोजन स्पष्ट रूप से दलील में यह बात लाने का था कि वादांतर्गत संपत्ति मृत द्वितीय अपीलार्थी द्वारा तारीख 5 अक्तूबर, 2000 के विक्रय विलेख के अनुसार श्रीमन् माधव संघ और विट्टल राव से खरीदी गई थी ।

13. स्पष्ट रूप से, इस मामले में विचारण न्यायालय ने तारीख 4 जुलाई, 2007 को वाद डिक्री किया था और मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 अर्थात् इस अपील में प्रथम अपीलार्थी और मृत द्वितीय अपीलार्थी ने इसे चुनौती देते हुए अपील अर्थात् 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 फाइल की । उक्त अपील में, अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा की ईप्सा करते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन यह दलील देते हुए फाइल किया गया कि उन्हें साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर नहीं दिया गया था । उक्त अपील का उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय के अनुसार निपटारा किया गया, जिसके अधीन उक्त आवेदन मंजूर किया गया और उसमें अपीलार्थियों/मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 को विचारण न्यायालय के समक्ष अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा दी गई । इसके अतिरिक्त, इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी को उक्त प्रतिवादियों की प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दिया गया । तद्धीन विचारण न्यायालय को भी निदेश दिया गया कि जहां तक 'ख' अनुसूची की संपत्ति का संबंध है, मामले का गुणागुण के आधार पर निपटारा किया जाए । उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के उक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर ही इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी ने इस न्यायालय के समक्ष 2008 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 1279 से उद्भूत होने वाली 2009 की सिविल अपील सं. 5201 फाइल की और जिसका निपटारा उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय और डिक्री को उपांतरित करते हुए और विचारण न्यायालय को 'उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशानुसार' साक्ष्य अभिलिखित करने और प्रथम अपील न्यायालय अर्थात् उच्च न्यायालय को अभिलेख प्रेषित करने तथा ऐसे अन्य निदेशों के साथ किया गया, जिनका इसमें पहले ही

वर्णन किया गया है । उसके पश्चात् उच्च न्यायालय द्वारा अपेक्षित आदेश पारित किया गया जिसके द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि की गई । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थियों के विरुद्ध और इस अपील में प्रत्यर्थी के पक्ष में समवर्ती निष्कर्ष हैं । प्रसामान्यत:, जब निष्कर्ष समवर्ती हों, तो आपवादिक परिस्थितियों के अभाव में भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत लेकर फाइल की गई अपील में गहराई से विचार किए जाने का नियम नहीं है । बहरहाल, इन तथ्यों पर विचार करते हुए कि शीर्षक अपील वर्ष 2011 की है और पक्षकारों को यथापूर्व स्थिति बनाए रखने के लिए अंतरिम निदेश बहुत पहले तारीख 25 फरवरी, 2011 को पारित किया गया था, इसलिए हम निष्कर्षों और पक्षकारों की दलीलों पर भी समुचित रूप से विचार करने के लिए तैयार हैं ।

14. हम इस स्थिर स्थिति से अनजान नहीं हैं कि अभिवचनों के संशोधन के लिए निवेदनों पर विचार करते हुए न्यायालयों को अति तकनीकी दृष्टिकोण अपनाने से बचना चाहिए । किंतु साथ ही साथ हमें इस स्थिति को भी स्मरण करना चाहिए कि लिखित कथन में संशोधन के लिए आवेदन के माध्यम से मात्र अनुरोध करने पर विशिष्ट रूप से अपीली प्रक्रम पर, वहां मंजूरी नहीं दी जा सकती जहां जिसे चुनौती दी गई है वह विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री है और दूसरे शब्दों में, चुनौती प्रतिकूल डिक्री के पश्चात् और एक असली, संधार्य कारण के बिना हो । संक्षेप में, विशिष्ट मामले की विद्यमान परिस्थितियों को यह विचार करने के लिए ध्यान में रखा जाना चाहिए कि क्या ऐसा निवेदन मंजूर किए जाने योग्य है या नहीं और निस्संदेह यह केवल विरल से विरलतम परिस्थितियों में मंजूर किए जाने योग्य है । प्रस्तुत मामले में, वादपत्र के संशोधन के लिए निवेदन को विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 1 सितंबर, 1995 के आदेश के अनुसार मंजूर किया गया था । तद्नुसार, वादी द्वारा संशोधन किया गया था । निर्विवाद रूप से, उसके पश्चात् एक वर्ष या उसके लगभग की अवधि के दौरान उसमें के प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन, यदि कोई है, फाइल करने के लिए आठ से अधिक अवसर दिए गए थे । निस्संदेह, अभिलेख पर की सामग्री से प्रकट होता है कि इन अवसरों का उपभोग

नहीं किया गया था और कोई अतिरिक्त लिखित कथन फाइल नहीं किया गया था । उसके पश्चात्, अभिवचनों के आधार पर विवाद्यक विरचित किए गए थे । स्पष्ट रूप से, प्रतिवादियों ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था और इसके सर्वोत्तम कारण उन्हें ही ज्ञात हैं । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, उसके पश्चात् वाद को डिक्रीत किया गया । हमने भी उन सभी पश्चात्वर्ती घटनाक्रम पर विस्तारपूर्वक चर्चा की है जिनकी परिणति अंततोगत्वा 2007 की नियमित अपील सं. 1966 में तारीख 9 सितंबर, 2010 के आक्षेपित निर्णय सहित 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय के निर्णय के निबंधनों के अनुसार उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय और डिक्री में थोड़े उपांतरण के रूप में हुई । इस न्यायालय द्वारा उक्त सिविल अपील में निर्णय के अनुसरण में उच्च न्यायालय के तारीख 9 सितंबर, 2010 के निर्णय के शेष बचे निदेशों के निबंधनों के अनुसार, जो वास्तव में 2009 की सिविल अपील सं. 5201 के निर्णय में विलय हो गए थे, द्वितीय प्रतिवादी अर्थात् मृत द्वितीय अपीलार्थी ने तारीख 16 सितंबर, 2009 की अपनी मुख्य परीक्षा के एवज में अपना शपथपत्र फाइल किया और प्रदर्श डी-1 से डी-9 चिह्नित कराए । इसके पश्चात् उसकी प्रतिपरीक्षा की गई । प्रतिवादियों की ओर से किसी अन्य साक्षी की परीक्षा नहीं की गई थी ।

15. अभिलेख पर की सामग्री और उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय से यह प्रकट होता है कि मूल प्रतिवादी 1 और 2, जो उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी थे, ने लिखित कथन के संशोधन के लिए और उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में अतिरिक्त आधार प्रस्तुत करने की अनुज्ञा के लिए अपने निवेदनों के समर्थन में विभिन्न दलीलें दी थीं और उन्हें हमारे समक्ष भी दोहराया गया है । यह दलील दी गई कि ऐसे निवेदन करने की ईप्सा करने में विलंब कथित प्रकीर्ण सिविल आवेदनों में किए गए निवेदनों को नामंजूर करने के लिए स्वयमेव एक कारण नहीं हो सकता है और यह भी कि ऐसे निवेदनों को मंजूर करने से इस अपील में प्रत्यर्थी/उस अपील में प्रत्यर्थी पर किसी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा । इस निर्णय में इससे पूर्व निर्दिष्ट की गई घटनाओं के क्रम पर उच्च न्यायालय ने उक्त आवेदनों

पर विचार करते हुए और उन आवेदनों के संबंध में विरचित किए गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए भी स्पष्ट रूप से विचार किया था । उच्च न्यायालय द्वारा इन तथ्यों पर विचार किया गया था कि प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने के लिए वादपत्र के संशोधन के पश्चात् तारीख 7 मार्च, 1996 से विवाद्यक विरचित करने अर्थात् तारीख 15 अप्रैल, 1997 तक की अवधि के बीच आठ बार से अधिक अवसर दिए गए थे, यह कि 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 में फाइल किए गए अंतर्वर्ती आवेदन, जिसके आधार पर विचारण न्यायालय को प्रत्यर्थियों को तारीख 29 अक्तूबर, 2007 को पारित किए गए निर्णय और डिक्री के अनुसार साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देने के लिए निदेशित किया गया था, उन्होंने केवल यह दलील देते हुए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा चाही थी कि उन्हें साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर से वंचित किया गया था और उस सुसंगत समय पर भी लिखित कथन के संशोधन के लिए किसी अनुज्ञा की ईप्सा नहीं की गई थी । स्पष्ट रूप से, उच्च न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया था कि यदि इस प्रक्रम पर लिखित कथन के संशोधन को मंजूर किया जाता है, तो इससे नए सिरे से विवाद्यकों को विरचित करना आवश्यक हो जाएगा और पक्षकारों को अपने-अपने अधिकारों को इस प्रकार उठाना होगा मानो नया विचारण किया जा रहा हो । इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित पहलुओं पर भी विचार किया था :

यह कि प्रतिवादियों द्वारा फाइल किए गए लिखित कथन में उन्होंने अपनी प्रतिरक्षा को प्रकट नहीं किया था और साथ ही उन्होंने उसमें यह भी अभिवाक् नहीं किया था कि वे वादांतर्गत संपत्ति पर काबिज हैं ।

यह कि उनके अभिवाक् से अनिवार्य रूप से लैटिन की अभिव्यक्ति 'जस्ट टेरटि' का सिद्धांत लागू होता है जिससे यह अभिप्रेत है कि 'तृतीय पक्षकार का अधिकार', यह कि उनके अनुसार तृतीय पक्षकार श्रीमन् माधव संघ, जो एक संगठन है और श्री विट्टल राव हैं, यह कि साक्ष्य में यह आया है कि उन तृतीय पक्षकारों ने इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी को बेदखल करने के लिए 1991 के एच. आर. सी. सं. 10020 के रूप में एक याचिका फाइल की थी । वास्तविकता यह है कि प्रतिवादियों ने यह

अभिवाक् किया था कि वादांतर्गत संपत्ति का स्वामित्व उक्त तृतीय पक्षकारों के पास था और विनिर्दिष्ट रूप से कब्जे का दावा नहीं किया था और इसके पश्चात् ही उन्होंने यह एक नया अभिवाक् लाने की ईप्सा की थी कि उन पक्षकारों अर्थात् प्रथम प्रतिवादी/इस अपील में प्रथम अपीलार्थी के बीच हुए तारीख 1 मार्च, 1993 के विक्रय करार, प्रदर्श डी-1 के अनुसरण में वाद की अनुसूची में की संपत्ति प्रथम अपीलार्थी को परिदत्त कर दी गई थी । किंतु उच्च न्यायालय द्वारा इन्हें नामंजूर करते हुए दिया गया महत्वपूर्ण कारण यह है कि प्रथम प्रतिवादी/इस अपील में प्रथम अपीलार्थी कटघरे में नहीं आया था और मृत द्वितीय प्रतिवादी/द्वितीय प्रत्यर्थी ने अपनी मुख्य परीक्षा के दौरान प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा किए जाने के समय मुख्य परीक्षा की एवज में फाइल किए गए अपने शपथपत्र के पैरा 8 में और इसके द्वारा स्वयं यह स्वीकार किया था कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी तब वाद की अनुसूची 'क' में की संपत्ति (जिसमें 'ख' अनुसूची भी सम्मिलित है) पर काबिज था । इसके अतिरिक्त, यह पाया गया था कि प्रतिपरीक्षा के दौरान प्रति. सा. 1 ने स्वीकार किया था कि प्रदर्श डी-1 की तारीख को संपत्ति का कब्जा नहीं लिया गया था क्योंकि श्रीमन् माधव संघ ने कब्जा प्राप्त करने और इसे प्रथम प्रतिवादी को सौंपने का आश्वासन दिया था । इस प्रकार, अभिलेख पर की सामग्री से प्रकट इन परिस्थितियों में, और जब इन पहलुओं और साक्ष्य पर उच्च न्यायालय द्वारा लिखित कथन में संशोधन करने के लिए अनुज्ञा को अस्वीकार करने के लिए विचार किया गया था, तो हम इसमें हस्तक्षेप करने के लिए कोई कारण या औचित्य नहीं पाते हैं ।

16. हमारे मत को पुष्ट करने के लिए, हम कतिपय अन्य पहलुओं पर भी विचार करेंगे । प्रति. सा. 1 द्वारा की गई ऊपर उल्लिखित स्वीकारोक्ति के मद्देनजर, लिखित कथन का संशोधन करके इस नए अभिवाक् को लाने के प्रयत्न को देखा जाना चाहिए कि द्वितीय प्रतिवादी (मृत द्वितीय अपीलार्थी) ने वाद की अनुसूची में की संपत्ति को तारीख 5 अक्तूबर, 2010 के विक्रय विलेख, प्रदर्श डी-2 के अनुसार खरीदा था । चूंकि स्वीकृत रूप से और निर्विवाद रूप से जिस वाद से अपील उद्भूत हुई थी वह वाद कब्जा-हक पर आधारित था, इसलिए विक्रय विलेख प्रदर्श

डी-2 की वैधता पर इस अपील में विचार करने की आवश्यकता नहीं है और उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही विचार नहीं किया गया था । स्पष्ट रूप से, उच्च न्यायालय ने इस पर विचाराधीन वाद के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही करने से इनकार कर दिया था । यदि यह मान भी लिया जाए कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 के उपबंध प्रस्तुत मामले में लागू नहीं होते हैं, तो भी यह विवादग्रस्त नहीं किया जा सकता है कि इस उपबंध में अंतर्विष्ट सिद्धांत प्रस्तुत मामले में लागू होता है । यह लगभग एक स्थिर स्थिति है कि जहां कहीं संपत्ति अंतरण अधिनियम लागू नहीं होता है, उक्त अधिनियम के उक्त उपबंध में का यह सिद्धांत, जो न्याय, साम्य और शुद्ध अंत:करण पर आधारित है, न्यायालय के द्वारा विक्रय इत्यादि जैसी इसी प्रकार की परिस्थिति में लागू होता है । वादकालीन कब्जे का अंतरण भी धारा 52 के अर्थांतर्गत संपत्ति का अंतरण होगा और इसलिए संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 का आशय यह है कि यदि किसी वाद के लंबित रहने के दौरान स्थावर संपत्ति में कोई अंतरण का अधिकार है तो ऐसा अंतरण विधि की दृष्टि में तब नास्ति होगा यदि संबंधित संपत्ति में वाद के अन्य पक्षकार के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो । हम यह भी कहना चाहेंगे कि धारा 52 का प्रभाव यह है कि उस संपत्ति के संबंध में मुकदमे में सफल पक्षकार का अधिकार अन्यसंक्रामण से प्रभावित नहीं होगा, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि अंतरक के विरुद्ध संव्यवहार अविधिमान्य है । **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लि.** बनाम **नानक बिल्डर्स एंड इन्वेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड**[1] वाले मामले के विनिश्चय में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 का उपबंध वास्तव में हस्तांतरण या अंतरण को अन्यथा बातिल नहीं करता है अपितु यह किसी मुकदमे के पक्षकारों के अधिकारों के लिए सहायक हो जाता है ।

इस स्थिति के संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त सूत्र के सिद्धांतों के उपयोजन के प्रतिषेध का प्रभाव वाद के संस्थित करने पर हो जाएगा । जो भी स्थिति हो, हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई

---

[1] (2013) 5 एस. सी. सी. 397.

हिचकिचाहट नहीं है कि उच्च न्यायालय ने इन परिस्थितियों में अपीली प्रक्रम पर लिखित कथन के संशोधन के लिए आवेदन पर विचार करते हुए यह निष्कर्ष निकालने में पूरी तरह से न्यायोचित किया था कि इसकी मंजूरी देने से, वस्तुत: नए सिरे से विवाद्यकों को विरचित करना आवश्यक हो जाएगा और पक्षकारों को अपने अधिकारों को उठाने के लिए इस प्रकार बाध्य करेगा मानो नए सिरे से विचारण किया जा रहा हो । हमने पूर्वोक्त पहलुओं को केवल इस बिंदु को स्पष्ट करने के लिए निर्दिष्ट किया है कि चूंकि विषयांतर्गत वाद केवल कब्जा हक अर्थात् पूर्विक कब्जे पर आधारित है इसलिए मृत द्वितीय अपीलार्थी द्वारा वाद के लंबित रहते हुए संपत्ति खरीदे जाने के अभिवाक् को लाने के लिए लिखित कथन का संशोधन करने के लिए निवेदन के संबंध में निष्कर्ष और पारिणामिक नामंजूरी से यह नहीं कहा जा सकता है कि इसके परिणामस्वरूप घोर अन्याय हुआ है ।

17. इस संदर्भ में एक अन्य निर्विवाद स्थिति को निर्दिष्ट करना भी अनुचित नहीं होगा । अभिलेख पर की सामग्री से प्रकट होता है कि विचारण न्यायालय ने निर्णय और डिक्री पारित करने से पूर्व प्रतिवादियों को अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने के लिए कई अवसर दिए थे किंतु वे न केवल अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने में असफल रहे अपितु विचारण न्यायालय के समक्ष मूल कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान उसके समक्ष लिखित कथन के संशोधन के लिए कोई आवेदन फाइल करने में भी असफल रहे थे । यह वास्तविकता है कि प्रतिवादियों ने लिखित कथन के संशोधन के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष आवेदन उस समय फाइल किया था जब 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय के आदेश के अनुसरण में विचारण न्यायालय को मामला केवल साक्ष्य अभिलिखित करने के प्रयोजन के लिए और इसे एक रिपोर्ट सहित उच्च न्यायालय को प्रेषित करने के लिए भेजा गया था जिससे उच्च न्यायालय 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1966 का निपटारा करने के लिए समर्थ हो सके । इसके अतिरिक्त, यह एक निर्विवाद तथ्य है कि 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 में लिखित कथन के संशोधन के लिए अनुज्ञा प्रदान करने हेतु निवेदन के साथ आवेदन फाइल करते समय भी प्रतिवादियों ने विलंब के लिए कोई

कारण नहीं दिए थे और ऐसा आवेदन विचारण न्यायालय के समक्ष उस समय फाइल न करने के लिए कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण नहीं दिया था जब विचारण न्यायालय के समक्ष मूल कार्यवाहियां लंबित थीं । जो कारण दिया गया था वह यह है कि वे भूल और चूक के कारण अतिरिक्त लिखित कथन फाइल नहीं कर सके थे । लिखित कथन के संशोधन के लिए आवेदन फाइल न करने के लिए कोई अन्य कारण नहीं दिया गया था ।

18. इस तथ्यात्मक स्थिति में, **गायत्री वूमेंस वेल्फेयर एसोसिएशन** बनाम **गौरम्मा और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को निर्दिष्ट करना सुसंगत है, जिसमें **पंडित ईश्वरदास** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में पैरा 34 में इस न्यायालय के विनिश्चय की मताभिव्यक्ति, जो सहमतिपूर्वक उद्धृत की गई थी, निम्नलिखित है :–

> "34. ईश्वरदास वाले मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है (एस. सी. सी. पृ. 166, पैरा 5) –
>
> > 'किसी पक्षकार को नया अभिवाक् करने के लिए समर्थ बनाने हेतु अभिवचनों के संशोधन की अनुज्ञा देने के लिए अपील न्यायालय के लिए कोई बाधा या वर्जन नहीं है । जो कुछ आवश्यक है वह यह है कि अपील न्यायालय को उन सुविख्यात सिद्धांतों का अवलोकन करना चाहिए जिनके अध्यधीन रहते हुए प्रायिक रूप से अभिवचनों के संशोधनों के लिए मंजूरी प्रदान की जाती है । स्वाभाविक रूप से, इन परिस्थितियों में से एक परिस्थिति, जिस पर संशोधन की मंजूरी प्रदान करने से पूर्व विचार किया जाना होगा, वह है ऐसे संशोधन की ईप्सा करते हुए आवेदन करने में किया गया विलंब और यदि यह आवेदन अपीली प्रक्रम पर किया जाता है, तो वह कारण क्यों इसकी विचारण न्यायालय में ईप्सा नहीं की गई थी । यदि आवश्यक सामग्री पहले से है जिसके

---

[1] (2011) 2 एस. सी. सी. 330.

[2] (1979) 4 एस. एस. सी. 163.

> आधार पर संशोधन से उद्भूत होने वाले अभिवाक् का विनिश्चय किया जा सकता है, तो संशोधन नामंजूर करने की बजाय अधिक आसानी से मंजूर किया जा सकता है । किंतु अपील न्यायालय के लिए अपीली प्रक्रम पर संशोधन की अनुज्ञा देने के लिए केवल इस कारण कोई प्रतिषेध नहीं है कि न्यायालय के समक्ष पहले से आवश्यक सामग्री नहीं है ।'"

19. इसे उद्धृत करने के पश्चात् **गायत्री वूमेंस वेल्फेयर एसोसिएशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया था :–

> "इन मताभिव्यक्तियों से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि एक परिस्थिति, जिस पर संशोधन की मंजूरी प्रदान करने से पूर्व विचार किया जाना होगा, वह है ऐसे संशोधन की ईप्सा करते हुए आवेदन करने में किया गया विलंब और यदि यह आवेदन अपीली प्रक्रम पर किया जाता है, तो वह कारण क्यों इसकी विचारण न्यायालय में ईप्सा नहीं की गई थी ।"

20. यह उल्लेखनीय है कि प्रस्तुत मामले में भी, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, लिखित कथन का संशोधन करने या अतिरिक्त लिखित कथन फाइल करने की ईप्सा करने में पर्याप्त विलंब किया गया था और कोई टिकने योग्य कारण नहीं दिया गया था कि क्यों ऐसे निवेदन उस समय विचारण न्यायालय में नहीं किए गए थे जब उसके समक्ष मूल कार्यवाहियां लंबित थीं । यह उल्लेख करना भी सुसंगत है कि उच्च न्यायालय के समक्ष भी ऐसे निवेदन उस समय नहीं किए गए थे जब उच्च न्यायालय ने आरंभ में तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय के अनुसार 2007 की नियमित अपील सं. 1966 का निपटारा किया था और उक्त निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय के समक्ष भी ऐसे निवेदन नहीं किए गए थे ।

21. पूर्व उल्लिखित तथ्यात्मक स्थिति में, 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय द्वारा पारित किए गए प्रतिप्रेषण के आदेश की अधिक सुसंगतता हो जाती है । हमने इस पहलू पर विचार किया है और निष्कर्ष निकाला है जिसे पैरा 5 (उपर्युक्त) से देखा जा सकता है । यदि 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 में उच्च न्यायालय के

निर्णय को 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में के निर्णय के अनुसार इस न्यायालय द्वारा उपांतरित नहीं किया गया था, तो इसका प्रभाव वाद को पूर्ण रूप से पुनर्जीवित करने का होगा और ऐसी स्थिति में वाद को लंबित समझा जाना चाहिए । इस संदर्भ में, **युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया, कलकत्ता** बनाम **अभिजीत टी. कंपनी (प्रा.) लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के पैरा 16 को निर्दिष्ट करना उपयुक्त है, जो इस प्रकार है :–

> "16. किंतु अब यह सुस्थिर है कि अपील न्यायालय द्वारा उस विचारण न्यायालय को, जिसने वाद का निपटारा किया था, किए गए प्रतिप्रेषण के आदेश से वाद पूर्ण रूप से पुनर्जीवित हो जाता है सिवाय उन मामलों के, यदि कोई है, जिनका अपील न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से विनिश्चय किया गया है । जब एक बार वाद पुनर्जीवित हो जाता है, तो इसे विधि की दृष्टि में आरंभ से लंबित समझा जाएगा जब इसे संस्थित किया गया था । एकल न्यायाधीश द्वारा वाद का निपटारा करते हुए पारित किया गया निर्णय, जिसे अपास्त किया गया है, विधि की दृष्टि से पूर्ण रूप से विलुप्त हो गया है और विचारण न्यायालय में वाद की निरंतरता प्रत्यावर्तित हो गई है । वाद को प्रतिप्रेषण आदेश की तारीख को नए सिरे से संस्थित किए गए वाद के रूप में नहीं समझा जा सकता । अन्यथा, परिसीमा के बारे में गंभीर प्रश्न उद्भूत होंगे । वास्तव में, यदि इसका पहले निपटारा करने से पूर्व कोई साक्ष्य अभिलिखित किया गया था, तो वह प्रतिप्रेषित वाद में साक्ष्य रहेगा और यदि पहले कोई अंतर्वर्ती आदेश पारित किए गए थे, तो पुनर्जीवित हो जाएंगे । प्रतिप्रेषण के मामले में, यह ऐसा है मानो वाद का कभी निपटारा नहीं किया गया था (किसी ऐसे न्यायनिर्णयन के अध्यधीन रहते हुए जो अपीली निर्णय में अंतिम बन गया है) । यह स्थिति तब भिन्न हो सकती थी यदि अपील का अंतिम रूप से निपटारा किया गया होता और वाद को प्रतिप्रेषित नहीं किया जाता ।"

---

[1] (2000) 7 एस. सी. सी. 357.

22. 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 में प्रतिप्रेषण के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इस न्यायालय के तारीख 3 सितंबर, 2009 के पश्चात्वर्ती निर्णय को दृष्टिगत करते हुए उच्च न्यायालय का निर्णय इसमें विलय हो जाता है । इस निर्णय के अनुसार, विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों का दायरा केवल प्रतिवादियों का अतिरिक्त साक्ष्य अभिलिखित करने और इसे उच्च न्यायालय को प्रेषित करने तक सीमित था जिससे उच्च न्यायालय नए सिरे से 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 का निपटारा करने के लिए समर्थ हो सके । संक्षेप में, स्थिर स्थिति को ध्यान में रखते हुए, विचारण न्यायालय अपने समक्ष कार्यवाहियों के दायरे को प्रतिप्रेषण के आदेश के प्रतिकूल विस्तृत नहीं कर सकता था और इसलिए विचारण न्यायालय ने लिखित कथन का संशोधन करने के लिए आवेदन को नामंजूर करके पूरी तरह ठीक किया था । इस संदर्भ में, **रुखमानंद** बनाम **दीनबंध**[1] वाले मामले में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के निदेश की सुसंगतता हो जाती है । यह इस प्रकार है :–

> "यह सुस्थिर विधि है कि जब किसी वाद को कतिपय विनिर्दिष्ट निदेशों के साथ नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है, तो प्रतिप्रेषण के पश्चात् विचारण न्यायालय की अधिकारिता प्रतिप्रेषण के आदेश के निबंधनों पर निर्भर करती है और विचारण न्यायालय न तो उन विषयों के सिवाय जो प्रतिप्रेषण आदेश में विनिर्निष्ट हैं, विचार कर सकता है और न ही इसकी सीमा से बाहर आने वाले प्रश्नों पर विचार कर सकता है । अत: विद्वान् विचारण न्यायालय को ऐसे अभिवचनों के संशोधन को अनुज्ञा देने की अधिकारिता नहीं थी जो प्रतिप्रेषण आदेश के दायरे से बाहर था ।"

23. संपूर्ण परिस्थितियों में, विशेष रूप से लिखित कथन के संशोधन के लिए निवेदन को नामंजूर करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए सुसंगत कारणों पर विचार करते हुए और विलंब तथा इसके लिए कोई कारण देने में असफलता और इसमें ऊपर उल्लिखित

---

[1] 1971 जे. एल. जे. एस. एन. 159.

कारणों को ध्यान में रखते हुए हमें लिखित कथन के संशोधन के लिए निवेदन को नामंजूर करने में कोई अनुचितता या अवैधता होना अभिनिर्धारित करने के लिए कतई कोई कारण दिखाई नहीं देता है ।

24. हमें निचले न्यायालयों के निर्णयों में सहमतिजन्य बिंदु पाए हैं । वाद की संधार्यता प्रश्नों पर, क्या वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है तथा क्या वाद को मूल तृतीय प्रतिवादी की मृत्यु होने पर सभी विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित न करने के कारण सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध उपशमन हो जाना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था, के बारे में निचले न्यायालयों ने अपीलार्थियों के विरुद्ध समवर्ती निष्कर्ष निकाले हैं ।

25. हमें समझ नहीं आता कि कैसे वाद की संधार्यता के संबंध में अभिवाक् विचार के लिए उद्भूत होता है । अपीलार्थियों की दलील यह है कि इसे विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया था और 2009 की सिविल अपील सं. 5201 का निपटारा करते हुए इस न्यायालय ने इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी के विरुद्ध यह अभिनिर्धारित किया था कि वाद विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन नहीं है । परिणामत:, अपीलार्थियों के अनुसार वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी द्वारा कब्जे के लिए दावा किया गया अनुतोष ग्रहण करने योग्य नहीं था क्योंकि वह केवल कब्जा हक का दावा करने वाला व्यक्ति है और मूल प्रतिवादी सं. 2/मृत अपीलार्थी सं. 2 वाद की अनुसूची में की संपत्ति का विधिपूर्ण स्वामी है । यद्यपि ये दलीलें प्रथमदृष्ट्या आकर्षक और स्वीकार्य प्रतीत होती हैं किंतु वास्तविकता यह है कि वे पूरी तरह से अमान्य हैं और अभिलेख पर की सामग्री को देखते हुए ठीक ही उनके विरुद्ध अभिनिर्धारित किया गया है ।

26. यह सही है कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी का यह पक्षकथन था कि 1993 का मूल वाद सं. 6456 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन फाइल किया गया था और 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में निर्णय के पश्चात् भी यह प्रतीत होता है कि उसने उक्त प्रश्न को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया है । किंतु हम उच्च न्यायालय से पूर्णत: सहमत हैं कि यह प्रश्न कि क्या वाद विनिर्दिष्ट

अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन है या नहीं, अब उपलब्ध नहीं है क्योंकि इस न्यायालय द्वारा 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में इसके अन्यथा अभिनिर्धारित किया गया था और इसलिए इस प्रश्न ने अंतिमता प्राप्त कर ली थी । 2009 की सिविल अपील सं. 5201 में निर्णय को देखने से ही यह निष्कर्ष कि 1993 का मूल वाद सं. 6456 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 6 के अधीन नहीं है, पुनर्विचार करने योग्य नहीं है । स्पष्ट रूप से, इस प्रकार अभिनिर्धारित करने के पश्चात् भी और उच्च न्यायालय के तारीख 29 अक्तूबर, 2007 के निर्णय को उपांतरित करने के उपरांत इस न्यायालय ने केवल 2007 की नियमित प्रथम अपील सं. 1996 का नए सिरे से निपटारा करने के लिए निदेश दिया था और इस संबंध में विचारण न्यायालय को प्रतिवादियों का अतिरिक्त साक्ष्य अभिलिखित करने और इसे एक रिपोर्ट सहित उच्च न्यायालय को प्रेषित करने का निदेश दिया था ।

27. निर्विवाद रूप से, इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी का पक्षकथन पहले से ही कब्जा होने और प्रत्यर्थियों द्वारा अवैध रूप से बेकब्जा करने पर आधारित है । प्रतिपरीक्षा के दौरान भी अभि. सा. 1 इस अपील में प्रत्यर्थी ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि वह विषयांतर्गत वाद में स्वामित्व के अधिकार का दावा नहीं कर रहा है । अत: प्रश्न यह है कि अपीलार्थी कैसे दावा कर सकते हैं कि ऐसा वाद संधार्य नहीं है । यह भी एक वास्तविकता है कि प्रतिवादियों के अभिवचनों और साक्ष्य की सावधानीपूर्वक समीक्षा करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के अनुसार यह अभिनिर्धारित किया था कि वादी/इस अपील में प्रत्यर्थी के पक्षकथन का विरोध करने के लिए प्रतिवादियों द्वारा जो मुद्दा उठाया गया है वह कुछ और नहीं अपितु एक ऐसा अभिवाक् है जिस पर लैटिन का "जस टेरटियायी" का सिद्धांत लागू होता है जिससे अभिप्रेत है 'किसी पर-पक्षकार का अधिकार' । वास्तव में, यह संपत्ति में हित के दावे के विरुद्ध प्रतिरक्षा में उठाया गया एक अभिवाक् है कि पर पक्षकार का दावेदार की अपेक्षा बेहतर अधिकार है । इस संदर्भ में, आर. एफ. वी. होस्टन, सामंड ऑन दि लॉ ऑफ टॉर्ट्स 4 (17वां संस्करण, 1977) को निर्दिष्ट करना सुसंगत है, जिसमें यह मत व्यक्त किया गया था कि अतिचार की कार्रवाई में कोई प्रतिवादी 'जस टेरटियायी' (पर-व्यक्ति का

अधिकार) का यह अभिवाक् नहीं कर सकता कि कब्जे का अधिकार किसी पर-व्यक्ति में बाकी है । स्पष्ट रूप से, प्रतिवादियों ने अपनी इस दलील पर जोर देने के लिए कि वाद प्रतिवादियों की इस दलील के आधार पर चलाने योग्य है कि कब्जे का अधिकार किसी पर-व्यक्ति में बाकी है जिससे 'जस टेरटियायी' का सिद्धांत लागू होता है और इसलिए वे वाद की संधार्यता को चुनौती देने के लिए न्यायोचित नहीं हैं, **कृष्णा राम महाले (मृत), विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत** बनाम **श्रीमती शोभा वेंकट राव**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया । आक्षेपित निर्णय से प्रकट होता है कि पूर्वोक्त विनिश्चय में विधि की व्याख्या के आधार पर और तथ्यात्मक स्थिति को देखते हुए उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि प्रतिवादियों द्वारा वाद की संधार्यता के संबंध में दी गई चुनौती अमान्य है । इस संदर्भ में, उच्च न्यायालय ने **नायर सर्विस सोसायटी लि.** बनाम **रेवरेण्ड फादर के. सी. अलेक्जेंडर और अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय पर भी विचार किया था । उक्त विनिश्चय में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि यह नहीं कहा जा सकता कि छह माह की अवधि बीत जाने के पश्चात् केवल पूर्वोत्तर कब्जे पर आधारित वाद संभव नहीं है और यह जहां तक सुसंगत है इस प्रकार है :–

> "15. हम उनके तर्क के इस भाग से तो सहमत हैं किंतु सम्मानसहित इस मत से सहमत नहीं हो सकते कि छह माह की कालावधि के व्यतीत हो जाने के पश्चात् पूर्विक कब्जे के ही आधार पर वाद लाना संभव नहीं है । विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 8 वादों की किस्मों को परिसीमित नहीं करती । अपितु वह तो केवल यह अधिकथित करती है कि सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना जरूरी है । यह बात तो यह कहने से बहुत भिन्न है कि छह माह के अवसान के पश्चात् केवल कब्जे पर आधारित वाद लाना अक्षम बात करनी होगी । सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के अधीन उन वादों के

---

[1] (1989) 4 एस. सी. सी. 131.

[2] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1165.

सिवाय जिनका संज्ञान अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से वर्जित है, सिविल प्रकृति के सभी वादों का विचारण किया जा सकता है ।"

28. **नायर सर्विस सोसायटी लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय ने **मुस्तफा साहेब** बनाम **संथा पिल्लै**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने सहमति से की गई निम्नलिखित मताभिव्यक्तियों को उद्धृत किया था :–

"..... वह पक्षकार जिसे अपने से बेहतर अधिकार न रखने वाले व्यक्ति द्वारा बेकब्जा किया गया है, उस व्यक्ति के मुकाबले में जिसने उसे ऐसे बेकब्जा किया है, अपने उस कब्जे के आधार पर, जो ऐसा बेकब्जा किए जाने के पहले उसका था, इस बात के होते हुए भी कि उसका 'कब्जा किसी हक के बिना था', कब्जा प्रत्युद्धृत करने के लिए हकदार होगा ।"

29. पूर्वोक्त विनिश्चयों और इस मामले में अभिप्राप्त तथ्यात्मक स्थिति को ध्यान में रखते हुए हमारी राय में अपीलार्थियों द्वारा जिन विनिश्चयों का अवलंब लेने की ईप्सा की गई है उनसे वास्तव में कोई सहायता नहीं मिलती है ।

30. यह स्पष्ट है कि प्रतिवादियों के उपलब्ध अभिवचनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि उन्होंने अपने लिखित कथन में अपनी प्रतिरक्षा प्रकट नहीं की थी और साथ ही साथ उसमें यह भी अभिवाक् नहीं किया था कि वे वादांतर्गत संपत्ति पर काबिज हैं । हमारे अनुसार, ऐसी परिस्थितियों में जब तथ्यों से किसी भी पक्षकार के पक्ष में सुसंगत समय पर हक प्रकट नहीं होता है, तो केवल पूर्विक कब्जा अधिकारपूर्ण स्वामी के सिवाय समस्त संसार के विरुद्ध स्वामी के धारणात्मक स्वरूप में भूमि के कब्जे के अधिकार का विनिश्चय करता है । इस संदर्भ में, 'पोसेसियो कोंट्रा ओम्नेस वालेट प्राएटर एयूर क्यू आयस सिट पोसेसनिस' (वह जिसके पास कब्जा है, उसके पास सभी के विरुद्ध अधिकार है उसके सिवाय जिसके पास असली अधिकार है) सूत्र को निर्दिष्ट करना उपयोगी

---

[1] (1900) आई. एल. आर. 23 मद्रास 179.

है ।

31. इस मामले में अभिप्राप्त तथ्यात्मक स्थिति और ऊपरनिर्दिष्ट विनिश्चयों में स्थिर की गई विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह दृढ़ मत है कि उच्च न्यायालय ने वाद की संधार्यता के प्रश्न को सकारात्मक और इस अपील में प्रत्यर्थी के पक्ष में अभिनिर्धारित करके ठीक किया है ।

32. अब, हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या सभी प्रत्यर्थियों के विरुद्ध उन्हें प्रतिस्थापित न करने के कारण और मूल तृतीय प्रतिवादी-हनुमय्या की मृत्यु होने पर सभी विधिक प्रतिनिधियों को पक्षकार बनाने में असफल रहने के कारण वाद का उपशमन होना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था, जैसी कि अपीलार्थियों द्वारा दलील दी गई है । इसी कारण के आधार पर यह दलील भी दी गई है कि आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण वाद दूषित है । अत: इन प्रश्नों पर संयुक्त रूप से विचार किया जाना चाहिए । स्पष्ट रूप से, निचले न्यायालयों ने प्रतिवादियों की उक्त दलीलों को कायम रखने से इनकार कर दिया था । यह उल्लेखनीय है कि अपीलार्थियों ने एक यह भी दलील दी है कि श्रीमन् माधव संघ जो एक संगठन है और श्री विट्टल राव को वाद के पक्षकारों के रूप में अभियोजित किया जाना चाहिए था और उनको अभियोजित न करने के कारण वाद आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है । इस पर विचार करते हुए, इस तथ्य को भी ध्यान में रखा जाना आवश्यक है, जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही विचार किया गया था, कि पूर्वोक्त श्रीमन् माधव संघ और श्री विट्टल राव ने बेदखली के लिए इस अपील में प्रत्यर्थी के विरुद्ध 1991 की एच. आर. सी. सं. 10020 के रूप में एक याचिका फाइल की थी जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि उसमें का प्रथम प्रत्यर्थी (इस अपील में प्रत्यर्थी) अनुसूचित संपत्ति के एक भाग के अधिभोग में है और उसने अवैध रूप से और अप्राधिकृत रूप से संपत्ति के अन्य दो भागों को उसमें के द्वितीय और तृतीय प्रत्यर्थियों अर्थात् श्री बी. रामचंद्र राव और श्री एन. मुरलीधर राव को क्रमश: 400/- रुपए और 300/- रुपए के मासिक किराए पर उप किराएदारी पर दिया है और उनसे किराया ले रहा

है । इसके अतिरिक्त, यह तथ्य है कि इस अपील में मृत द्वितीय अपीलार्थी की प्रति. सा. 1 के रूप में परीक्षा करते हुए उसने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि तारीख 1 मार्च, 1993 के विक्रय करार प्रदर्श डी-1 के निष्पादन के पश्चात् कोई कब्जा नहीं लिया गया था क्योंकि श्रीमन् माधव संघ ने कब्जा प्राप्त करने और इस अपील में प्रथम अपीलार्थी/प्रथम प्रतिवादी को सौंपने का आश्वासन दिया था । जब स्थिति यह है और जब विषयांतर्गत वाद ऐसा है जो पूर्विक कब्जे पर आधारित है, तो इस अपील में अपीलार्थियों की यह दलील औचित्यपूर्ण नहीं है कि श्रीमन् माधव संघ और श्री विट्टल राव के असंयोजन के कारण वाद दूषित है ।

33. जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अपीलार्थियों ने यह भी दलील दी है कि मृत प्रतिवादी सं. 3 के सभी विधिक प्रतिनिधियों को उसकी मृत्यु के उपरांत प्रतिस्थापित न करने के कारण वाद का सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध उपशमन हो जाना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था । यह दलील आधारहीन और गुणागुण रहित है तथा निचले न्यायालय द्वारा इसे ठीक ही नामंजूर किया गया है । इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि प्रथम अपीलार्थी और मृत द्वितीय अपीलार्थी के साथ-साथ उनके पिता हनुमय्या को भी वाद में प्रतिवादियों के रूप में नामित किया गया था और वे संयुक्त रूप से वाद की प्रतिरक्षा कर रहे थे । मूल तृतीय प्रतिवादी अर्थात् हनुमय्या की मृत्यु के उपरांत मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2, जो मूल प्रतिवादी सं. 3 के पुत्र हैं, ने संयुक्त हित का पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व करते हुए वाद का प्रतिवाद किया गया था और उसके पश्चात् वाद में प्रतिकूल निर्णय और डिक्री सहन करने के पश्चात् उच्च न्यायालय के समक्ष तत्परता से अपील फाइल की थी जिसकी परिणति अंततोगत्वा आक्षेपित निर्णय और डिक्री में हुई थी । यदि संयुक्त हित की दलील को सही मान लिया जाए, तो उसके पश्चात् भी, स्पष्ट रूप से वे संयुक्त हित को शीर्षक अपील फाइल करके तत्परता से अग्रसर कर रहे हैं ।

34. संदर्भित स्थिति में, निम्नलिखित विनिश्चयों की सुसंगतता हो जाती है । **भूरे खान** बनाम **यासीम खान (मृत), विधिक प्रतिनिधियों की**

मार्फत और अन्य[1] अपीलार्थियों वाले मामले में के विनिश्चय को उच्च न्यायालय द्वारा उसमें के अपीलार्थियों अर्थात् मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 की पूर्वोक्त दलील को नामंजूर करने के लिए आक्षेपित निर्णय में निर्दिष्ट किया गया था । **भूरे खान** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय के पैरा 4 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "..... इस प्रकार मृतक की संपदा का पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व किया गया था । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा महाबीर प्रसाद **बनाम** जागे राम [(1971) 1 एस. सी. सी. 265 = ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 742] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, यदि अपीलार्थी ने मृतक की पुत्रियों और विधवा को अभिलेख पर लाने के लिए कोई आवेदन फाइल नहीं किया गया होता तो अपील का सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 4 के अधीन उपशमन नहीं होता । हमारी राय में, स्थिति वहां बदतर नहीं होगी जहां आवेदन अन्य विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने के लिए किया गया हो किंतु उसे एक या अन्य कारण से खारिज कर दिया गया हो । चूंकि मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व किया गया था इसलिए अपील का उपशमन नहीं हो सकता था ।"

35. **आंध्र प्रदेश राज्य** मार्फत **प्रधान सचिव और अन्य** बनाम **प्रताप करण और अन्य**[2] वाले मामले में के विनिश्चय में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था :–

> "40. प्रस्तुत मामले में, वादियों ने इकट्ठा होकर वादांतर्गत भूमि के संबंध में स्वामियों और कब्जाधारियों के रूप में अपने नामों को सम्मिलित करके राजस्व अभिलेख में सुधार करने के लिए अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर वाद फाइल किया था कि उनका हक-पूर्वाधारी, जो स्वीकृत रूप से पट्टेदार और खातेदार था, की मृत्यु के पश्चात् वादी खातेदार के पुत्र होने के कारण सांझेदार के रूप में संपदा के उत्तराधिकारी बने थे । निर्विवाद रूप से, अत: सभी वादियों का उनके पूर्वाधिकारियों द्वारा छोड़ी गई

---

[1] (1995) (सप्ली.) 3 एस. सी. सी. 331.

[2] (2016) 2 एस. सी. सी. 82.

> वादांतर्गत संपत्ति में बराबर-बराबर हिस्सा था । अत:, वादियों में से किसी की मृत्यु होने की दशा में अन्य साझेदारों द्वारा वादांतर्गत संपत्ति के रूप में पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व किया गया है । इसलिए मृत वादियों, जिनकी उच्च न्यायालय में अपील के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई थी, के विधिक प्रतिनिधि (प्रतिनिधियों) को प्रतिस्थापित न करने के कारण संपूर्ण अपील का उपशमन नहीं हो जाएगा । शेष साझेदार मृतक की संपदा में निश्चित हिस्सा होने के कारण अपील का उपशमन हुए बिना अपील को अग्रसर करने के लिए हकदार होंगे । अत: हम अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील से सहमत होने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं ।"

36. हमारा यह सुविचारित मत है कि अनुरूपता उस मामले में लागू होती है जहां प्रतिवादियों में से किसी की मृत्यु होने की दशा में भी जब अन्य प्रतिवादियों द्वारा मृत प्रतिवादी सहित संयुक्त रूप से वाद में संपदा/हित का पूर्णत: और सारभूत रूप से प्रतिनिधित्व किया जा रहा हो और जब वे उसके विधिक प्रतिनिधि भी हों । ऐसे मामलों में, उक्त प्रतिवादी की मृत्यु के परिणामस्वरूप सभी विधिक उत्तराधिकारियों के असंयोजन के कारण प्रतिवादियों को यह दलील देते हुए नहीं सुना जा सकता कि मृत प्रतिवादी के सभी अन्य विधिक प्रतिनिधियों को प्रतिस्थापित न करने के कारण वाद का उपशमन हो जाना चाहिए । इस मामले में, यह उल्लेखनीय है कि मृत तृतीय प्रत्यर्थी के साथ-साथ प्रतिवादी सं. 1 और 2 संयुक्त रूप से अपने हित की प्रतिरक्षा कर रहे थे । अत: पूर्वोक्त विनिश्चय के विनिश्चयाधार को लागू करते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलार्थी/मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने मूल प्रतिवादी सं. 3 की मृत्यु के बावजूद वाद की प्रतिरक्षा की थी और प्रथम अपील फाइल और अग्रसर की थी । द्वितीय अपीलार्थी की मृत्यु के उपरांत प्रथम अपीलार्थी द्वारा मृत द्वितीय अपीलार्थी के प्रतिस्थापित विधिक प्रतिनिधियों के साथ इस कार्यवाही में संयुक्त हित को पूर्णत: और सारभूत रूप से अग्रसर किया जा रहा है, इसलिए हम निचले न्यायालयों के इस दलील को नामंजूर करते हुए निकाले गए निष्कर्षों से असहमत होने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं कि मृत

तृतीय प्रतिवादी के सभी विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित न करने के कारण सभी प्रतिवादियों के विरुद्ध वाद का उपशमन हो जाना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था । इसी कारण से, यह दलील भी असफल हो जानी चाहिए कि उसके सभी विधिक उत्तराधिकारियों/ प्रतिनिधियों के आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण वाद दूषित था ।

37. एक और अन्य कारण भी है, क्यों यह दलील असफल होनी चाहिए कि वाद मृत तृतीय प्रतिवादी श्री हनुमय्या के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर न लाने से आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित था । हमने पहले ही उस पक्षकथन का उल्लेख किया है जिसे प्रतिवादियों ने वाद में फाइल लिखित कथन में आवश्यक अभिवचन किए बिना इसमें लाने की ईप्सा की थी । प्रदर्श डी-1 का अवलंब लेते हुए यह दलील दी गई कि अपीलार्थी/प्रथम प्रतिवादी के पक्ष में संयुक्त रूप से श्रीमन् माधव संघ और श्री विट्टल राव द्वारा निष्पादित वाद की अनुसूची में की संपत्ति के विक्रय करार के अनुसरण में इसका कब्जा इस अपील में प्रथम अपीलार्थी को सौंपा गया था । हमने उच्च न्यायालय द्वारा की गई इसकी नामंजूरी को पहले ही कायम रखा है । तथापि, हम उक्त दलील से जो निकाल रहे हैं वह यह है कि इसके आधार पर अपीलार्थी आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन के आधार को नहीं उठा सकते हैं, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, क्योंकि प्रथम अपीलार्थी को स्वयं उसी वाद में एक पक्षकार के रूप में नामित किया गया था और वह ऐसा व्यक्ति है जिसके पक्ष में यह विक्रय करार अभिकथित रूप से निष्पादित किया गया था । प्रदर्श डी-2 विक्रय विलेख के आधार पर दी गई दलील को भी उच्च न्यायालय द्वारा नामंजूर कर दिया गया था और हमने भी उसे कायम रखा है । हम उसका पुन: इस स्थिति पर बल देने के लिए उल्लेख कर सकते हैं कि इसके आधार पर बनाया गया मामला किसी भी प्रकार से आवश्यक पक्षकार/पक्षकारों के असंयोजन के बारे में दलील देने के लिए आधार नहीं हो सकता है । ऐसा इसलिए है क्योंकि मृत द्वितीय अपीलार्थी, जिसे तद्धीन विक्रेता दिखाया गया था, वाद में मूल द्वितीय प्रतिवादी था । उपरोक्त कारणों से भी आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन की दलील असफल होनी चाहिए ।

38. हमने पहले ही यह पाया है कि निचले न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में सही हैं कि प्रतिवादियों का वाद की अनुसूची में की संपत्ति पर स्वामित्व का मामला नहीं था और प्रदर्श डी-2 के आधार पर ऐसा मामला लाने के लिए की गई ईप्सा को उच्च न्यायलय द्वारा नामंजूर कर दिया गया था और हमने इसे कायम रखा है । वे कब्जे के लिए कोई बेहतर दावा सिद्ध करने में भी असफल रहे हैं । उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि समुचित अभिवचनों के बिना साक्ष्य की कोई मात्रा मायने नहीं रखेगी, विधि की सही प्रतिपादना है । **दुग्गी वीरा वेंकट गोपाला सत्यनारायण** बनाम **साकला वीरा राघवय्या और एक अन्य**[1] वाले मामले में के विनिश्चय में इस न्यायालय ने **हसमत राय और एक अन्य** बनाम **रघुनाथ प्रसाद**[2] वाले मामले में के पूर्ववर्ती विनिश्चय में की गई इस मताभिव्यक्ति से सहमति व्यक्त की थी कि अभिवचनों के बिना दिए गए सबूत की कोई मात्रा की साधारणतया कोई सुसंगतता नहीं है । **दुग्गी वीरा वेंकट गोपाला सत्यनारायण** (उपर्युक्त) वाले मामले में **हसमत राय और एक अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में की पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों के संबंध में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि 'हम सादर विधि के उपरोक्त कथन से सहमत हैं और इसे दोहराते हैं ।' इसके अतिरिक्त, **भारत संघ** बनाम **इब्राहिम उद्दीन और एक अन्य**[3] वाले मामले के विनिश्चय के पैरा 85.6 को निर्दिष्ट करना भी सुसंगत है, जो इस प्रकार है :–

> "85.6 न्यायालय अभिवचनों से बाहर जाकर विचार नहीं कर सकता क्योंकि कोई पक्षकार अभिवचनों में न उठाए गए विवाद्यक/मुद्दे पर साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकता और यदि ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है या न्यायालय द्वारा तथ्य संबंधी निष्कर्ष अभिलिखित किया गया है, तो इसकी अनदेखी कर देनी चाहिए । यद्यपि यह वहां एक भिन्न मामला हो सकता है जहां विनिर्दिष्ट अभिवचनों के बावजूद कोई विशिष्ट विवाद्यक विरचित

---

[1] (1987) 1 एस. सी. सी. 254.

[2] (1981) 3 एस. सी. सी. 103.

[3] (2012) 8 एस. सी. सी. 148.

नहीं किया जाता है और पक्षकार विवादग्रस्त विवाद्यक की पूर्ण जानकारी होने के कारण साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं और न्यायालय इसके आधार पर कोई निष्कर्ष अभिलिखित करता है ।"

39. ऐसी परिस्थितियों में, हमें यह अभिनिर्धारित करने के लिए कतई कोई संकोच नहीं है कि मूल प्रतिवादी लिखित कथन में यह पर्याप्त और समुचित अभिवचन करने में असफल रहे थे कि उनके पास वादांतर्गत संपत्तियों के कब्जे के लिए बेहतर अधिकार हैं । समुचित अभिवचनों के बिना दिए गए सबूत की किसी मात्रा की कोई सुसंगतता नहीं होगी । निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने के लिए अभि. सा. 5 के साक्ष्य का ठीक ही अवलंब लिया है कि प्रतिवादियों को 'ख' अनुसूची की संपत्ति से बलपूर्वक बेकब्जा किया गया था । उक्त निष्कर्ष को कायम न रखने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है ।

40. ऊपर उल्लिखित प्रश्नों पर विचार करने और उत्तर देने के पश्चात् हम यह पता लगाने के लिए उत्सुकतापूर्वक विचार करेंगे कि क्या आक्षेपित निर्णय अनुचितता या किसी स्पष्ट अवैधता से ग्रसित है जिससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप करना आवश्यक हो । निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए ठोस कारण हमें इसका नकारात्मक उत्तर देने के लिए प्रेरित करते हैं । विचारण न्यायालय अभिलेख पर के साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी वाद की अनुसूची की उस संपत्ति का कब्जा वापस लेने का हकदार है जिससे उसे बेकब्जा किया गया था और विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय को प्रेषित अतिरिक्त साक्ष्य पर सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् ही तथा अनेक विनिश्चयों के प्रतिनिर्देश करके सभी दलीलों और पहलुओं पर विचार करते हुए उच्च न्यायालय ने केवल विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि की थी । जैसा कि पहले मत व्यक्त किया गया है, जब निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष अभिलेख पर की सामग्री की सही विचारणा और मूल्यांकन करने का परिणाम है, तो इसलिए उनमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

41. इस प्रकार, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वाद निर्विवाद रूप से पूर्व अनुज्ञा लेकर और अवैध रूप से बेकब्जा करने के आधार पर फाइल किया गया था, इसलिए हम विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान की गई डिक्री, जिसकी पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की गई है, के लिए इस अपील में प्रत्यर्थी/वादी के हक पर निचले न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों को विस्थापित करने के लिए मृत द्वितीय अपीलार्थी के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख प्रदर्श डी-2 (भले ही स्वामियों द्वारा निष्पादित किया गया हो) को स्थापित करने के लिए कोई कारण नहीं पाते हैं । उक्त स्थिति में, यह अपील असफल होनी चाहिए । परिणामतः, इसे खारिज किया जाता है । इन परिस्थितियों में खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाएगा ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014

(2014 का अधिनियम संख्यांक 37)

[18 दिसंबर, 2014]

वास्तुकला अध्ययनों में, जिनमें मानव उपनिवेशों की योजना भी है, शिक्षा और अनुसंधान को प्रोन्नत करने के लिए योजना और वास्तुकला विद्यालयों को स्थापित करने और उन्हें राष्ट्रीय महत्व की संस्थाओं के रूप में घोषित करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के पैंसठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम योजना और वास्तुकला विद्यालय अधिनियम, 2014 है ।

(2) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के भिन्न-भिन्न उपबंधों के लिए भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी और किसी ऐसे उपबंध में इस अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह उस उपबंध के प्रारंभ होने के प्रति निर्देश है ।

2. कतिपय विद्यालयों की राष्ट्रीय महत्व की संस्थाओं के रूप में घोषणा – अनुसूची में वर्णित विद्यालयों के उद्देश्य इस प्रकार के हैं जो उन्हें राष्ट्रीय महत्व की संस्थाएं बनाते हैं, अतः यह घोषित किया जाता है कि ऐसा प्रत्येक विद्यालय राष्ट्रीय महत्व की संस्था है ।

3. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,–

(क) "बोर्ड" से, किसी विद्यालय के संबंध में, उसका शासक बोर्ड अभिप्रेत है ;

(ख) "अध्यक्ष" से बोर्ड का अध्यक्ष अभिप्रेत है ;

(ग) "तत्समान विद्यालय" से, अनुसूची के स्तंभ (3) में वर्णित किसी विद्यालय के संबंध में, अनुसूची के स्तंभ (5) में उक्त विद्यालय के सामने यथा विनिर्दिष्ट विद्यालय अभिप्रेत है ;

(घ) "परिषद्" से धारा 33 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित परिषद् अभिप्रेत है ;

(ङ) "निदेशक" से किसी विद्यालय के संबंध में, उसका निदेशक अभिप्रेत है ;

(च) "विद्यमान विद्यालय" से अनुसूची के स्तंभ (3) के अधीन वर्णित विद्यालय अभिप्रेत है ;

(छ) "सदस्य" से बोर्ड का कोई सदस्य अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत अध्यक्ष भी है ;

(ज) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित कोई अधिसूचना अभिप्रेत है और "अधिसूचित करना" पद का तद्नुसार उसके व्याकरणिक रूपभेदों और सजातीय पदों सहित अर्थ लगाया जाएगा ;

(झ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ञ) "कुल सचिव" से, किसी विद्यालय के संबंध में, उसका कुल-सचिव अभिप्रेत है ;

(ट) "अनुसूची" से इस अधिनियम के साथ उपाबद्ध अनुसूची अभिप्रेत है ;

(ठ) "विद्यालय" से अनुसूची के स्तंभ (5) में वर्णित विद्यालयों में से कोई भी विद्यालय और इस अधिनियम के अधीन स्थापित ऐसे अन्य विद्यालय अभिप्रेत हैं ;

(ड) "सिनेट" से, किसी विद्यालय के संबंध में, उसकी सिनेट

अभिप्रेत है ;

(ढ) "सोसाइटी" से सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन या संबंधित राज्य सरकारों के अधीन रजिस्ट्रीकृत और अनुसूची के स्तंभ (3) में वर्णित सोसाइटियों में से कोई सोसाइटी अभिप्रेत है ;

(ण) "परिनियम" और "अध्यादेश" से, किसी विद्यालय के संबंध में, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए उस विद्यालय के परिनियम और अध्यादेश अभिप्रेत हैं ।

अध्याय 2

विद्यालय

4. विद्यालयों की स्थापना और निगमन – इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से ही, अनुसूची के स्तंभ (3) में विनिर्दिष्ट विद्यालय निगमित निकाय होंगे, जिनका शाश्वत उत्तराधिकार होगा और एक सामान्य मुद्रा होगी और उन्हें इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए जंगम तथा स्थावर दोनों प्रकार की संपत्ति का अर्जन करने, उसे धारण करने तथा उसका व्ययन करने की और संविदा करने की शक्ति होगी तथा वे अनुसूची के स्तंभ (5) में वर्णित अपने-अपने नामों से वाद लाएंगे या उन पर वाद लाया जाएगा ।

5. विद्यालय के उद्देश्य – प्रत्येक विद्यालय के निम्नलिखित उद्देश्य होंगे, अर्थात् :–

(i) योजना और वास्तुकला विद्यालय की स्थापना और विकास का समर्थन करना ;

(ii) वास्तुकला, योजना और सहबद्ध क्षेत्रों में सार्वभौमिक नेतृत्व प्रदान करना ।

6. विद्यालयों के निगमन का प्रभाव – इस अधिनियम के प्रारंभ से ही, –

(क) किसी संविदा या अन्य लिखत में किसी विद्यमान

विद्यालय के प्रति किसी निर्देश के बारे में यह समझा जाएगा कि वह तत्समान विद्यालय के प्रति निर्देश है ;

(ख) प्रत्येक विद्यमान विद्यालय की या उससे संबद्ध सभी जंगम और स्थावर संपत्तियां अनुसूची के स्तंभ (5) के अधीन वर्णित तत्समान विद्यालय में निहित हो जाएंगी ;

(ग) प्रत्येक विद्यमान विद्यालय के सभी अधिकार, ऋण तथा अन्य दायित्व तत्समान विद्यालय को अंतरित हो जाएंगे और उसके अधिकार और दायित्व हो जाएंगे ;

(घ) प्रत्येक विद्यमान द्वारा नियोजित प्रत्येक व्यक्ति अपना पद या सेवा तत्समय विद्यालय में उसी सेवाधृति सहित, उसी पारिश्रमिक पर और उन्हीं निबंधनों और शर्तों पर तथा पेंशन, छुट्टी, उपदान, भविष्य निधि और अन्य मामलों के संबंध में उन्हीं अधिकारों और विशेषाधिकारों पर धारण करेगा जैसे कि वह उस दशा धारण करता यदि यह अधिनियम अधिनियमित नहीं किया गया होता और तब तक ऐसा पद धारण करता रहेगा जब तक कि उसका नियोजन समाप्त नहीं कर दिया जाता है या जब तक ऐसी सेवाधृति, पारिश्रमिक तथा निबंधनों और शर्तों को परिनियमों द्वारा सम्यक् रूप से परिवर्तित नहीं कर दिया जाता है :

परन्तु यदि इस प्रकार किया गया परिवर्तन ऐसे कर्मचारी को स्वीकार्य नहीं है तो उसके नियोजन को विद्यालय द्वारा कर्मचारी के साथ की गई संविदा के निबंधनों के अनुसार या यदि उसमें इस निमित्त कोई उपबंध नहीं किया हो तो विद्यालय द्वारा स्थायी कर्मचारियों की दशा में तीन मास के पारिश्रमिक के बराबर और अन्य कर्मचारियों की दशा में एक मास के पारिश्रमिक के बराबर उसे प्रतिकर देकर समाप्त किया जा सकेगा :

परन्तु यह और कि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में या किसी लिखत या अन्य दस्तावेज में किसी विद्यमान विद्यालय के निदेशक, कुल-सचिव और अन्य अधिकारियों के प्रति, किन्हीं भी शब्द रूपों द्वारा, किए गए किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया

जाएगा कि वह तत्समान विद्यालय के निदेशक, कुल-सचिव और अन्य अधिकारियों के प्रति निर्देश है ;

(ङ) इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व, प्रत्येक विद्यमान विद्यालय में कोई शिक्षण या अनुसंधान पाठ्यक्रम का अध्ययन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे प्रारंभ पर तत्समान विद्यालय में, उस विद्यालय से, जिससे ऐसा व्यक्ति स्थानांतरित हुआ है, अध्ययन के उसी स्तर पर स्थानांतरित और रजिस्ट्रीकृत किया गया समझा जाएगा ;

(च) इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व किसी विद्यमान विद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध संस्थित या संस्थित किए जा सकने वाले सभी वाद और अन्य विधिक कार्यवाहियां तत्समान विद्यालय द्वारा या उसके विरुद्ध जारी रहेंगी या संस्थित की जाएंगी ।

7. विद्यालय की शक्तियां और कृत्य – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक विद्यालय उन शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करेगा, जो नीचे विनिर्दिष्ट की गई हैं, अर्थात् :–

(क) वास्तुकला, योजना, डिजाइन और संबद्ध क्रियाकलापों में ऐसी रीति में, जो विद्यालय उचित समझे, जिसमें किसी अन्य विद्यालय, शिक्षा संस्था, अनुसंधान संगठन या निगमित निकाय के साथ सहयोग या सहयोजन भी है, अनुसंधान और नए खोज कार्यों का आयोजन और जिम्मा लेना ;

(ख) परीक्षाएं आयोजित करना और डिग्रियां, डिप्लोमे, प्रमाणपत्र और अन्य डिग्रियां प्रदान करना ;

(ग) अध्येतावृत्तियां, छात्रवृत्तियां स्थापित करना और पुरस्कार, मानद डिग्रियां या अन्य शैक्षणिक उपाधियां या अभिधान प्रदान करना ;

(घ) फीस और अन्य प्रभार नियत करना, उनकी मांग करना और उन्हें प्राप्त करना ;

(ङ) छात्रों के निवास के लिए हालों और छात्रावासों की स्थापना करना, उनका अनुरक्षण और प्रबंध करना ;

(च) विद्यालय के छात्रों के निवास का पर्यवेक्षण और नियंत्रण करना तथा उनके अनुशासन को विनियमित करना तथा उनके स्वास्थ्य, सामान्य कल्याण और सांस्कृतिक तथा सामूहिक जीवन के संवर्धन की व्यवस्था करना ;

(छ) केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन से शैक्षणिक और अन्य पदों को अधिसूचित करना और उन पदों पर, निदेशक के पद को छोड़कर, नियुक्ति करना ;

(ज) किसी अन्य विद्यालय या शिक्षा संस्था में कार्यरत या विद्यालय के अनुबद्ध, अतिथि या अभ्यागत शिक्षकों के रूप में किसी उद्योग में महत्वपूर्ण अनुसंधान में लगे व्यक्तियों की ऐसे निबंधनों पर और ऐसी अवधि के लिए, जो विद्यालय द्वारा विनिश्चित की जाए, नियुक्ति करना ;

(झ) परिनियम और अध्यादेश बनाना तथा उन्हें परिवर्तित, उपांतरित या विखंडित करना ;

(ञ) ऐसी अवसंरचना की स्थापना और अनुरक्षण करना जो आवश्यक हो ;

(ट) विद्यालय के उद्देश्यों को अग्रसर करने में विद्यालय से संबद्ध या उसमें निहित किसी संपत्ति के विषय में, ऐसी रीति में, जो विद्यालय उचित समझे, संव्यवहार करना ;

(ठ) विद्यालय की निधि का प्रबंध करना तथा सरकार से दान, अनुदान, संदान या उपकृतियां प्राप्त करना तथा, यथास्थिति, वसीयतकर्ताओं, दाताओं या अंतरकों से जंगम या स्थावर संपत्तियों की वसीयतें, संदान और अंतरण प्राप्त करना ;

(ड) विश्व के किसी भाग में की ऐसी शैक्षणिक या अन्य संस्थाओं के साथ, जिनके पूर्णतः या भागतः वही उद्देश्य हैं जो उस विद्यालय के हैं, शिक्षकों, छात्रों और विद्वानों की अदला-बदली

करके और साधारणतया ऐसी रीति में, जो उनके समान उद्देश्यों में सहायक हो, ऐसे निबंधनों पर, जो सिनेट द्वारा समय-समय पर विनिर्दिष्ट किए जाएं, सहयोग करना ;

(ढ) विद्यालय के समान उद्देश्यों की अभिवृद्धि के लिए उससे संबंधित क्षेत्रों या शाखाओं से परामर्श लेना ; और

(ण) ऐसी सभी बातें करना जो विद्यालय के सभी या किन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक, आनुषंगिक या सहायक हों ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, विद्यालय केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन के बिना किसी भी स्थावर संपत्ति का किसी भी रीति में व्ययन नहीं करेगा ।

8. विद्यालय का सभी मूलवंशों, पंथों और वर्गों के लिए खुला होना – (1) प्रत्येक विद्यालय स्त्री या पुरुष सभी व्यक्तियों के लिए, चाहे वे किसी भी मूलवंश, पंथ, जाति या वर्ग, धर्म, निर्योग्यता, अधिवास, नस्ल, सामाजिक या आर्थिक पृष्ठभूमि के हों, खुला रहेगा ।

(2) किसी भी विद्यालय द्वारा किसी संपत्ति की ऐसी कोई वसीयत, संदान या अंतरण स्वीकार नहीं किया जाएगा, जिसमें परिषद् की राय में इस धारा के भाव और उद्देश्य के विपरीत शर्तें या बाध्यताएं अन्तर्वलित हैं ।

9. विद्यालय में अध्यापन – प्रत्येक विद्यालय में सभी अध्यापन कार्य इस निमित्त बनाए गए परिनियमों और अध्यादेशों के अनुसार विद्यालय द्वारा या उसके नाम से किए जाएंगे ।

10. विद्यालय का एक अलाभार्थ सुभिन्न विधिक इकाई होना – प्रत्येक विद्यालय एक अलाभार्थ विधिक इकाई होगा और ऐसे विद्यालय के राजस्व के किसी भी अधिशेष भाग का, यदि कोई हो, अधिनियम के अधीन उसकी संक्रियाओं के संबंध में सभी व्ययों को चुकाने के पश्चात् उस विद्यालय की अभिवृद्धि और विकास या उनमें अनुसंधान करने से भिन्न किसी प्रयोजन के लिए विनिधान नहीं किया जाएगा ।

11. कुलाध्यक्ष – (1) भारत का राष्ट्रपति प्रत्येक विद्यालय का

कुलाध्यक्ष होगा ।

(2) कुलाध्यक्ष किसी विद्यालय के कार्य और प्रगति का पुनर्विलोकन करने के लिए और उसके कार्यकलापों की जांच करने के लिए और उन पर रिपोर्ट देने के लिए, एक या अधिक व्यक्तियों को ऐसी रीति से नियुक्त कर सकेगा, जैसे कुलाध्यक्ष निदेश दे ।

(3) ऐसी किसी रिपोर्ट की प्राप्ति पर, कुलाध्यक्ष ऐसी कार्रवाई और ऐसे निदेश जारी कर सकेगा जो वह रिपोर्ट में वर्णित किन्हीं विषयों की बाबत आवश्यक समझे और विद्यालय ऐसे निदेशों का युक्तियुक्त समय के भीतर पालन करने के लिए आबद्ध होगा ।

अध्याय 3

विद्यालय के प्राधिकारी

12. विद्यालय के प्राधिकारी – किसी विद्यालय के निम्नलिखित प्राधिकारी होंगे, अर्थात् :–

(क) शासक बोर्ड ;

(ख) सिनेट ; और

(ग) ऐसे अन्य प्राधिकारी, जिन्हें परिनियमों द्वारा विद्यालय के प्राधिकारी घोषित किया जाए ।

13. शासक बोर्ड – (1) प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड उस विद्यालय का प्रधान कार्यपालक निकाय होगा ।

(2) प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगा, अर्थात् :–

(क) अध्यक्ष, जिसकी नियुक्ति कुलाध्यक्ष द्वारा केन्द्रीय सरकार द्वारा सिफारिश किए गए तीन नामों के एक पैनल में से की जाएगी, जो कि एक विख्यात वास्तुविद् या योजनाकार होगा ;

(ख) संबंधित राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र का, जिसमें विद्यालय स्थित है, तकनीकी शिक्षा या उच्चतर शिक्षा का प्रधान सचिव या सचिव ;

(ग) नगर योजनाकार संस्थान, भारत से एक प्रतिनिधि, जिसे नगर योजनाकार संस्थान, भारत के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(घ) वास्तुकला परिषद् से एक प्रतिनिधि, जिसे वास्तुकला परिषद् के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(ङ) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् से एक प्रतिनिधि, जिसे अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(च) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का एक प्रतिनिधि ;

(छ) वास्तुकला या भू-दृश्य वास्तुकला या नगरीय डिजाइन के व्यवसायों से एक विशेषज्ञ तथा नगरीय और प्रादेशिक योजना से एक विशेषज्ञ, जिसे योजना और वास्तुकला विद्यालय परिषद् द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(ज) सिनेट से दो प्रतिनिधि, योजना विभाग और वास्तुकला विभाग, दोनों से चक्रानुक्रम द्वारा, ज्येष्ठता क्रम में, दो वर्ष की अवधि के लिए एक-एक प्रतिनिधि ;

(झ) दो व्यक्ति, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे के न हों, जिन्हें केन्द्रीय सरकार द्वारा तकनीकी शिक्षा और वित्त से संबद्ध व्यक्तियों या उनके नामनिर्देशितियों में से नामनिर्दिष्ट किया जाएगा, पदेन ;

(ञ) एक व्यक्ति, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे का न हो, जिसे शहरी विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(ट) विद्यालय का निदेशक, सदस्य, पदेन ;

(ठ) विद्यालय का कुल-सचिव बोर्ड के सचिव के रूप में कार्य करेगा ।

14. बोर्ड के सदस्यों की पदावधि, उनके बीच रिक्तियां और उनको

संदेय भत्ते – इस धारा में जैसा अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय, –

(क) बोर्ड के अध्यक्ष या किन्हीं अन्य सदस्यों की पदावधि, उसके नामनिर्देशन की तारीख से, पांच वर्ष की होगी ;

(ख) किसी पदेन सदस्य की पदावधि तब तक बनी रहेगी जब तक वह उस पद को, जिसके आधार पर वह ऐसा सदस्य है, धारण किए रहता है ;

(ग) धारा 13 के खंड (ज) के अधीन नामनिर्दिष्ट किसी सदस्य की पदावधि उसके नामनिर्देशन की तारीख से दो वर्ष या उसके पद धारण करने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, की होगी ;

(घ) किसी सदस्य की आकस्मिक रिक्ति धारा 13 के उपबंधों के अनुसार भरी जाएगी ;

(ङ) किसी आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए नामनिर्दिष्ट किसी सदस्य की पदावधि उस सदस्य के, जिसके स्थान पर उसे नामनिर्दिष्ट किया गया है, शेष कार्यकाल तक के लिए बनी रहेगी ; और

(च) बोर्ड के सदस्य बोर्ड की या विद्यालय द्वारा बुलाई गई बैठकों में भाग लेने के लिए विद्यालय से ऐसे भत्तों के, यदि कोई हों, हकदार होंगे, जो परिनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट किए जाएं, किन्तु धारा 13 की उपधारा (2) के खंड (ज), खंड (ट) और खंड (ठ) में निर्दिष्ट सदस्यों से भिन्न कोई सदस्य इस खंड के कारण किसी वेतन का हकदार नहीं होगा ।

15. बोर्ड की शक्तियां और कृत्य – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक विद्यालय का बोर्ड, विद्यालय के कार्यकलापों के साधारण अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण के लिए उत्तरदायी होगा और उसे विद्यालय की वे सभी शक्तियां प्राप्त होंगी जिनके लिए इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं किया गया है और उसे सिनेट के कार्यों का पुनर्विलोकन करने की शक्ति होगी ।

(2) प्रत्येक विद्यालय के बोर्ड को, उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, निम्नलिखित शक्तियां प्राप्त होंगी, अर्थात् :–

(क) विद्यालय के प्रशासन और कार्यकरण से संबंधित नीति विषयक प्रश्नों का विनिश्चय करना ;

(ख) विभागों, संकायों अथवा अध्ययन विद्यालयों की स्थापना करना तथा विद्यालय में अध्ययन कार्यक्रम और पाठ्यक्रम आरंभ करना ;

(ग) ऐसे विद्यालय के प्रशासन, प्रबंधन और संक्रियाओं को शासित करने संबंधी परिनियम बनाना ;

(घ) विद्यालय के शैक्षणिक और गैर-शैक्षणिक अनुभाग में व्यक्तियों को नियुक्त करना ;

(ङ) अध्यादेशों पर विचार करना और उन्हें उपांतरित या रद्द करना ;

(च) विद्यालय की वार्षिक, रिपोर्ट, संपरीक्षित लेखाओं और अगले वित्तीय वर्ष के बजट प्राक्कलनों पर विचार करना तथा ऐसे संकल्प पारित करना जो वह उचित समझे और उन्हें अपनी विकास योजनाओं के विवरण के साथ परिषद् को प्रस्तुत करना ;

(छ) ऐसे विद्यालय में अध्यापन और अन्य पदों पर नियुक्ति के लिए, परिनियमों द्वारा, अर्हताओं, मापदंडों और प्रक्रियाओं का उपबंध करना ;

(ज) ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग करना और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करना जो उसे इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा प्रदत्त की जाएं या उस पर अधिरोपित किए जाएं ।

(3) बोर्ड को उतनी समितियां नियुक्त करने की शक्ति होगी, जितनी वह इस अधिनियम के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग और अपने कर्तव्यों के पालन के लिए आवश्यक समझे ।

(4) बोर्ड, निदेशक के कार्यपालन का, विद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति

के संदर्भ में उसके नेतृत्व के प्रति विनिर्दिष्ट निर्देश करते हुए, वार्षिक पुनर्विलोकन कराएगा ।

(5) बोर्ड, शक्तियों के प्रयोग और कृत्यों के निर्वहन में सिनेट और विद्यालय के, यथास्थिति, विभागों या संकायों को शैक्षणिक मामलों में स्वायतत्ता प्रदान करने का यथासंभव प्रयास करेगा ।

(6) जहां निदेशक या अध्यक्ष की राय में स्थिति इतनी आपातिक है कि विद्यालय के हित में तुरन्त विनिश्चय किए जाने की आवश्यकता है, वहां अध्यक्ष, निदेशक की सिफारिश पर, अपनी राय में उन आधारों को अभिलेखबद्ध करके, ऐसे आदेश जारी कर सकेगा जो आवश्यक हों :

परन्तु ऐसे आदेशों को बोर्ड की अगली बैठक में उसके अनुसमर्थन के लिए प्रस्तुत किया जाएगा ।

16. सिनेट – (1) प्रत्येक विद्यालय की सिनेट निम्नलिखित व्यक्तियों से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(क) विद्यालय का निदेशक, सिनेट का अध्यक्ष, पदेन ;

(ख) ख्यातिप्राप्त शिक्षाविदों या विख्यात वृत्तिकों में से पांच ऐसे व्यक्ति, जो विद्यालय की सेवा में न हों, जिन्हें शासक बोर्ड के अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा ;

(ग) नगर योजनाकार संस्थान, भारत का एक नामनिर्देशिती ;

(घ) वास्तुकला परिषद् का एक नामनिर्देशिती ;

(ङ) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् का एक नामनिर्देशिती ;

(च) शैक्षणिक अनुसंधान, छात्र क्रियाकलाप, संकाय कल्याण विद्यालय की योजना और विकास का भारसाधक संकायाध्यक्ष ;

(छ) सभी विभागाध्यक्ष ;

(ज) विभागाध्यक्षों से भिन्न सभी आचार्य ;

(झ) विद्यालय के सह-आचार्यों और सहायक आचार्यों का

प्रतिनिधित्व करने वाले अध्यापन कर्मचारिवृन्द के, चक्रानुक्रम से, दो वर्ष की अवधि के लिए, चार सदस्य :

परन्तु विद्यालय का कोई कर्मचारी खंड (ख), खंड (ग), खंड (घ) और खंड (ङ) में निर्दिष्ट सदस्यता के लिए पात्र नहीं होगा ।

(2) सिनेट के पदेन सदस्यों से भिन्न सदस्यों की पदावधि दो वर्ष की होगी ।

17. सिनेट के कृत्य – (1) इस अधिनियम, परिनियमों और अध्यादेशों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, विद्यालय की सिनेट विद्यालय की प्रधान शिक्षण निकाय होगी और विद्यालय में शिक्षण, शिक्षा और परीक्षा के स्तर बनाए रखने के लिए उत्तरदायी होगी और उसे ऐसी अन्य शक्तियां प्राप्त होंगी और वह ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगी जो परिनियमों द्वारा उसे प्रदत्त की जाएं या उस पर अधिरोपित किए जाएं ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, सिनेट को निम्नलिखित शक्तियां प्राप्त होंगी, अर्थात् :–

(क) विद्यालय द्वारा चलाए जा रहे अध्ययन पाठ्यक्रमों या कार्यक्रमों के लिए मानदंड और प्रक्रिया विनिर्दिष्ट करना ;

(ख) बोर्ड को अध्यापन और अन्य शैक्षणिक पदों का सृजन करने की सिफारिश करना, ऐसे पदों की संख्या और उपलब्धियों का अवधारण करना और शिक्षकों तथा अन्य शैक्षणिक पदों के कर्तव्यों और सेवा शर्तों को परिभाषित करना ;

(ग) बोर्ड को नए अध्ययन कार्यक्रम और पाठ्यक्रम प्रारंभ करने की सिफारिश करना ;

(घ) अध्ययन कार्यक्रमों और पाठ्यक्रमों की शैक्षणिक अन्तर्वस्तु बोर्ड को विनिर्दिष्ट करना और उसमें उपांतरण करना ;

(ङ) शैक्षणिक कैलेंडर विनिर्दिष्ट करना और डिग्रियां, डिप्लोमे और अन्य शैक्षणिक उपाधियां या अभिधान दिए जाने का अनुमोदन करना ;

(च) ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कृत्यों का निर्वहन करना जो परिनियमों द्वारा या बोर्ड द्वारा उसे सौंपे जाएं ।

18. बोर्ड का अध्यक्ष – (1) अध्यक्ष साधारणतया, बोर्ड की बैठक की और विद्यालय के दीक्षांत समारोहों की अध्यक्षता करेगा ।

(2) अध्यक्ष का यह सुनिश्चित करने का कर्तव्य होगा कि बोर्ड द्वारा किए गए विनिश्चयों को कार्यान्वित किया जाए ।

(3) अध्यक्ष ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा उसे सौंपे जाएं ।

19. निदेशक – (1) विद्यालय का निदेशक केन्द्रीय सरकार द्वारा, कुलाध्यक्ष के पूर्वानुमोदन से, सेवा के ऐसे निबंधनों और शर्तों पर नियुक्त किया जाएगा जो परिनियमों द्वारा उपबंधित की जाएं ।

(2) निदेशक, विद्यालय का प्रधान शैक्षणिक और कार्यपालक अधिकारी होगा और बोर्ड तथा सिनेट के विनिश्चयों के क्रियान्वयन तथा विद्यालय के दिन-प्रतिदिन के प्रशासन के लिए उत्तरदायी होगा ।

(3) निदेशक ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा उसे सौंपे जाएं अथवा बोर्ड या सिनेट अथवा अध्यादेशों द्वारा उसे प्रत्यायोजित किए जाएं ।

(4) निदेशक बोर्ड को वार्षिक रिपोर्टें तथा संपरीक्षित लेखा प्रस्तुत करेगा ।

20. कुल-सचिव – (1) प्रत्येक विद्यालय का कुल-सचिव ऐसे निबंधनों तथा शर्तों पर नियुक्त किया जाएगा जो परिनियमों द्वारा अधिकथित की जाएं और वह विद्यालय के अभिलेखों, उसकी सामान्य मुद्रा, निधियों और विद्यालय की ऐसी अन्य संपत्ति का अभिरक्षक होगा, जो बोर्ड उसके भारसाधन में सुपुर्द करे ।

(2) कुल-सचिव बोर्ड, सिनेट और ऐसी समितियों के, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं, सचिव के रूप में कार्य करेगा ।

(3) कुल-सचिव अपने कृत्यों के उचित निर्वहन के लिए निदेशक के प्रति उत्तरदायी होगा ।

(4) कुल-सचिव ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा जो इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा या निदेशक द्वारा उसे सौंपे जाएं ।

21. अन्य प्राधिकारी और अधिकारी – ऊपर वर्णित प्राधिकारियों और अधिकारियों से भिन्न प्राधिकारियों और अधिकारियों की शक्तियों और कर्तव्यों का अवधारण परिनियमों द्वारा किया जाएगा ।

22. विद्यालय के कार्यपालन का पुनर्विलोकन – (1) प्रत्येक विद्यालय, इस अधिनियम के अधीन विद्यालय की स्थापना और उसके निगमन से सात वर्ष के भीतर और तत्पश्चात् प्रत्येक पांचवें वर्ष की समाप्ति पर, केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन से, उक्त अवधि में विद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति में उसके कार्यपालन का मूल्यांकन और पुनर्विलोकन करने के लिए एक समिति का गठन करेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन गठित समिति में शैक्षणिक या उद्योग जगत के माने हुए ख्याति प्राप्त सदस्य होंगे जिन्हें ज्ञान के ऐसे क्षेत्रों से लिया जाएगा जिनकी उस विद्यालय में अध्यापन, विद्यार्जन और अनुसंधान से सुसंगति है ।

(3) समिति, विद्यालय के कार्यपालन का निर्धारण करेगी और बोर्ड को परिनियमों में अधिकथित उपबंधों के अनुसार सिफारिशें करेगी ।

23. केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान – विद्यालयों को इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का दक्षतापूर्ण निर्वहन करने में समर्थ बनाने के प्रयोजन के लिए, केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा किए गए सम्यक् विनियोजन के पश्चात् प्रत्येक विद्यालय को प्रत्येक वित्तीय वर्ष में ऐसी धनराशि का ऐसी रीति से, संदाय करेगी, जो वह उचित समझे ।

अध्याय 4

लेखा और संपरीक्षा

24. विद्यालय की निधि – (1) प्रत्येक विद्यालय एक निधि रखेगा, जिसमें निम्नलिखित जमा किए जाएंगे,–

(क) केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए गए सभी धन ;

(ख) विद्यालय द्वारा प्राप्त सभी फीसें तथा अन्य प्रभार ;

(ग) विद्यालय द्वारा अनुदान, दान, संदान, उपकृति, वसीयत अथवा अंतरणों के रूप में प्राप्त सभी धन ;

(घ) विद्यालय द्वारा किए गए अनुसंधान से उद्भूत बौद्धिक संपदा के उपयोग से या उसके द्वारा सलाहकारी या परामर्शकारी सेवाओं का उपबंध करने से प्राप्त सभी धन ; और

(ङ) विद्यालय द्वारा किसी अन्य रीति या किसी अन्य स्रोत से प्राप्त सभी धन ।

(2) प्रत्येक विद्यालय की निधि में जमा किए गए सभी धन, ऐसे बैंकों में जमा या ऐसी रीति से विनिहित किए जाएंगे, जो विद्यालय वित्त समिति और शासी निकाय के अनुमोदन से विनिश्चित करे ।

(3) किसी विद्यालय की निधि का उपयोग विद्यालय के व्ययों को, जिनके अन्तर्गत इस अधिनियम के अधीन उसकी शक्तियों के प्रयोग में और कृत्यों के निर्वहन में किए गए व्यय भी हैं, चुकाने के लिए किया जाएगा ।

25. लेखा और संपरीक्षा – (1) प्रत्येक विद्यालय उचित लेखा और अन्य सुसंगत अभिलेख रखेगा और लेखाओं का एक वार्षिक विवरण, जिसके अन्तर्गत तुलनपत्र भी है, ऐसे प्ररूप और लेखांकन मानक में तैयार करेगा जैसा केन्द्रीय सरकार द्वारा, भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक से परामर्श करके, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किया जाए ।

(2) जहां विद्यालय के आय-व्यय का विवरण और तुलनपत्र लेखांकन मानकों के अनुरूप नहीं है, वहां विद्यालय अपने आय-व्यय के विवरण और तुलनपत्र में निम्नलिखित का प्रकटन करेगा, अर्थात् :–

(क) लेखांकन मानकों से विचलन ;

(ख) ऐसे विचलन के कारण ; और

(ग) ऐसे विचलन से उद्भूत वित्तीय प्रभाव, यदि कोई हो ।

(3) प्रत्येक विद्यालय के लेखाओं की संपरीक्षा भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा की जाएगी और ऐसी संपरीक्षा के संबंध में संपरीक्षा दल द्वारा उपगत कोई व्यय विद्यालय द्वारा भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को संदेय होगा ।

(4) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक और विद्यालय के लेखाओं की संपरीक्षा के संबंध में उसके द्वारा नियुक्त किसी व्यक्ति के उस संपरीक्षा के संबंध में वे ही अधिकार, विशेषाधिकार और प्राधिकार होंगे जो भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के सरकारी लेखाओं की संपरीक्षा के संबंध में होते हैं और उसे विशिष्ट रूप से बहियां, लेखे, संबंधित वाउचर तथा अन्य दस्तावेज और कागजपत्र पेश किए जाने की मांग करने और विद्यालय के कार्यालयों का निरीक्षण करने का अधिकार होगा ।

(5) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा या इस निमित्त उसके द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रत्येक विद्यालय के यथाप्रमाणित लेखे, उनकी संपरीक्षा रिपोर्ट के साथ, प्रतिवर्ष केन्द्रीय सरकार को अग्रेषित किए जाएंगे और वह सरकार उन्हें ऐसी प्रक्रिया के अनुसार, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिकथित की जाए, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगी ।

26. पेंशन और भविष्य निधि – (1) प्रत्येक विद्यालय अपने कर्मचारियों के फायदे के लिए ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो परिनियमों द्वारा विहित की जाएं, ऐसी भविष्य निधि और पेंशन निधि स्थापित कर सकेगा या ऐसी बीमा स्कीम का उपबंध कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

(2) जहां कोई ऐसी भविष्य निधि या पेंशन निधि इस प्रकार स्थापित की गई है, वहां केन्द्रीय सरकार यह घोषित कर सकेगी कि भविष्य निधि अधिनियम, 1925 (1925 का 19) के उपबंध ऐसी निधि को इस प्रकार लागू होंगे मानो वह कोई सरकारी भविष्य निधि हो ।

27. नियुक्तियां – प्रत्येक विद्यालय के कर्मचारिवृन्द की सभी नियुक्तियां, निदेशक की नियुक्ति के सिवाय परिनियमों में अधिकथित

प्रक्रिया के अनुसार निम्नलिखित द्वारा की जाएंगी,–

(क) बोर्ड द्वारा, यदि नियुक्ति शैक्षणिक कर्मचारिवृन्द के संबंध में सहायक आचार्य के पद पर की जाती है या यदि नियुक्ति गैर-शैक्षणिक कर्मचारिवृन्द के संबंध में ऐसे प्रत्येक काडर में की जाती है, जिसका अधिकतम वेतनमान समूह 'क' अधिकारियों के विद्यमान ग्रेड वेतनमान से अधिक है ;

(ख) किसी अन्य दशा में, निदेशक द्वारा ।

28. परिनियम – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए परिनियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) सम्मानिक डिग्रियां प्रदान किया जाना ;

(ख) शिक्षण विभागों और अनुसंधान केन्द्रों का बनाया जाना ;

(ग) विद्यालय में अध्ययन पाठ्यक्रमों के लिए और विद्यालय की डिग्री और डिप्लोमा परीक्षाओं में प्रवेश के लिए प्रभारित की जाने वाली फीस ;

(घ) अध्येतावृत्तियों, छात्रवृत्तियों, छात्र सहायता वृत्तियों, पदकों और पुरस्कारों का संस्थित किया जाना ;

(ङ) विद्यालय के अधिकारियों की पदावधि और नियुक्ति की पद्धति ;

(च) विद्यालय के शिक्षकों की अर्हताएं ;

(छ) विद्यालय के शिक्षकों और अन्य कर्मचारिवृन्द का वर्गीकरण, नियुक्ति की पद्धति और सेवा के निबंधनों और शर्तों का अवधारण ;

(ज) विद्यालय के अधिकारियों, शिक्षकों और अन्य कर्मचारिवृन्द के फायदे के लिए पेंशन, बीमा और भविष्य निधियों की स्थापना ;

(झ) विद्यालय के प्राधिकारियों का गठन, शक्तियां और कर्तव्य ;

(ञ) हालों और छात्रावासों की स्थापना और उनका अनुरक्षण ;

(ट) विद्यालय के छात्रों के निवास की शर्तें और हालों तथा छात्रावासों में निवास के लिए फीस और अन्य प्रभारों का उद्ग्रहण ;

(ठ) बोर्ड के अध्यक्ष और सदस्यों को संदत्त किए जाने वाले भत्ते ;

(ड) बोर्ड के आदेशों और विनिश्चयों का अधिप्रमाणन ; और

(ढ) बोर्ड, सिनेट या किसी समिति की बैठकें, ऐसी बैठकों में गणपूर्ति और उनके कार्य संचालन में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया ।

29. परिनियम किस प्रकार बनाए जाएंगे – (1) प्रत्येक विद्यालय के प्रथम परिनियम केन्द्रीय सरकार द्वारा कुलाध्यक्ष के अनुमोदन से विरचित किए जाएंगे और उनकी एक प्रति यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी ।

(2) बोर्ड, समय-समय पर नए या अतिरिक्त परिनियम बना सकेगा या इस धारा में उपबंधित रीति में परिनियमों को संशोधित या निरसित कर सकेगा ।

(3) प्रत्येक नए परिनियम या परिनियमों में परिवर्धन या परिनियमों के किसी संशोधन या निरसन के लिए कुलाध्यक्ष का पूर्व अनुमोदन अपेक्षित होगा, जो उसके लिए अनुमति दे सकेगा या अनुमति रोक सकेगा या उसे बोर्ड को विचारार्थ भेज सकेगा ।

(4) नए परिनियम या किसी विद्यमान परिनियम का संशोधन या निरसन करने वाला कोई परिनियम तब तक विधिमान्य नहीं होगा जब तक कुलाध्यक्ष द्वारा उसे अनुमति नहीं दे दी जाती है :

परन्तु केन्द्रीय सरकार कुलाध्यक्ष के पूर्वानुमोदन से विद्यालय के लिए परिनियम बना सकेगी या उनमें संशोधन कर सकेगी, यदि ऐसा किया जाना एकरूपता के लिए अपेक्षित हो और उसकी एक प्रति यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी ।

30. अध्यादेश – इस अधिनियम और परिनियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक विद्यालय के अध्यादेशों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) विद्यालय में छात्रों का प्रवेश ;

(ख) विद्यालय की सभी डिग्रियों और डिप्लोमाओं के लिए अधिकथित किए जाने वाले अध्ययन पाठ्यक्रम ;

(ग) वे शर्तें जिनके अधीन छात्रों को डिग्री या डिप्लोमा पाठ्यक्रमों में और विद्यालय की परीक्षाओं में प्रवेश दिया जाएगा और वे डिग्री और डिप्लोमा के लिए पात्र होंगे ;

(घ) अध्येतावृत्तियों, छात्रवृत्तियों, छात्र सहायता वृत्तियां, पदक और पुरस्कार प्रदान किए जाने की शर्तें ;

(ङ) परीक्षा निकायों, परीक्षकों और अनुसीमकों की नियुक्ति की शर्तें और ढंग तथा उनके कर्तव्य ;

(च) परीक्षाओं का संचालन ;

(छ) विद्यालय के छात्रों में अनुशासन बनाए रखना ; और

(ज) कोई अन्य विषय, जिसके लिए इस अधिनियम या परिनियमों द्वारा, अध्यादेशों में उपबंध किया जाना है या किया जाए ।

31. अध्यादेश किस प्रकार बनाए जाएंगे – (1) इस धारा में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय अध्यादेश सिनेट द्वारा बनाए जाएंगे ।

(2) सिनेट द्वारा बनाए गए सभी अध्यादेश ऐसी तारीख से प्रभावी होंगे, जो वह निदिष्ट करे, किन्तु इस प्रकार बनाया गया प्रत्येक अध्यादेश, यथाशीघ्र बोर्ड को प्रस्तुत किया जाएगा और बोर्ड द्वारा उस पर उसकी आगामी बैठक में विचार किया जाएगा ।

(3) बोर्ड को ऐसे किसी अध्यादेश को संकल्प द्वारा उपांतरित या रद्द करने की शक्ति होगी और ऐसे संकल्प की तारीख से ऐसा अध्यादेश, यथास्थिति, तद्नुसार उपांतरित या रद्द हो जाएगा ।

32. माध्यस्थम् अधिकरण – (1) विद्यालय और उसके किन्हीं कर्मचारियों के बीच किसी संविदा से उद्भूत होने वाला कोई विवाद संबद्ध कर्मचारी के अनुरोध पर या विद्यालय की प्रेरणा पर ऐसे किसी माध्यस्थम् अधिकरण को, जिसमें विद्यालय द्वारा नियुक्त एक सदस्य, कर्मचारी द्वारा नामनिर्दिष्ट एक सदस्य तथा कुलाध्यक्ष द्वारा नियुक्त एक अधिनिर्णायक हो, निर्दिष्ट किया जाएगा ।

(2) अधिकरण का विनिश्चय अंतिम होगा और उसे किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

(3) ऐसे किसी मामले की बाबत, जिसे उपधारा (1) द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट किया जाना अपेक्षित है, किसी न्यायालय में कोई वाद या कार्यवाही नहीं होगी ।

(4) माध्यस्थम् अधिकरण को अपनी स्वयं की प्रक्रिया विनियमित करने की शक्ति होगी :

परंतु अधिकरण ऐसी प्रक्रिया बनाते समय नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को ध्यान में रखेगा ।

(5) माध्यस्थम् से संबंधित तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में अन्तर्विष्ट कोई बात इस धारा के अधीन माध्यस्थमों को लागू नहीं होगी ।

अध्याय 5

परिषद्

33. विद्यालयों के लिए परिषद् की स्थापना – (1) ऐसी तारीख से, जो केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, अनुसूची के स्तंभ (3) में विनिर्दिष्ट सभी विद्यालयों के लिए परिषद् नामक एक केन्द्रीय निकाय की स्थापना की जाएगी ।

(2) परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात् :–

(क) तकनीकी शिक्षा का प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय या विभाग का भारसाधक मंत्री, पदेन, अध्यक्ष ;

(ख) भारत की संसद् के दो सदस्य (लोक सभा अध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाने वाला एक सदस्य और राज्य सभा के सभापति द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाला एक सदस्य), पदेन ;

(ग) तकनीकी शिक्षा का प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय या विभाग का भारसाधक सचिव, भारत सरकार, पदेन, उपाध्यक्ष ;

(घ) प्रत्येक बोर्ड का अध्यक्ष, पदेन ;

(ङ) प्रत्येक विद्यालय का निदेशक, पदेन ;

(च) अध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, पदेन ;

(छ) प्रधान, वास्तुकला परिषद्, नई दिल्ली, पदेन ;

(ज) प्रधान, नगर योजनाकार संस्थान, भारत, पदेन ;

(झ) अध्यक्ष, भारतीय वास्तुविद् संस्थान, पदेन ;

(ञ) प्रधान, भारतीय सर्वेक्षक संस्था, पदेन ;

(ट) शहरी विकास और रक्षा से संबद्ध केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों या विभागों का प्रतिनिधित्व करने के लिए भारत सरकार के दो सचिव, पदेन ;

(ठ) अध्यक्ष, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद्, पदेन ;

(ड) कुलाध्यक्ष द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले तीन व्यक्ति, जिनमें से कम से कम एक महिला होगी और एक नगरीय और प्रादेशिक योजना से होगा जिनके पास वास्तुकला या भू-दृश्य वास्तुकला या नगरीय डिजाइन की बाबत विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो, पदेन ;

(ढ) राज्य सरकार के, जहां विद्यालय अवस्थित हैं, तकनीकी शिक्षा से संबद्ध उस सरकार के मंत्रालयों या विभागों में से दो सचिव, पदेन ;

(ण) केन्द्रीय सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के

संबद्ध विभाग का वित्तीय सलाहकार, पदेन ; और

(त) तकनीकी शिक्षा का प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय या विभाग में का एक अधिकारी, जो भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से नीचे का न हो, पदेन, सदस्य-सचिव ।

(3) परिषद् का एक सचिवालय होगा, जिसमें परिनियमों द्वारा नियुक्त किए जाने वाले पदधारी होंगे ।

(4) परिषद्, अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के निर्वहन में परिषद् की सहायता करने के लिए योजना और वास्तुकला विद्यालय परिषद् की एक स्थायी समिति का गठन कर सकेगी ।

34. परिषद् के सदस्यों की पदावधि, उनके बीच रिक्तियां और उनको संदेय भत्ते – (1) इस धारा में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, परिषद् के किसी पदेन सदस्य से भिन्न सदस्य की पदावधि, अधिसूचना की तारीख से तीन वर्ष की होगी ।

(2) किसी पदेन सदस्य की पदावधि तब तक बनी रहेगी जब तक वह उस पद को, जिसके आधार पर वह ऐसा सदस्य है, धारण किए रहता है ।

(3) धारा 33 की उपधारा (2) के खंड (ख) के अधीन नामनिर्दिष्ट किसी सदस्य की पदावधि, जैसे ही वह उस सदन का, जिसने उसे निर्वाचित किया है, सदस्य नहीं रहता है, समाप्त हो जाएगी ।

(4) किसी आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए परिषद् के किसी नामनिर्दिष्ट या निर्वाचित सदस्य की पदावधि उस सदस्य के, जिसके स्थान पर उसे नियुक्त किया गया है, शेष कार्यकाल तक के लिए बनी रहेगी ।

(5) इस धारा में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, परिषद् का कोई पदावरोही सदस्य, जब तक कि केन्द्रीय सरकार द्वारा अन्यथा निदेश न दिया जाए, तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक कि कोई

अन्य व्यक्ति उसके स्थान पर सदस्य के रूप में नियुक्त नहीं कर दिया जाता है ।

(6) परिषद् के सदस्य, परिषद् या उसकी समितियों की बैठकों में भाग लेने के लिए ऐसे यात्रा और अन्य भत्तों के हकदार होंगे जो विहित किए जाएं ।

35. परिषद् के कृत्य – (1) परिषद् का यह साधारण कर्तव्य होगा कि वह सभी विद्यालयों के क्रियाकलापों का समन्वय करें ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, परिषद् निम्नलिखित का पालन करेगी, अर्थात् :–

(क) पाठ्यक्रमों की अवधि, विद्यालयों द्वारा प्रदान की जाने वाली डिग्रियों और अन्य शैक्षणिक उपाधियों, प्रवेश के मानकों और अन्य शैक्षणिक विषयों से संबंधित नीतिगत विषयों पर सलाह देना ;

(ख) केन्द्रीय सरकार को नए योजना और वास्तुकला विद्यालयों की स्थापना किए जाने संबंधी प्रस्तावों की सिफारिश करना ;

(ग) विद्यालयों के सामान्य हित के ऐसे विषयों पर, जो किसी विद्यालय द्वारा उसे निर्दिष्ट किए जाएं, विचार-विमर्श करना ;

(घ) कर्मचारियों के काडर, उनकी भर्ती की पद्धतियों और सेवा-शर्तों के, छात्रवृत्तियां और नि:शुल्क वृत्तियां संस्थित करने के, फीस के उद्ग्रहण तथा सामान्य हित के अन्य विषयों के संबंध में नीति अधिकथित करना ;

(ङ) प्रत्येक विद्यालय की विकास योजनाओं की परीक्षा करना और उनमें से उनका अनुमोदन करना जो आवश्यक समझी जाएं और ऐसी अनुमोदित योजनाओं की वित्तीय विवक्षाओं को भी मोटे तौर पर उपदर्शित करना ;

(च) इस अधिनियम के अधीन कुलाध्यक्ष द्वारा पालन किए जाने वाले किसी कृत्य की बाबत उसे सलाह, यदि ऐसी अपेक्षा की जाए, देना ; और

(छ) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करना जो केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे निर्दिष्ट किए जाएं :

परन्तु इस धारा की कोई बात, किसी विद्यालय के बोर्ड या सिनेट या अन्य प्राधिकारियों में निहित शक्तियों और कृत्यों को अल्पीकृत नहीं करेगी ।

36. परिषद् का अध्यक्ष – (1) परिषद् का अध्यक्ष, सामान्यतया, परिषद् के अधिवेशनों की अध्यक्षता करेगा : परन्तु उसकी अनुपस्थिति में, परिषद् का उपाध्यक्ष, परिषद् के अधिवेशनों की अध्यक्षता करेगा ।

(2) परिषद् के अध्यक्ष का यह कर्तव्य होगा कि वह यह सुनिश्चित करे कि परिषद् द्वारा किए गए विनिश्चयों को कार्यान्वित किया जाए ।

(3) अध्यक्ष ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करेगा, जो इस अधिनियम द्वारा उसे सौंपे जाएं ।

(4) परिषद् का प्रत्येक वर्ष में एक बार अधिवेशन होगा और अपने अधिवेशनों में वह ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण करेगी, जो विहित की जाए ।

37. इस अध्याय के विषयों की बाबत नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए, पूर्व प्रकाशन के पश्चात् अधिसूचना द्वारा, नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों की बाबत उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) धारा 26 की उपधारा (1) के अधीन भविष्य निधि और पेंशन निधि या बीमा स्कीम का उपबंध करने की रीति और शर्तें ;

(ख) धारा 34 की उपधारा (6) के अधीन परिषद् या उसकी समितियों के अधिवेशनों में भाग लेने हेतु सदस्यों के लिए यात्रा और अन्य भत्ते ;

(ग) धारा 36 की उपधारा (4) के अधीन परिषद् के अधिवेशनों में अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया ।

(3) इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

अध्याय 6

प्रकीर्ण

38. रिक्तियों आदि से कार्रवाइयों और कार्यवाहियों का अविधिमान्य न होना – इस अधिनियम या परिनियमों के अधीन स्थापित परिषद् अथवा किसी विद्यालय या बोर्ड या सिनेट या किसी अन्य निकाय की कोई कार्रवाई केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं होगी कि,–

(क) उसमें कोई रिक्ति है या उसके गठन में कोई त्रुटि है ; या

(ख) उसके सदस्य के रूप में कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के निर्वाचन, नामनिर्देशन या नियुक्ति में कोई त्रुटि है ; या

(ग) उसकी प्रक्रिया में ऐसी कोई अनियमितता है जो मामले के गुणागुण पर कोई प्रभाव नहीं डालती है ।

39. केन्द्रीय सरकार को उपलब्ध कराई जाने वाली विवरणियां और सूचना – प्रत्येक विद्यालय, केन्द्रीय सरकार को, अपनी नीतियों या क्रियाकलापों की बाबत ऐसी विवरणियां या अन्य सूचना देगा, जिसकी केन्द्रीय सरकार, संसद् में रिपोर्ट करने या नीति बनाने के प्रयोजन के लिए समय-समय पर अपेक्षा करे ।

40. कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों और जो उसे उस कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों :

परंतु ऐसा कोई आदेश, उस तारीख से, जिसको इस अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त होती है, दो वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

41. विद्यालय का, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अधीन लोक प्राधिकरण होना – प्रत्येक विद्यालय को, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (2005 का 22) के उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे मानो कि वह सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 2 के खंड (ज) में परिभाषित कोई लोक प्राधिकरण हो ।

42. संक्रमणकालीन उपबंध – इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी,–

(क) इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड उसी रूप में तब तक ऐसे कार्य करता रहेगा जब तक कि इस अधिनियम के अधीन उस विद्यालय के लिए एक नए बोर्ड का गठन नहीं कर दिया जाता है, किन्तु इस अधिनियम के अधीन नए बोर्ड के गठन पर, ऐसे गठन के पूर्व पद धारण करने वाले बोर्ड के सदस्य पद धारण करने से प्रविरत हो जाएंगे ;

(ख) इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व प्रत्येक विद्यालय के संबंध में गठित प्रत्येक विद्या परिषद् को तब तक इस अधिनियम के अधीन गठित सिनेट समझा जाएगा जब तक कि इस अधिनियम के अधीन उस विद्यालय के लिए सिनेट का गठन नहीं कर दिया जाता है, किन्तु इस अधिनियम के अधीन नए सिनेट के गठन पर ऐसे गठन के पूर्व पद धारण करने वाले विद्या परिषद् के

सदस्य पद धारण करने से प्रविरत हो जाएंगे ;

(ग) इस अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व प्रत्येक विद्यालय का शासक बोर्ड, वित्त समिति, विद्या परिषद्, कार्यकारी परिषद्, भवन और संकर्म समिति और ऐसी अन्य समितियां उस रूप में तब तक ऐसे कार्य करती रहेंगी जब तक इस अधिनियम के अधीन विद्यालय के लिए नए बोर्ड का गठन नहीं कर दिया जाता है, किन्तु इस अधिनियम के अधीन नए बोर्ड के गठन पर ऐसे गठन के पूर्व पद धारण करने वाले शासक बोर्ड, वित्त समिति, विद्या परिषद्, भवन और संकर्म समिति और ऐसी अन्य समितियों के सदस्य पद धारण करने से प्रविरत हो जाएंगे ;

(घ) ऐसे किसी छात्र को, जिसने शैक्षणिक वर्ष 2008-2009 में या उसके पश्चात् विद्यमान विद्यालय की कक्षाओं में प्रवेश लिया है या शैक्षणिक वर्ष 2011-2012 में या उसके पश्चात् पाठ्यक्रम पूरा किया है, धारा 7 की उपधारा (1) के खंड (ग) के प्रयोजन के लिए केवल तभी भोपाल और विजयवाड़ा स्थिति विद्यमान विद्यालयों के पाठ्यक्रमानुसार अध्ययन करने वाला समझा जाएगा यदि ऐसे छात्र को पहले से उसी पाठ्यक्रम के लिए डिग्री या डिप्लोमा प्रदान नहीं किया गया है ।

अनुसूची

[धारा 3 (ट) और धारा 4 देखिए]

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
क्रम सं.	राज्य का नाम	विद्यमान विद्यालय का नाम	अवस्थिति	इस अधिनियम के अधीन सम्मिलित विद्यालय का नाम
1.	दिल्ली	योजना और वास्तुकला विद्यालय, जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन एक रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है ।	नई दिल्ली	योजना और वास्तुकला विद्यालय, नई दिल्ली
2.	मध्य प्रदेश	योजना और वास्तुकला विद्यालय, जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन एक रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है ।	भोपाल	योजना और वास्तुकला विद्यालय, भोपाल
3.	आंध्र प्रदेश	योजना और वास्तुकला विद्यालय, जो सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन एक रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी है ।	विजयवाड़ा	योजना और वास्तुकला विद्यालय, विजयवाड़ा

———

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संविधान संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in